1998 से निरंतर प्रकाशित

ISSN 2581-446X

वर्ष-8, अंक-1, अगस्त-सितम्बर 2024, ₹50/-

RNI. No. MPHIN/2017/73838

कला समय

कला, संस्कृति, साहित्य एवं समसामयिक द्वैमासिक पत्रिका

स्वच्छता ही सेवा 2024
14 सितम्बर - 2 अक्टूबर 2024
स्वभाव स्वच्छता, संस्कार स्वच्छता

पाठकों के विश्वास और भरोसे के साथ 28 वें वर्ष की शुरुआत...

आयुष्य संस्कृति विशेषांक

संपादक : भँवरलाल श्रीवास

कला समय का संत कबीरदास विशेषांक लोकार्पित

कला समय का संत कबीरदास विशेषांक लोकार्पण प्रज्ञा प्रवाह के अखिल भारतीय संयोजक श्री जे. नंदकुमार जी, अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्व विद्यालय के कुलपति प्रो. खेमसिंह डेहरिया जी एवं दत्तोपंत ठेंगड़ी शोध संस्थान भोपाल के निदेशक डॉ. मुकेश कुमार मिश्रा जी और भँवरलाल श्रीवास संपादकः कला समय द्वारा इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मानव संग्राहलय भोपाल में किया गया।

माया देवी गुप्ता आर्ट गैलरी भोपाल के सभागार में कला समय पत्रिका को लोकार्पित श्री योगेश कुमार गुप्ता एवं श्री उमेश कुमार गुप्ता पूर्व प्रधान न्यायाधीश एवं साहित्यकार तथा डॉ. नारायण व्यास, वरिष्ठ पुरातत्व विद् और संपादक भँवरलाल श्रीवास सहित हॉबी ग्रुप के वरिष्ठ सदस्यों द्वारा किया गया।

RNI NO. MPHIN/2017/73838

1998 से निरंतर प्रकाशित

देश की सर्वश्रेष्ठ एक मात्र सांस्कृतिक पत्रिका

कला समय पत्रिका वेबसाइट पर उपलब्ध

www.kalasamaymagazine.com

ISSN 2581-446X

(पंजीयन पूर्व प्रकाशित अंक, वर्ष सम्मिलित)

(वर्ष : 20+08=28) पूर्णांक-130,

वर्ष-8, अंक-1, अगस्त-सितम्बर 2024, मूल्य : ₹50/-

माधवराव सप्रे समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान, भोपाल म.प्र. द्वारा 'रामेश्वर गुरु सम्मान' से पुरस्कृत
श्री भारतेन्दु समिति कोटा (राज.) द्वारा 'साहित्यश्री' सम्मान एवं
साहित्य मण्डल श्री नाथद्वारा (राज.) द्वारा 'सम्पादक रत्न' सम्मान से सम्मानित
म.प्र. हिन्दी साहित्य सम्मेलन भोपाल (म.प्र.) द्वारा उर्मिला तिवारी स्मृति 'सप्तपर्णी सम्मान' से पुरस्कृत
इन्टरनेशनल ध्रुवपद-धाम ट्रस्ट, जयपुर (राज.) द्वारा 'लाइफ टाइम अचीवमेंट' सम्मान

कला समय

कला, संस्कृति, साहित्य एवं समसामयिक द्वैमासिक पत्रिका

❊ पत्रिका नहीं, एक रचनात्मक अनुष्ठान ❊

संरक्षक
विजयदत्त श्रीधर
(पद्मश्री से विभूषित)
डॉ. महेन्द्र भानावत
श्यामसुंदर दुबे
कैलाशचन्द्र घनश्याम पाण्डेय
महेश श्रीवास्तव

परामर्श
लक्ष्मीनारायण पयोधि
डॉ. नारायण व्यास
प्रो. सज्जनलाल ब्रह्मभट्ट 'रसरंग'
प्रो. सुधा अग्रवाल

सांस्कृतिक प्रतिनिधि
चेतना श्रीवास

वेबसाइट प्रबंधन
मयंक अग्रवाल

कानूनी सलाहकार
जयंत कुमार मेढ़े (एडवोकेट)

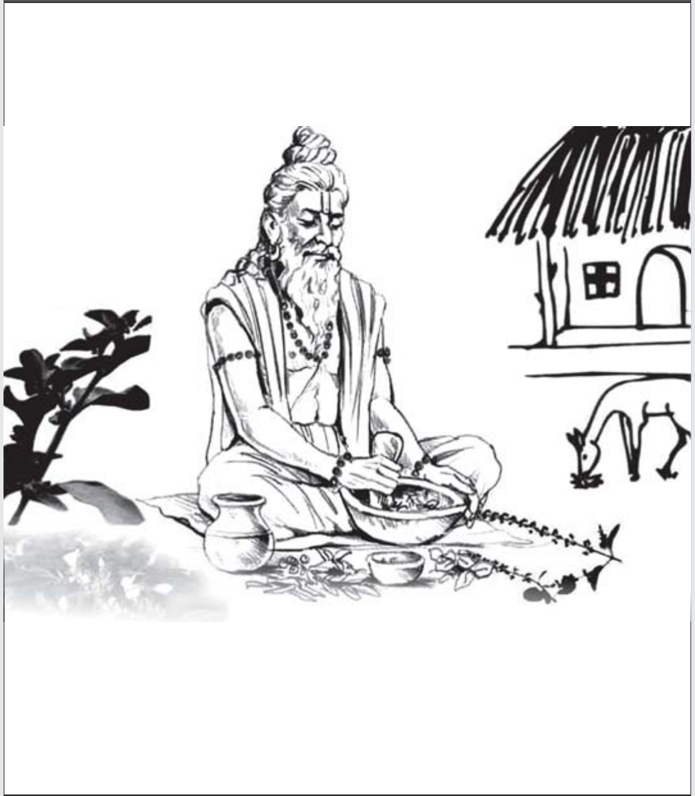

सौजन्य: डॉ. श्री कृष्ण 'जुगनू'

संपादक
भँवरलाल श्रीवास

सलाहकार संपादक
डॉ. मुकेश कुमार मिश्रा

सह संपादक
डॉ. मधु भट्ट तैलंग

उप संपादक
राहुल श्रीवास
सुन्दरलाल प्रजापति

नरिन्दर कौर
प्रबंध संपादक

संपादक मंडल
डॉ. बिनय षडंगी राजाराम
साहित्य

अरुण तिवारी
समसामयिक

हरीश श्रीवास
कला, संस्कृति

सदस्यता सहयोग राशि:

वार्षिक :	300 (व्यक्तिगत)	350 (संस्थागत)
द्वैवार्षिक :	600 (व्यक्तिगत)	700 (संस्थागत)
चार वर्ष :	1000 (व्यक्तिगत)	1200 (संस्थागत)
आजीवन :	10,000 (व्यक्तिगत)	12000 (संस्थागत)

(15 वर्ष के लिए)

(कृपया सदस्यता शुल्क- ऑनलाईन/ड्राफ्ट/मनीआर्डर द्वारा 'कला समय' के नाम पर उक्त पते पर भेजें)

विशेष : 'कला समय' की प्रतियाँ साधारण डाक/रजिस्टर्ड बुक-पोस्ट से भेजी जाती हैं यदि कोई महानुभाव रजिस्टर्ड पोस्ट से पत्रिका मंगवाना चाहते हैं तो कृपया वार्षिक डाक खर्च 150/- अतिरिक्त भेजने का कष्ट करें।

कार्यालय सम्पर्क :

संपादकीय एवं सदस्यता सहयोग

जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर,
अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)-462016
फोन : 0755-2562294, मो.- 94256 78058
ई-मेल : kalasamaymagazine@gmail.com
bhanwarlalshrivas@gmail.com
वेबसाइट : **www.kalasamaymagazine.com**

ऑनलाइन सदस्यता सहयोग सुविधा :

'कला समय' का बैंक खाता विवरण

पंजाब नैशनल बैंक की शाखा अरेरा कॉलोनी भोपाल, म.प्र. **(IFSC : PUNB0093210)** के नाम देय, खाता संख्या **A/No. 09321011000775** में ऑनलाइन राशि जमा कराने के बाद रसीद की फोटोकॉपी अपने पूर्ण पते के साथ हमें भेज दें।

कला समय पत्रिका में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं, यह जरूरी नहीं कि संपादक, प्रकाशक, मुद्रक उनसे सहमत हों। पत्रिका से सम्बन्धित समस्त विवाद, भोपाल न्यायालय के अधीन ही रहेंगे।

सम्पादन, संचालन, प्रबंधन एवं प्रकाशन- अवैतनिक/अव्यवसायिक

विशेष नोट : © सर्वाधिकार सुरक्षित 'कला समय' प्रबंधन यह स्पष्ट करना आवश्यक समझता है कि 'कला समय' में प्रवेशांक फरवरी-मार्च 1998 से लेकर अब तक प्रकाशित होने वाली समस्त सामग्री या सामग्री के अंश के पुनर्प्रकाशन तथा पुनरुत्पादन के सर्वाधिकार कॉपीराइट अधिनियम के अंतर्गत 'कला समय' के पास सुरक्षित हैं। अत: कोई भी व्यक्ति या संस्था 'कला समय' की इस सामग्री या इस सामग्री के अंश का उपयोग प्रबंधन की पूर्वानुमति के बिना न करें।

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वत्वाधिकारी भँवरलाल श्रीवास द्वारा गणेश ग्राफिक्स, 26 बी, देशबन्धु भवन, प्रेस कॉम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल, म.प्र. से मुद्रित एवं जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कालोनी, भोपाल (म.प्र.)- 462016 से प्रकाशित। संपादक - **भँवरलाल श्रीवास**

आयुष्य संस्कृति विशेषांक के प्रमुख विद्वान हस्ताक्षर...

डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'

श्यामसुंदर दुबे

इन्दर सिंह परमार

मुरलीधर चांदनीवाला

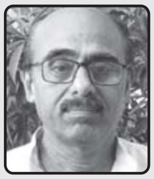
डॉ.सतीश चतुर्वेदी शाकुंतल

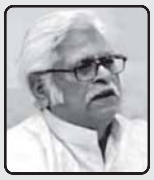
कैलाशचन्द्र घनश्याम पाण्डेय

डॉ. सुमन चौरे

डॉ. शोभा सिंह

डॉ. राजीव सक्सेना

डॉ. प्रिया सूफी

शैरिल शर्मा

डॉ. खुर्शीद बानो टाक

वैद्य शोभालाल औदिच्य

रमेश जैन

डॉ. इस्माइल टाक

प्रो. टीकमणि पटवारी

डॉ रूपाली सारये

डॉ. घुंघरू परमार

डॉ. भंवरलाल शर्मा

कुमार अरोज्योति

बृजेश मिश्रा

इस विशेषांक के चित्रकार

ओम प्रकाश सोनी

उदयपुर निवासी वरिष्ठ चित्रकार जिन्होंने इतिहास को सहजते इनकी तूलिका ने अभी तक 10 हजार से ज्यादा पेंटिंग्स बनाई है।

इस बार

- **संपादकीय**
  मानव धर्म : स्वयं भी जीओ और दूसरे को भी जीने दो 05
- **समय की धरोहर....**
  आयु : ज्ञान, विश्वास और साधना/ डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' 08
- **अद्वैत-विमर्श**
  शंकर ! तुम्हें प्रणाम हमारे/ प्रो. महेश दुबे 10
- **आलेख**
  आयुष्मान भव, भाग 1/ डॉ.सतीश चतुर्वेदी शाकुंतल 18
  योग विद्या एवं प्राकृतिक चिकित्सा सार/ डॉ. इस्माइल टाक 22
  आँख में अंजन, दाँत में मंजन/ डॉ. सुमन चौरे 26
  महर्षि चरक के सिद्धांत आज भी हैं प्रासंगिक/ इन्दर सिंह परमार 28
  लोक का आयुर्विज्ञान/ श्यामसुंदर दुबे 31
  आयुर्वेद : हमारी आस्था और विश्वास/ वैद्य कुमार अरोज्योति 33
  सदृश विधान: होमियोपैथी/ डॉ. राजीव सक्सेना 34
  आहार और आयु का अंतर्संबंध/ बृजेश मिश्रा 35
  बहुत प्रभावी है आयुर्वेदिक न्यूरो थैरेपी/ डॉ. भंवरलाल शर्मा 38
  वैदिक सूक्त और औषध प्रयोग/ मुरलीधर चांदनीवाला 39
  जीवन की गुणवत्ता सुधारती हैं जड़ी बूटियां/ वैद्य शोभालाल औदिच्य 41
  पान के औषधीय गुण/ डॉ. विद्यानाथ झा एवं डॉ. सुशील कुमार 43
  नाभि : प्रकृति का मानव को एक अनुपम उपहार/ रमेश जैन 45
  ऊर्जा का स्रोत है देसी गाय का दही/ डॉ. खुर्शीद बानो टाक 46
  आंगन आंगन औषधि, रसोई औषधालय/ डॉ. प्रिया सूफी 47
  निरोगी बनाते हैं, तांबे के बर्तन/ मनोज कुमार ताम्रकार 50
- **संस्कृति पर्व- 7 की झलकियाँ 51**
- **आलेख**
  स्वास्थ्य साधना का पहला सोपान अपना घर/डॉ. शोभा सिंह 55
  हमारे संस्कार में है आयु चिन्तन /प्रो. टीकमणि पटवारी 57
  रसोई में उपलब्ध स्वाद और स्वास्थ्य/ डॉ रूपाली सारये 59
  'आयुर्वेद में शास्त्रीय संगीत के उपचारिक प्रयोग: एक विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण'/ शैरिल शर्मा 61
  संतुलित जीवन शैली सिखाता है आयुर्वेद /डॉ. घुंघरू परमार 62
  संगीत-चिकित्सा/डॉ. राजेन्द्र कृष्ण अग्रवाल 'रजक' 65
  भारतीय संगीत और चिकित्सा/डॉ.लक्ष्मीनारायण गर्ग 67
  चिकित्सा की अन्य प्रणालियाँ/ डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग 69
  ओंकार ध्वनि का महत्त्व/ डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग 73
  स्वास्थ्य संरक्षण हेतु दिनचर्या 75
  स्वस्थ जीवन के उपाय 78
  पंचगव्य का महत्व 79
  गनेड़ी, गनेड़ीवाला और गरुड़ झेप/ कैलाशचन्द्र घनश्याम पाण्डेय 80
- **पुस्तक समीक्षा**
  एक उम्मीद है दिये की तरह/प्रो. ऋतु जौहरी 82
- **पुण्य - स्मरण**
  ज्योतिवाहक और स्तम्भ: स्वर्गीय उस्ताद .../ मुकेश कुंदन थॉमस 85
- **स्मृति शेष**
  अफसोस कि यह सूचना उनके इस पार्थिव संसार .../रीना सोपम 87
  आचार्यत्व की गरिमा से दीप्त पं दुर्गाचरण शुक्ल जी/ प्रोफेसर सरोज गुप्ता 90
  डूब गया संगीत का एक और नक्षत्र/डॉ. राजेन्द्र कृष्ण अग्रवाल 'रजक' 91
- **आलेख**
  डायरी में दर्ज प्रौढ़ उम्र की स्मृतियां/डॉ. महेन्द्र भानावत 93
- **कविता**
  बांग्लादेश में नरसंहार/महेश श्रीवास्तव 94
- **आयोजन, एकात्म संवाद, समवेत, प्रतिक्रिया 95-102**

शब्द संयोजन एवं आकल्पन - गणेश ग्राफिक्स, भोपाल, 9981984888
मुख्य एवं अंतिम आवरण - ओम प्रकाश सोनी के सौजन्य से
छायाचित्र -मनीष सराठे, सुनील सेन, गूगल से साभार
सहयोग- धन सिंह, लता श्रीवास | **रेखांकन** : डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' के सौजन्य से
आवरण सज्जा - मनोज माकोड़े, गणेश ग्राफिक्स

संपादकीय

मानव धर्मः स्वयं भी जीओ और दूसरे को भी जीने दो

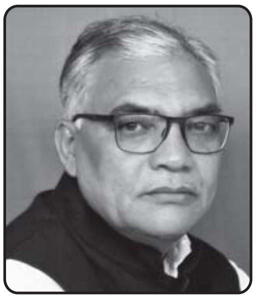

अष्टांग हृदय संहिता : आयुर्वेद के महान ग्रंथ की पांडुलिपि जो एशियाटिक सोसाइटी, कोलकाता में संग्रहित है।

ॐ सर्वे भवन्तु सुखिनः
सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु
मा कश्चित् दुःख भाग्यवेत्।।
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

सभी सुखी हों सभी स्वस्थ हों। सभी शुभ को पहचानें कोई दुःखी नहीं हों।

संकल्पः ''मैं स्वयं को एक स्वस्थ शांतिप्रिय, आनन्दपूर्ण एवं प्रेमपूर्ण मानव बनाने का संकल्प लेता हूँ। अपने प्रत्येक कार्य से मैं अपने चारों और सुख समृद्धि एवं शांतिमय स्नेहपूर्ण वातावरण बनाने का प्रयत्न करूंगा। मैं अहम एवं अज्ञान केन्द्रित जीवन के स्थान पर योगमय व विवेकपूर्ण जीवन जीते हुए विश्व बंधुत्व एवं एकत्व के भाव के साथ पूरे विश्व को स्वयं में समाहित करने का पूर्ण पुरूषार्थ करूंगा। मैं वसुधैव कुटुम्बकम् के सह अस्तित्व के सिद्धात के प्रति पूर्ण आस्था रखते हुए सबके प्रति कृतज्ञ भाव से आत्ममत व्यवहार व आचरण करूंगा। मैं यहाँ उपस्थित हर व्यक्ति से एकात्म होने का संकल्प लेता हूँ।''

आयुर्हिताहितं व्याघेर्निदानं शमनं तथा।
विद्यते यत्र विद्धद्धिः स आयुर्वेद उच्चते।।

जिस शास्त्र में आयु अर्थात अवस्था के लिए हितकारक और अहितकारक पदार्थ का उल्लेख हो और रोगों के निदान अर्थात उत्पन्न होने का प्रधान कारण और उनकी शांति का उपयोग अर्थात चिकित्सा का वर्णन किया गया हो, विद्वान उसे आयुर्वेद कहते है।

पुरूष जिस शास्त्र से आयुष्य के विषय में ज्ञान प्राप्त करता है (फलस्वरूप आयु की वृद्धि होती है) मुनिवरों ने उसे आयुर्वेद कहा है-

अनेन पुरूषों यस्मादायुर्विन्दति वेत्ति च।
तस्मान्मुनिवैरेष आयुर्वेद इति स्मृतः।। (चरक)

स्वस्थ शब्द 'स्व' और 'स्थ' इन दो पदों से बना है। जिसका व्युत्पति परक अर्थ होता है- अपने में स्थित होना, सम स्थिति में रहना। चिकित्सा शास्त्र के प्रख्यात प्रणेता श्री चरक ने स्वास्थ्य के लक्षण वर्णन करते हुए- ''**प्रसन्नात्मेन्द्रियमनः स्वस्थ इत्याभिधीयते।**'' कहकर अन्यान्य बातों साथ आत्मा और मन की प्रसन्नता-निर्मलता को भी स्वास्थ्य में महत्वपूर्ण स्थान दिया है।

आहत नाद और अनाहत नाद में अदभुत रोग निरोधक शक्ति है। दोनों ही मन को एकाग्र करते हैं जिससे रोगाणुओं का नाश होता है। आचार्य शाड़्र्गदेव के अनुसार संगीत से समस्त देवताओं की उपासना हो जाती है अतः! वह लोक रंजक के साथ भवभंजक भी है। अर्थात वह भोग और मोक्ष दोनों का प्रयाता है। आयुर्वेद के आचार्य चरक का कथन है कि संतुलित आहार विहार रहने पर कोई रोग उत्पन्न नहीं होता।

अतः मानसिक निर्मलता से बढ़कर न तो कोई शक्ति प्रदायिनी दवा ही है और न रोगविनाशक अमोध ओषधि है। आयुर्वेद ने अधर्म को पर्यावरण-प्रदूषण का मूल कारण माना है। अधर्म पर्यावरण को दो प्रकार से प्रभावित करता है, प्रत्यक्षरूप में एवं परोक्षरूप में प्रत्येक व्यक्ति का धार्मिक आचरण तीन प्रकार से

विभाजित किया जा सकता है- स्वयं के प्रति धर्म, समाज के प्रति धर्म एवं प्रकृति के प्रति धर्म। स्वयं का शारीरिक एवं आध्यात्मिक संरक्षण एवं विवास स्वयं के प्रति धर्म है। समाजिक व्यवस्था में अवरोध उत्पन्न न करना एवं समाज के कल्याण का उपाय करना समाज के प्रति धर्म है। प्रकृति के नियमों का पालन, उसके नियमों में अवरोध उत्पन्न न करना एवं उसकी श्रेष्ठता के लिए उपाय करना प्रकृति के प्रति धर्म है। अत: धर्म के तीनों घटकों के पालन में विसंगति को अधर्म कहा गया है। उपर्युक्त प्रथम एवं द्वितीय प्रकार का अधर्म पर्यावरण के परोक्ष रूप में प्रभावित करता है, जबकि प्रकृति के प्रति अधर्म प्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण को प्रभावित करता है। धर्म-पालन की कमी के कारण पंचमहाभूतों के गुणों में कमी आती है, जिसके परिणाम स्वरूप पर्यावरण आसन्तुलन एवं विचार उत्पन्न होता है। जैसे-

पृथ्वी: भूमि, प्रदूषण, प्रभाव, औषधियों एवं खाद्यान्न का हीन गुणयुन्त उत्पन्न होना भूकंप, भूमिस्खलन आदि आपदाएं।

जल: जल-प्रदूषण-प्रभाव-वनस्पति एवं प्राणि-स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव, जल के प्रवाह सम्बन्धी उपद्रव-बाढ़ अकाल आदि।

तेज (अग्नि): प्रकाश/ऊर्जा-प्रदूषण प्रभाव सूर्य प्रकाश की अस्वाभविकता के कारण वनस्पति संरक्षण में बाधों एवं विकारजनक प्रभावों की उत्पति। प्राणियों में ऊर्जा (उत्साह) की कमी।

वायु: वायु प्रदूषण, प्रभाव, वनस्पति एवं प्राणि स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव।

आकाश: ध्वनि-प्रदूषण-प्रभाव-वनस्पति एवं प्राणि स्वास्थ्य पर शारीरिक एवं मानसिक प्रभाव।

इस प्रकार से उत्पन्न पर्यावरण के घटकों की विकृति के कारण ऋृतुओं के निश्चित क्रम में बाधा उत्पन्न होती है एवं ऋृतुओं के स्वाभाविक गुणों में अत्यधिक वृद्धि या ह्रासरूपी परिवर्तन देखने को मिलता है। वर्तमान में प्रकृति के नियमों की अवमानना हर प्रकार से की जा रही है। काल के अवमानना के कारण ऋृतु के अनुसार प्रकृति द्वारा उत्पन्न खाद्य-पदार्थ स्वस्थ्य के लिये हितकर होता है। इसकी अनदेखी करने विपरीत ऋृतु में उसका उत्पादन एवं उपयोग किया जा रहा है। इसी प्रकार दिनचर्या में काल की अवमानना के कई उदाहरण दैनिक जीवन में हमें देखने को मिलते हैं। शरीर के स्वभाव के अनुसार शयन-जागरण, ग्रहण-निस्कासन आदि का पालन नहीं किया जा रहा है। इस प्रकार प्रकृति के सवाभाविक कार्यक्रम में हम बाधा उत्पन्न कर रहे हैं इसी प्रकार शरीर के आहार-विहार आदि के स्वाभाविक काल की उपेक्षा से उचित दिनचर्या के ज्ञान का भी ह्रास होता जा रहा है। इस प्रकार मानव स्वास्थ्य प्रभावित हो रहा है और अनेक प्रकार के रोगों की दिनों दिन उत्पत्ति एवं वृद्धि हो रही हैं, जिनके कारणों के बारे में जानना चिकित्सकों के लिए अत्यन्त दुष्कर होता जा रहा है और इस प्रकार की स्वास्थ्य समस्याओं का हल खोजना भी कठिन होता जा रहा है।

प्राचीन काल में रोगोत्पत्ति एवं पर्यावरण प्रदूषण का अधर्म के अतिरिक्त कोई कारण न था; क्योंकि उस समय प्रकृति को दूषित करने वाले अन्य भौतिक साधन उपलब्ध नहीं थे एवं लोगों में प्रकृति के नियमों के प्रति आदर था वर्तमान में दोनों ही कारणों में विकृति आ गयी है, यही कारण है कि वायु, जल, देश एवं काल का जनपदोध्वंसनीय स्वरूप उपस्थित होता जा रहा है। आयुर्वेदीय मत से सुखायु (सुखपूर्वक जीवन यापन) एवं हितायु (प्राणियों के हित में जीवनयापन) अर्थात ''स्वय भी जीयो और दूसरे को भी जीने दो!'' आयुर्वेदीय सूत्र पालनीय है-

सुखार्था: सर्वभूतानी मता: सर्वा: प्रवृत्तय:।
सुखं च न विना धर्मात्तस्माद्धर्मपरो भवेत्।।

अर्थात सभी प्राणी अपने जीवन में सुख प्राप्ति के उपायों में सदैव प्रवृत्त रहते हैं और वह सुख बिना

धर्म के प्राप्त नहीं होता। अतः हमें सदैव धर्मोचित आचरण में प्रवृत्त रहना चाहिए। आधुनिक युग का मानव प्रकृति से विमुख होता जा रहा है। उसके रहन सहन में जर्बदस्त कृत्रिमता प्रविष्ट हो चूकी हैं। आप्राकृतिक जीवन के दुष्परिणाम भी प्रकट हो रहे हैं। आज सर्वत्र बीमारी का ही साम्राज्य दिखाई दे रहा है। रोगों की मात्रा में और उसकी तीव्रता में वृद्धि हुई हैं यही नहीं, वरन नए-नए रोग भी दिखाई देने लगे हैं बीमारी से छुटकारा पाने के लिए लोग दवाइयों के पीछे लाखों रूपए खर्चा करते हैं। फिर भी उन्हें कहीं आरोग्य के दर्शन नहीं होते। इसका प्रमुख कारण यह है कि हम सर्वशक्तिमान प्रकृति की शरण में जाने का कभी विचार नहीं करते, प्रकृति निर्मित निर्दोष वनस्पतियों की उपेक्षा करते हैं। इसी के साथ मानव जीवन में शुद्ध अन्नसेवन का बड़ा महत्व है। उत्तम निरागी और स्वस्थ जीन के लिए शुद्ध आहार की जरूरत है। अतः अपने जीवन से संकल्प पूर्वक मांसाहार को हटाकर शाकाहार और फलाहार को अपना आहार बनायें जीवन में यह ध्यान रखें कि सभी जीवों में आत्मा एक है। जीवन में सात्विकता को स्थान दें जीवों की पीड़ा को समझे ओर हमेशा परमात्मा में विश्वास रखते हुए सब जीवों पर दया का भाव रखें। आयुर्वेद शास्वज्ञ तथा सभी भारतीय धन्वन्तरि को आरोग्य प्रदाता तथा रोग विनाशक देवता मानते है। जीवन का आनन्द स्वेच्छा के अनुकूल जीने में नहीं वरन ईश्वर और धर्म के मार्ग दर्शन में अपने को चलाने में है।

कला समय का यह आयुष्य संस्कृति विशेषांक जनहित में छोटा सा प्रयास है। आशा है सुभी पाठकों को लाभान्वित करेगा। इस महत्वपूर्ण विशेषांक के लेखकों विषय के विशेषज्ञों, विद्वानों, आयुर्वेदाचार्य और डॉ. श्री कृष्ण 'जुगनू' जी के हम अत्यन्त आभारी है जिनके प्रयासों से यह जनहित संग्रहणीय विशेषांक आप तक पँहुचानें का छोटा सा प्रयास सफल हुआ है। हम पुनः सभी विद्वानों के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करते हैं। हम यह स्मरण कराना चहाते है कि उदयपुर निवासी वरिष्ठ चित्रकार जिन्होंने इतिहास को सहजते हुए अपने ब्रश से अभी तक 10 हजार से ज्यादा पेंटिंग्स बनाई है। एसे वरिष्ठ चित्रकार ने कला समय के इस आयुष्य संस्कृति विशेषांक के लिए विशेष रूप से भगवान धन्वंतरी के चित्र भेजे हैं हम श्री ओम प्रकाश सोनी जी जो वरिष्ठ चित्रकार है हम उनके ह्रदय से आभारी है। पत्रिका के अपनी सीमाओं को ध्यान में रखकर यदि कोई आलेख छूटे हैं तो आगे के अंकों में हम ससम्मान प्रकाशित करेगें। तथा 17 सिंतबर को प्रतिवर्ष विश्व सुरक्षा दिवस मनाया जाता है। इस दिवस का उद्देश्य यह है कि विश्व भर में स्वास्थय के प्रति जागरूकता फैलाना उद्देश्य है। तथा रोगियों और उनके परिवारों को स्वास्थय देख भाल में सुरक्षा के महत्व के बारे में जागरूक करना है। म.प्र. सरकार ने इस संबंध में स्वच्छता संवाद स्वच्छता रैली, मोहल्ला सभा, स्वच्छ वार्ड तथा एक पेड़ माँ के नाम पर पौधरोपण तथा स्वच्छ पर्यावरण, साफ-सफई के प्रति समाज को जागरूक करना तथा प्रधान मंत्री भारतीय जन औषधि केन्द्रों का 50 चिक्तिसालयों का शुभारंभ शुभ संकेत है।

ॐ संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते।।

सब समरस होकर चलें, सब स्वर हों एक समान। बुद्धि, बने धीर यों जैसी थी प्रारंभ चरण में। झलक उठे दिव्यता हर पावन प्रयास में।

आप सभी को स्वतन्त्रता दिवस, रक्षाबंधन पर्व और महर्षि चरक जयंती सहित विश्वरोगी सुरक्षा दिवस की हार्दिक शुभकामनाएं।

।।शुभमस्तु।।

- भँवरलाल श्रीवास

आयु : ज्ञान, विश्वास और साधना

डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'

आयु के संबंध में जब से मानव ने विचार किया, उसने जीवन में सांस - सांस का महत्व समझना शुरू किया। उसने कोई जीव कितना जीवन जी सकता है और कैसे? इस पर भी चिंतन शुरू किया। सभ्यता के उष: काल में अनेक प्रकार के विचार उठते रहे होंगे और यह सब भी कोई एकाएक नहीं हुआ होगा, यह तय है। ऐसा होने में भी सदियां बीत गई होंगी। इसके लिए साधन, उपकरण का तो विचार ही नहीं रहा होगा लेकिन यह अवश्य समझ में आ गया होगा कि क्या खाया जाए और क्या नहीं! अन्य जीवों और प्राणियों की गतिविधियों से भी मानव ने बहुत कुछ सीखा होगा।

यह सीख आयु को लेकर मनुष्य ही नहीं, उसके सहायक, वाहनोपयोगी प्राणियों के विषय में भी संवेदनाओं को बढ़ाने वाली सिद्ध हुई होगी। व्यक्ति ने अपने आसपास की प्रकृति और उसके उत्पादों के प्रयोग से पहले यह कहना आवश्यक समझा होगा कि वे हमारे लिए गुणकारी हो। ऋषियों के वचन के रूप में जो मंत्र, श्लोक आदि हमें मिलते हैं, वे एक प्रकार से प्रेरक निर्देश हैं कि व्यक्ति में मन में रक्षण और संरक्षण का भाव चैतन्य रहने लगा था और उसका सीधा संबंध आयु से था। कौमार, अश्विनीकुमार, भेल, अत्रि, च्यवन, पुनर्वसु के सूत्र और आख्यानों के मूल में आयुपरक चेतावनियां हैं। वे प्रकृति की साधना और प्रकृति से प्राप्तव्य को प्रकट करते हैं। यह कथन कितना सुंदर है कि बिल्व वृक्ष से संसार की उत्पत्ति हुई है। इसका सीधा भाव है कि वह पितृतुल्य है और रक्षणीय है। चरक जिस तरह संगतियां आहूत कर आयु को बनाए रखने के लिए संवाद करते हैं, वह आयुर्वेद का आधार है। घरों में दादी - नानी आदि कहानियों से, उचित आहार - विहार से, व्रत और पूजन अनुष्ठान से क्या सिखाती है! आयु विषयक साधना हमारी संस्कृति से अभिन्न है। हमारे सारे आचार - विचार प्रकृति के साथ गलबहियां करते हैं।

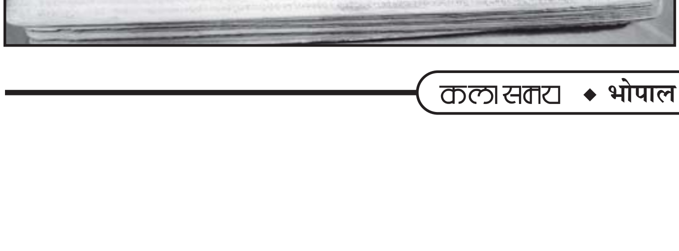

आयु विषयक चेतना ही सचेत करती है कि यदि एक औषधीय पेड़ पौधा भी हमारे आसपास हो तो हम आधि - व्याधि से बचे रह सकते हैं। आयुष्य का पूरा लाभ उठा सकते हैं। हम आत्मिक प्रकृति को पहचानें और बाहरी प्रकृति के साथ संतुलन रखने का प्रयास करें। प्रकृति के पास हर विकार के विनाश का उत्पाद है। ऋतु और प्रकृति पर दृष्टि रखें और उसके साथ बेहतर संतुलन हमारी बेहतरी का कारक हो सकता है।

वर्ष में जितने दिन होते हैं, उनसे अधिक हमारे पर्व और उत्सव हैं। यह सच है और उनमें भी लगभग दो सौ पर्व तो अकेले प्रकृति और पेड़ पौधों से सीधे सीधे जुड़े हैं। विज्ञान की मान्यताओं में यह सब परिवेश रूपी प्रयोगशाला में किसी प्रयोग से अलग नहीं। बरगद, पीपल, आंवला, शमी, नीम, बहेड़ा ही क्या, गुल्म और झाड़ियों से कितने अनुष्ठान जुड़े हैं! वैशाखी पूर्णिमा हम पीपल पूजन पर्व के रूप में मनाते हैं और ज्येष्ठ पूर्णिमा बरगद की पूजा के साथ। नारियली पूर्णिमा, ताड़ पूर्णिमा आदि भी होती हैं। अधिकांश पर्व पेड़ों और उनके फलने फूलने के साथ जुड़े हैं। पेड़ों के पूजने के पीछे आरंभिक धारणा यह थी कि वे अच्छे फले और फूले ताकि कृषि की अच्छी पैदावार हो। महर्षि बादरायण ने इस पर पर्याप्त विचार किया था और फल कुसुम के अनुसार धान्योत्पादन का पूर्वानुमान लगाने का मत दिया था। बरगद के फलने पर जौ धान्य की अच्छी पैदावार होने और पीपल के फलने पर सभी प्रकार के धान्यों की अधिक पैदावार का संकेत मिलता था। मैंने बृहस्पति, वराह संहिता जैसे ग्रंथों और वृक्षायुर्वेद के लगभग एक दर्जन पाठ तैयार करते हुए यह पाया कि कृषि के विकास की कामना के साथ नारियों ने अपने सुख और सौभाग्य के चिरायु होने का भी अभिमत रखा। पर्व और व्रत के मूल में सदियों के अनुभव संचित होते हैं। क्यों वट सावित्री के प्रति विश्वास पनपा हुआ है! वट पौर्णिमा अथवा वट सावित्री की पूर्णिमा अनेक ज्ञान पक्षों को लिए है: बड़ी पूनम, बड़ा पेड़ का मत तो सामान्य है ही, वृक्ष कुल में वट या बड़ का वृक्ष की उम्र हज़ारों वर्ष की होती है। इसकी जड़ जटाएं फैल कर इसे घना बनाती रहती हैं। पर्यावरण के लिए यह श्रेष्ठ वृक्ष है। इसमें सैकडों प्रजाति के पंछी घोंसला बना कर रहते हैं। इसके नीचे संत पुरुष आश्रम बना कर रहते हैं। बारहों मास हरा रहने वाला यह वृक्ष माटी का भी संरक्षण करता है। उस दिन भारतीय नारियाँ अपने सुहाग अर्थात पति की लंबी उम्र के लिए वृत रख कर इस पवित्र वृक्ष के फेरे लगाकर पूजा करती हैं। अखण्ड सौभाग्यवती होने का आशीष मांगती है। इसे अक्षय वट भी कहते हैं। इसमें देवताओं का वास भी माना जाता है। ज्येष्ठ पूर्णिमा के दिन सावित्री अपने पति सत्यवान को यमराज से वापस लेकर आई थी। बड़ी आयु मांगी।

ये सब सुदीर्घ अनुभव के सूत्र हैं।

मुझे याद आता है कि पशुओं की भी लंबी आयु मांगी जाती है। राखी पर उनको रक्षा सूत्र बंधा जाता है। कार्तिक पड़वा पर उनके स्वास्थ्य और पूर्णायु के लिए सिरोल, मार्गपाली बांधी जाती है। महर्षि पराशर, व्यास आदि को यह मान्य है। राजस्थान में कई पशुमेले लगते हैं। जहां पशु मेले लगते हैं वहां देशी दवाइयां भी खूब बिकती हैं। हम शहर वाले क्या अब भी देशी दवाइयों को जानते हैं? ये ब्रांड वाली नहीं होती! नाम से ही जानी जाती हैं! पशुओं की चिकित्सा के लिए अनेक शास्त्र हैं। सबसे बड़ा शास्त्र 'हस्त्यायुर्वेद' है और छोटा शास्त्र 'शालिहोत्र' और 'अश्व चिकित्सा' है। गायों के लिए गवायुर्वेद और ऊंटों के लिए उष्ट्रायुर्वेद ! जिन जिन शास्त्रों में रोगी लोगों और पशुओं के उपचार के लिए औषधियों के नाम, प्रमाण आदि दिए गए हैं, वहां औषधि निघंटू भी दिए गए हैं ! बृहत्संहिता, मणिमेखला के गंधयुक्ति जैसे अध्याय रोचक हैं। सोमेश्वर ने मानसोल्लास में गज और अश्व चिकित्सा के विवरण में कहा गया है कि इनकी आयुवर्धक दवाइयां बाजार में मिलेंगी! जंगल और पंसारी उनके मूल केंद्र होते हैं, आज जैसे मेडिकल स्टोर का विचार कहां था!

हमारे यहां आयु और उसकी चेतना का विचार घर के आंगन से शुरू होता है जहां तुलसी, मरुवा, अजमोद, दुग्धी आदि रक्षक होते हैं तो रसोईघर आहार का कौर - कौर और सब्जी का स्वाद और काढ़ा की चुस्की हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाती है।

ऋतु के अनुसार आहार बनाया और खाया जाता है। शरदकाल के संधानक और महिलाओं के प्रसव आदि काल के दौरान उपयोगी आहार विद्या को सिखाना पड़ता है?

एक उदाहरण याद आता है त्रिश्व नामक औषधीय मोदक का। ये त्रिकटु (सोंठ, मरीच, पिप्पली) सहित अश्वगन्धा का उपयोग कर बनाए (साधे) जाते हैं। कहना न होगा कि अश्वगन्धा (withania somnifera) एक ऐसी औषधि है जो हमारे शारीरिक व मानसिक दोनों ही रोगों में कारगर है। त्रिकटु चूर्ण पाचक, क्षुधावर्धक, कास-श्वास नाशक, कफनाशक, स्त्रोत शोधक गुण वाला है। ऐसे में ये लड्डू इन रोगों एवं ठंडे मौसम में मुफ़ीद हो जाते हैं:

संधियों के दर्द, चिन्ता, अनिद्रा गांठ, यक्ष्मा, श्वास-दमा, सफेद दाग, कटि दर्द, मासिक-स्त्राव विकार, हिचकी, जीर्ण यकृत रोग आदि। सौंठ, खोपरा, मूंग, मेथी, निर्गुंडी, मैदा लकड़ी आदि के मोदक भी संजीवनी है। कई घरों में तो च्यवनप्राश भी बना लिया जाता है। ऐसे में बाहर की ओर झांकने की जरूरत ही क्या है!

कई बार विचार आता है कि हमारे यहां लोकोपयोगी विज्ञान और अनुसंधान कार्यों के प्रति जन चेतना अनेक सदियों से रही है। जिन दिनों मिस्र, यूनान और ग्रीक में कार्य और कारणों पर विचार होने लगा था, भारत में वैशेषिक और न्याय जैसे दार्शनिक सूत्रों का निर्धारण हो चुका था। समाज यज्ञ को उसके क्रियात्मक स्वरूप से ज्यादा वैज्ञानिक रूप में देखता था। इसीलिए यज्ञ चित्ति, इष्टि, शिला, शुल्ब और चयन ही नहीं, द्रव्य और पदार्थ

जैसी धारणाएं सामने आईं और शतपथ, ऐतरेय, गोपथ सहित सूत्र संग्रहित किए गए। उन असाधारण विषयों की आध्यात्मिक नहीं, साधारण व्याख्याएं संसार के वैज्ञानिकों के लिए मार्गदर्शक हैं! कितने सारे वैज्ञानिकों ने अपने चिंतन के मूल में वेद और वेदांगों का आभार माना है। गणित तो भारत की देन है ही, रसायन और उसके लिए आचार्य नागार्जुन जैसे सिद्धों के कितने मत हमने अपनों के बीच रखे? उनके सूत्र कहां छुपे हैं? अणु और परमाणु की कितनी धारणाएं उजागर की? आकाश, वायु, पृथ्वी, जल और अग्नि के विषय में प्रारंभिक और सबसे अधिक ज्ञान भारत के पास रहा है! पंचीकरण और एकीकरण के विषय में हमने कितना कुछ बताया! जानकर ही आश्चर्य होता है।

खेती से बड़ा लोकोपयोग का क्षेत्र और क्या है! सस्यवेद और उससे संबद्ध कई ग्रंथ प्रायोगिक विषयों पर तैयार हुए। वृक्षविद्या पर बड़े अनुसंधान हुए। चाणक्य, पराशर, अगस्त्य, सुरपाल, शारंगधर, चक्रपाणि मिश्र, बसव, कानजित ने बहुत कुछ कहा। वृक्षायुर्वेद वनस्पति के अध्ययन का बड़ा क्षेत्र है। गज, अश्व और मृग पक्षियों पर कितना अध्ययन हुआ! ध्वनि, नाद, वाष्प, दाब आदि कितने भौतिक विषय हमारे पास रहे हैं। सुश्रुत संहिता में सबसे अधिक यंत्रों के नाम हैं।

आयुर्वेद का मानवता के हित में कितना बड़ा योगदान रहा है। स्वास्थ्य सुधारकर आयु को बढ़ाने वाला विज्ञान! चरक के बाद, विश्वकर्मा के नाम से कितने यंत्र, यान, उपकरण आदि तैयार हुए! भगवान पाणिनि ने कितने उद्योगों के शब्द चुन चुनकर उनका संस्कार किया! धातु शोधन कैसे किया? कैसे धातुओं की भस्म बनी! कैसे भस्म के गुण धर्म जाने गए! ईख के गुड़ तक कितने यंत्र उपयोगी हुए? तिल से तेल तक कितने उपकरणों को सामने लाया गया! रसोई उपकरणों का भी भांडागार होती है।

भविष्य में कुछ ऐसा हो कि हम पश्चिम का पीछा नहीं करें बल्कि पश्चिम हमारा दृष्टिकोण अंगीकार करे और सृष्टि की मानवता के लिए उपकारक कदम उठाए। संस्कृत और अन्य भारतीय भाषाओं में लिखे गए वैज्ञानिक ग्रंथ सामने लाने चाहिए, वे विद्या और उसकी विधियां अपनाई जानी चाहिए। आयुष्य के लिए भारत ने जो विचार भगवद गीता, सुश्रुत, चरक संहिता, अष्टांग हृदय, गरुड़ पुराण, राज मार्तंड आदि में दिए, वे संसार भर के लिए निरापद और कल्याणकारी हैं।

लेखक - वरिष्ठ साहित्यकार, भारत विद्याविद्
और संस्कृत के वैज्ञानिक ग्रंथो के खोजकर्ता है।
संपर्क : विश्राधरम्, 40 राजश्री कॉलोनी, विनायक नगर,
उदयपुर 313001 (राज.) मो. 9928072766

शंकर! तुम्हें प्रणाम हमारे

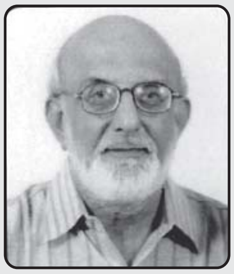

प्रो. महेश दुबे

यौवन बीत चुका है। पुराने दिनों की वापसी सम्भव नहीं। फिर भी मन में यह उम्मीद बनी रहती है कि वह यौवन-वैभव, वह भोग के आनंद का अवसर शायद लौट आए। यह तो ऐसा है जैसे किसी डाकू से लूटे हुए माल की वापसी की आस यह समझ कर करना कि यह धन उसे कर्ज दिया है। यह आस व्यर्थ है।

अग्रे वह्नि पृष्ठे भानु
रात्रौ चुबुकसमर्पित जानुः ।
करतलभिक्षस्तरुतलवास-
स्तदपि न मुंचत्याशा पाशः ।।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम् ।

सामने आग, पीछे सूर्य। बूढ़े से सर्दी सही नहीं जाती। वह पैर फैलाकर सो नहीं पाता। अपनी ठुड्डी को घुटनों से सटाकर बैठता है। हाथों से भिक्षा प्राप्त करता है और वृक्ष के नीचे रहता है- फिर भी आशा (वासना) का फंदा उसे नहीं छोड़ता।

यह श्लोक हस्तमालक का लिखा माना जाता है।

आगे अग्नि सूरज पीछे
रात्रि में ठंड से तन छीजे
भिक्षा केवल कर में लीजे
तरुतल निवास है फिर भी
आशा पास से नहि निस्तारणीय
भज गोविन्दम्, भवतारणीय।

– अनुवाद : प्रभा तिवारी

यह बाह्य आडम्बर में लिप्त एक ढोंगी साधु का चित्र है। ऐसे साधु बहुतायत में कुम्भ में दिखाई पड़ते हैं। कठोर बाहरी आडम्बरों के बावजूद इसके मन में आशाएँ हैं, इच्छाएँ हैं- जो दुःखों का कारण हैं। जितनी अधिक इच्छाएँ, उसी अनुपात में उतना अधिक दुःख। जागृत अवस्था में हमारे मन में ढेर सारी इच्छाएँ रहती हैं। ये इच्छाएँ स्वप्नावस्था में प्रक्षेपित होती हैं। परन्तु सुषुप्तावस्था में (Deep Sleep State) एक भी विचार नहीं रहता, कोई इच्छा नहीं, कोई लालसा नहीं, कोई आशा नहीं। इच्छाओं को सीमित करने का अर्थ है उपलब्ध विकल्पों को सीमित करना। विकल्पों को सीमित करने से जीवन में अनुशासन आता है। इस प्रकार मनुष्य वैराग्य की ओर बढ़ता है। वैराग्य का अर्थ सब कुछ छोड़ना नहीं है, हाँ त्याग, वैराग्य की पहली सीढ़ी अवश्य है।

जो आशाओं के पाश में बँधा है, उसे मुक्ति नहीं। इच्छाओं पर विजय प्राप्त करने से इस बंधन से मुक्ति मिलती है। जो हमारे पास नहीं है उसकी हम इच्छा करते हैं। यह सांसारिक स्तर पर हमारे दुःख का कारण है। अध्यात्म के स्तर पर जो अपने आप को नहीं जानता, जिसे आत्मज्ञान नहीं है, ऐसा व्यक्ति अपने आप में अभाव अनुभव करेगा। अभाव से मन में इच्छाएँ उत्पन्न होती है और फिर वह दुःखों में बँधता चला जाता है।

ज्ञान से इच्छाओं पर विजय प्राप्त की जा सकती है, इसलिए मानते हैं कि ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं मिलती।

बिना ज्ञानेन मुक्ति न भवति

अथवा – **ज्ञान बिना मोक्षो न सिद्धयति।**

जिसे ज्ञान हो गया वह विरागी हो गया।

भर्तृहरि ने अत्यन्त सुंदर शब्दों में वैराग्य की प्रशंसा की है-

भोगे रोगभयं कुलेच्युतिभयं वित्ते नृपालद्भयं,
माने दैन्यभयं बले रिपुभयं रूपे जराया भयम्।
शास्त्रे वादि भयं गुणे खलभयं काये कृतान्ताद्भयं,
सर्व वस्तु भयान्वितं भुवि नृणां वैराग्यमेवाभयम् ।।

भय भरा संसार यह
भोग है तो रोग का भय
ऊँचे कुल में जनमे तो
भय कुल नाम डुबोने का
धन लिया कमा कुछ ज्यादा
भय अब राजा का
चुप रहना अच्छा बहुत
हीनता का मगर भय इसमें
कहलाता कोई बाहुबली
पूछो शत्रु का भय उसे कितना

है कोई सुन्दर थोड़ा
भय सताये उसे बुढ़ापे का
कोई ज्ञानी कितना हो
वाद-विवाद से घबराए वह
गुणों का आगार हो तुम
भय तुम्हें दुष्टों का होगा
देह में मृत्यु का भय परम
पृथ्वी की सारी वस्तुएँ
भय की मारी
भय रहित निर्भय
वैराग्य है केवल।

कुरुते गंगासागर गमनं
व्रत परिपालनमथवा दानम्।
ज्ञानविहीनं सर्वमतेन
भजति न मुक्तिं जन्मशतेन ।।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम्।

कोई तीर्थों की यात्रा करता है, कोई गंगा स्नान करता है। कोई व्रत, उपवास, दान-पुण्य करता है। परन्तु ज्ञान के बिना ये सब निरर्थक है। ज्ञान विहीन प्राणी मोक्ष का अधिकारी नहीं बनता।

इस श्लोक में शंकर गृहस्थों की बुद्धिहीन तपस्या पर कटाक्ष करते हुए ज्ञान रहित तीर्थाटन, व्रत, दान-पुण्य की निस्सारता बताते हैं। इनके माध्यम से सौ जन्मों में भी मुक्ति सम्भव नहीं। जिसने ज्ञान प्राप्त कर लिया, वह मुक्त हो गया। मुक्ति का अर्थ होता है छूट जाना। किससे? जिससे बँधे थे। शंकर पहले कह चुके हैं कि इच्छाएँ बंधन का कारण हैं। सबकी इच्छाएँ अलग-अलग, सबके बंधन अलग-अलग पर एक बंधन उभयनिष्ठ है, सर्वनिष्ठ है वह बंधन है दु:ख का। जिसने दु:ख से सदैव के लिए छुटकारा पा लिया, वह मुक्त हो गया। यदि जीवन में ऐसा सुख आ जाए जो जाने वाला न हो तो समझो मुक्ति मिल गई। ऐसा सुख ज्ञान का है। इसीलिए कहा गया कि ज्ञान विहीन को मुक्ति नहीं।

भर्तृहरि लिखते हैं-

किं वेदैः स्मृतिभिः पुराणपठनैः शास्त्रैर्महाविस्तरैः
स्वर्गग्रामकुटीनिवासफलदैः कर्मक्रियाविभ्रमैः।
मुक्त्वैकं भवदुःखभाररचना विध्वंस कालानलं
स्वात्मानन्द पदप्रवेशकलनं शेषैर्वणिग्वृत्तिभिः ।।

पढ़ लिख लिये पोथी पुराण
क्या हुआ
वन में रह लिए कुटी बना
स्नान ध्यान होम हवन किये
क्या हुआ
ज्ञान एक है बस
मन के भीतर का आनंद
प्रलय की धधकती ज्वाला जैसा
काटे वह जग दु:ख के जाल सभी
बाकी सब बनियों का व्यापार।

इस श्लोक में जिन व्यक्तियों की चर्चा की गई है वे वो हैं जो आध्यात्मिकता के नाम पर धार्मिक क्रियाकलापों का यंत्रवत पालन कर रहे हैं। वे तीर्थयात्रा करते हैं, व्रत रखते हैं, दान करते हैं। तीर्थ स्थल हमारी सम्पूर्ण श्रद्धा के केन्द्र हैं। तीर्थयात्रा हमारी तपस्या करने की शक्ति को और सहन करने की हमारी क्षमता की वृद्धि करती है। व्रत हमारी त्याग वृत्ति को बढ़ाता है और दान शुभ तथा कल्याणकारी प्रभाव से प्लावित निस्पृहता उत्पन्न करता है। परन्तु जिसको ज्ञान नहीं है उसका तीर्थाटन, तीर्थाटन न होकर पर्यटन होता है, उसके व्रत में भी भोगवृत्ति आ जाती है और उसके दान में प्रशंसा और यश की कामना छिपी रहती है। फलस्वरूप ये सभी क्रियाएँ यंत्रवत होती है और पुण्यहीन हैं। इसलिए इनको करने से मोक्ष या मुक्ति नहीं मिलती। इसी कारण कहा गया है कि ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं।

सिद्ध तिल्लोपाद (10 वीं शताब्दी के वज्रयानी सिद्ध) ने भी ऐसा ही कुछ लिखा है-

तित्थ तपोवण म करहु सेवा।
देह सुचिहि ण स्सन्ति पावा।।
देव म पूजहु तित्य ण जावा।
देव पूजाहि ण मोक्ख पावा।।

न तीर्थ सेवन करो, न तपोवन को जाओ। तीर्थ स्नान से मोक्ष लाभ होने का नहीं।

न देव प्रतिमा की पूजा करो न तीर्थयात्रा। देव की आराधना से तुम्हें मोक्ष मिलने का नहीं।

सुरमन्दिरतरुमूलनिवासः
शय्या भूतलमजिनं वासः।
सर्वपरिग्रह भोग त्यागः
कस्यसुखं न करोति विरागः।।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम्।

जो मंदिर के वृक्ष तले जमीन पर सोता है, मृगचर्म पहनता है, जिसने प्राप्ति की इच्छा का त्याग कर दिया है, ऐसा वैराग्य किसके हृदय में सुख का संचार नहीं करता।

यह श्लोक सुरेश्वराचार्य का लिखा हुआ माना जाता है।

मन्दिर तरुतल करे निवासा
करे भूमि पर शयन सत्रासा
त्याग सभी सुख, क्षुधा पिपासा
ऐसा वैरागी पा सकता है
सच्चा सुख अनवर्चनीय
भज गोविन्दम्, भव तारणीय

-अनुवाद: प्रभा तिवारी

इस श्लोक में सुरेश्वराचार्य ने एक सच्चे वीतराग संन्यासी और उसके वैराग्य जनित सुख का चित्रण किया है।

भर्तृहरि ने वैराग्य शतक में अनेक बार वीतरागी के सुख का उल्लेख किया है–

महीशय्या शय्या विपुलमुपधानं भुजलता
वितानचाकाशं व्यजनमनुकूलोऽयमनिलः ।
स्फुरद्दीपश्चन्द्रो विरतिवनितासंगमुदितः
सुखं शान्तः शेते मुनिरतनुभूतिर्नृप इव ।।

धरती सुन्दर शय्या अपनी
बाँहों का घेरा तकिया है
आकाश का खड़ा शामियाना
हवा पंखा झलती है
दीप चंद्रमा का जल रहा
ठाट अपना राजा जैसा
विरति की रानी संग
सोता हूँ सुख की नींद।

पाणिः पात्रं पवित्रं भ्रमणपरिगतं भैक्षमक्षयमन्त्रं
विस्तीर्ण वस्त्रमाशादशकमपमलं तल्पमस्वल्पमुर्वी ।
येषां निसंगगतांगीकरणपरिणत स्वान्तसंतोषिणस्ते
धन्याः संन्यस्तदैन्य व्यतिकरनिकराः कर्मनिर्मूलयन्ति ।।

वासन पवित्र हाथ ही जिनके
घूमघाम कर पाएँ वे
खतम न हो इतना अन्न
दिशाएँ विस्तृत पहनने को
और धरती ही शय्या हो
मिल जाता जो कुछ भी
निस्पृह उसे स्वीकारें वे
अपने में रहना सीखा
हीन भाव से ऊपर होकर
छोड़ा जिसने दुनिया धंधा
उसका क्या कहना।

शय्या शैलशिला गृहं गिरिगुहा वस्त्रं तरुणां त्वचः
सरंगाः सुहृदो ननु क्षितिरूहां वृत्तिः फलैः कोमलैः ।
येषां निर्झरम्बुपानमुचितं रत्यै च विद्यांगना
मान्ये ते परमेश्वराः शिरसि यैर्बद्धो न सेवांजलिः ।।

पत्थर के बिछौने पर
हैं जो सोते
घर–द्वार गुफा ही जिनका
पेड़ों की छाल पहन
रहना उनको आता है
हिरनों को ही मित्र बनाते
फल–फूल खाकर काम चलाते
झरने का वह पीते पानी
विद्या उनकी रानी है
जाकर कहीं जो हाथ न जोड़ें
असली हैं वही प्रभु महान।

वैराग्य के ऐसे ही राजसी ऐश्वर्य की कामना भर्तृहरि करते हैं–

एकाकी निस्पृहः शान्तः पाणिपात्रो दिगम्बरः ।
कदा शम्भो भविष्यामि कर्मनिर्मूलनक्षमः ।।

रहूँ अकेला दूर एकांत
लेना–देना हो न किसी से
मन को कोई उद्वेग न घेरे
हाथ ही बरतन हो खाने को
दिशाएँ सुन्दर वसन हों मेरे
जड़ करम की उखाड़ मैं फेकू
शंभो, ऐसा दिन कब आएगा ?

वैराग्य के बिना मोक्ष या मुक्ति की कल्पना नहीं की जा सकती। भोग–लिप्सा और इच्छाओं की निवृत्ति को वैराग्य कहा जाता है। वैराग्य अपने परम रूप में ज्ञान की पराकाष्ठा है। इसे ही कठोपनिषद में कहा गया है–

धीरा अमृतत्वं विदित्वा
ध्रुवम ध्रुवेष्विह न प्रार्थयन्ते।(2:1:2)

विवेकी पुरुष अमरत्व को निश्चल जानकर संसार के अनित्य पदार्थों में किसी की इच्छा नहीं करते।

शंकर इसे और स्पष्ट करते हुए इसकी व्याख्या में लिखते हैं–

पुत्रवित्त लोकैषणाभ्यो व्युत्तिष्ठन्त्येवेत्यर्थः

धीर विवेकी पुरुष पुत्र, वित्त और लोकेषणा से दूर ही रहते हैं।

योगरतो वा भोगरतो वा
संगरतो वा संगविहीनः ।
यस्य ब्रह्मणि रमते चित्तं
नन्दति नन्दति नन्दत्येव । ।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम् ।

योग में लीन हो या भोग विलास में, समाज में रहे या एकान्त में, जिसका मन ब्रह्म में लीन है, वही प्रसन्न है। वही आनंद में है। संत कवियों ने ब्रह्मानंद की इस धारणा को बहुत विस्तार से नए–नए प्रतिमानों के साथ विराट रूपकों के माध्यम से प्रस्तुत किया है–

कबीर–

जहाँ खेलत वसन्त रितुराज
जहाँ अनहद बाजा बजै बाज
जहाँ चेत–अचेत खंब दोउ मन रच्या है हिंडोर
तह झूले जीव जहान, जहँ कतहुँ नहिं थिर ठौर

दादू–

प्रेम–लहरि की पालकी, आतम वैसे आइ।
दादू खेले पीव सौं, यह सुख कह्या न जाइ।।

–जगजीवन साहब

आनन्द के सिन्ध में आनि बसे, तिनको न रह्यौ तन को तपनो

जब आपु में आपु समाय गये, तब आपु में आपु लह्यौ अपनो।
जब आपु में आपु लह्यों अपुनो, तब अपनो हो जाय रह्यौ जपनो
जब ज्ञान को भान प्रकास भयो, जग जीवन होय रह्यौ सपनो।।
जिसे आत्मज्ञान हो गया, ऐसा व्यक्ति–
अपनी मढ़ी में आपु हिंडोले
मन मस्त हुआ तो क्या बोले

जिस प्रकार कंजूस का चित्त धन में और कामी को काम (भोग) की आसक्ति होती है, उसी प्रकार ज्ञानी का मन ब्रह्म में रम जाता है। उसका सारा व्यवहार विराग और वीतराग भाव का रहता है। उसे किसी फ्रेम में, नियमों में या आचरण संहिता में नहीं बाँधा जा सकता।
ऐसे ही परमानंदी लोगों के लिए भर्तृहरि ने कहा है–
क्वचिद्भूमौ शायी क्वचिदपि च पर्यकं शयनः
क्वचिच्छाकाहारः क्वचिदपि च शाल्योदनरुचिः ।
क्वचित्कन्याधारी क्वचिदपि च दिव्याम्बर घरो
मनस्वी कार्यार्थी न गणयति दुःख न च सुखम्।।
कभी बिछौना श्यामल धरती
मिलता पलंग कभी सोने को
कभी जंगल में भूख मिटाते
खीर पुलाव कभी खाने को
कभी तो कथरी ओढ़ लिया
झक रेशम कभी पहनने को
लोग हैं जो धुन के पक्के
सुख–दुःख क्या, ख्याल न करते।

स्थितप्रज्ञ व्यक्ति कामनाओं से परे होता है। इस संसार में उसे भी इन्द्रियों का स्पर्श होता है। ज्ञानेश्वर महाराज के अनुसार, जिस प्रकार सूर्य अपनी किरणों से जगत के सकल पदार्थों का स्पर्श करके भी उनसे अलिप्त बना रहता है उसी प्रकार यह ज्ञानी पुरुष इस संसार में उदासीन भाव से रहता है। उसके मन में कोई कामना नहीं रहती। फलस्वरूप वह दुःखों से मुक्त होता है इसलिए उसका मन सदैव प्रसन्न रहता है। ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं–
देखें अखंडित प्रसन्नता। आथी जेथ चित्ता।
तेथ रिगणें नाहीं समस्ता। संसार दुःखा।।
अखंड रूप में जिसके चित्त में प्रसन्नता निवास करे।
इस संसार का कोई भी दुःख कभी वहाँ न प्रवेश करे।।
अमृत का निर्झर ही जिसके उदर में सदैव बहता हो।
तो फिर उसको क्षुधा–तृष्णा की बाधा और भय कैसे हो।।

– ज्ञानेश्वरी सुधा : डॉ. मोहन बांडे

योग वाशिष्ठ में लिखा है–
न सुखानि न दुःखानि न मित्राणि न बान्धवाः।
न जीवितं न मरणं बन्धाय ज्ञस्य चेतसः ।।

सुख–दुःख, मित्र, बान्धव, जीवन और मरण ज्ञानी पुरुष के चित्त को नहीं बाँधते।

सुप्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक फ्रैडिक नीत्से (1844–1900) ने कहा था– 'मैं केवल उस परमात्मा में विश्वास कर सकता हूँ जो नाच सकता हो।' शंकर कह रहे हैं– 'हम आनंद में हैं, हमारा परमात्मा भी आनंदित है। हमारी दृष्टि में आनंद है इसलिए हमारी सृष्टि भी आनंदमयी है।'

सच्चा वीतरागी साधु सुख–दुःख दोनों से परे होता है। वह हमेशा आनंद में रहता है। साधु आनंदित होता है और शंकर कहते हैं–
'नन्दति नन्दति नन्दत्येव'।
भगवद्ः गीता किंचिद धीता
गंगाजललवकणिका पीता।
सकृदपि येन मुरारिसमर्चा
क्रियते तस्य यमेन न चर्चा।।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम्।

जिसने थोड़ी बहुत गीता पढ़ ली, गंगा जल की एक बूँद ही पी ली हो, एक बार ही मुरारी का स्मरण कर लिया उसके पास यमराज नहीं आते।

इस श्लोक में सद्गृहस्थों के लिए आचार संहिता प्रस्तुत की गई है।
आचार्य शंकर के अनुसार, गृहस्थों के लिए–
शास्त्रों का अध्ययन
पवित्र संस्कार, और
प्रभु का नाम संकीर्तन

आवश्यक है। इससे आत्म विश्वास बढ़ता है और मृत्यु का भय समाप्त होता है।

शास्त्रों के अध्ययन से ज्ञान प्राप्त होता है। ज्ञान आत्मा का अन्न है। ज्ञान से तात्पर्य पांडित्य से नहीं है। ज्ञान का अर्थ है– चेतना, जितने हम जागृत हो सकें। ज्ञान जगाता है। हम सब मोहावस्था में हैं– सो रहे हैं। ज्ञान के अभाव में जीवन में वासनाएँ पैदा होती हैं, जीवन अंधेरे में भटकता है। हम तृष्णा में जीते हैं। ज्ञान जगाता है, तब चित्त के रोग नष्ट हो जाते हैं। ज्ञान से हम शुद्ध, निर्मल और निर्दोष बनते हैं।
संस्कारों से जीवन में अनुशासन आता है
प्रभु के नाम संकीर्तन से जीवन में शुचिता आती है।

भवभूति ने 'मालती माधव' में गृहस्थों के गुणों की चर्चा करते हुए लिखा है–
शास्त्रेषु निष्ठा सहजश्च बोधः
प्रागल्भ्यमभ्यस्त गुणा च वाणी।
कालानुरोधः प्रतिभानवत्व–
– मेते गुणाः कामदुधा क्रियासु।।

शास्त्रों के प्रति निष्ठा, स्वाभाविक आकलन शक्ति, प्रगल्भता, सुसंस्कृत वाणी, यथायोग्य काल का विचार और समय सूचकता इन गुणों

से सुसंस्कृत गृहस्थ को उसके सभी कृत्यों में यश मिलता है। भवभूति शंकरचार्य के समकालीन माने जा सकते हैं, उनका समय सातवीं शताब्दी के उत्तरार्ध के वर्ष माने जाते हैं। शंकर के शब्दों में और भवभूति के शब्दों में परस्पर एक-दूसरे की वैचारिक अनुगूँज सुनाई पड़ती है। इससे उस युग में सामान्य गृहस्थों के लिए मान्य आचरणों का बोध होता है।

पुनरपि जननं पुनरपि मरणं
पुनरपि जननी जठरे शयनम।
इह संसारे बहु दुस्तारे
कृपयाऽपारे पाहि मुरारे।।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम्।

बार-बार जन्म लेना, बार-बार मरना, बार-बार माता के गर्भ में आना - ऐसा कठिन है इस संसार का चक्र। हे मुरारी! मुझ पर कृपा कर इस प्रवाह चक्र से मेरा उद्धार करो।

योग वाशिष्ठ में कहा गया है-

अशेषेण परित्यागो वासनानां य उत्तमः
मोक्ष इत्युच्यते ब्रह्मन।

सम्पूर्ण रूप से वासनाओं का परित्याग (अशेषेण) ही मोक्ष है।

वाल्मीकि के अनुसार-

वासना द्विविधा प्रोक्ता शुद्धा च मलिना तथा।
मलिना जन्मनो हेतुः शुद्धा जन्मविनाशिनी।।

वासना दो प्रकार की होती है- मलिन और शुद्ध। मलिन वासना पुनर्जन्म का कारण है। यह आवागमन में जकड़ती है। मोक्ष की साधिका है। मलिन वासना के लिए कहा गया है-

अज्ञानसुधनाकारा घनाहंकार शालिनी।

अज्ञान ही उसकी आकृति है और अहंकार उसका गहना है। योग वाशिष्ठ में मलिन वासना की उपमा उस बीज से दी गई है जिसमें नवांकुर की संभावना छिपी है पर शुद्ध वासना भुने हुए बीज के समान है। कहा गया है कि-

पुनर्जन्मांकुर त्यक्त्वा स्थिता संभृष्ट बीजवत्।

Vaasanaas are impressions or imprints left on the mind by past actions which survive the death of physical body and influence the course of future birth.

वाल्मीकि ने भरद्वाज से कहा-

ये शुद्धवासना भूयो न जन्मार्थ भाजनम्।
ज्ञातज्ञेयास्त उच्यन्ते जीवन्मुक्ता महाधियेः।।

The liberated men of great wisdom endowed with pure vaasanaas are said to have understood what is to be known and do not again subject themselves to the pangs of rebirth.

हम सब अज्ञान से घिरे हैं, मलिन वासनाओं से आवृत्त हैं। फलस्वरूप बार-बार जन्म लेने और मरने के लिए विवश हैं। बहुत ही दुस्तर है। हम इस संसार में सद्कर्मों के लिए जन्म लेते हैं, परन्तु हम उस उद्देश्य को भूल जाते हैं, इसीलिए तुलसीदास **जगद्भ्रमोऽयं** - यह जगत दृश्य होते हुए भी भ्रम है। इसलिए कहते हैं-

मों सो कौन कुटिल, खल, कामी
जिन तनु दियौ ताहि बिसरायो ऐसो नमकहरामी।

शंकर कहते हैं- कृपयाऽपारे पाहि मुरारे

मुर (अहंकार रूपी राक्षस) को मारने वाले प्रभु मुझ पर कृपा करो, मेरे अज्ञान को दूर करो और इस जन्म-मरण के बंधन से मुझे छुटकारा दिलाओ।

रथ्याचर्पट विरचित कन्यः
पुण्यापुण्य विवर्जित पन्थः।
योगी योगनियोजित चित्तो
रमते बालोन्मत्तवदेव।।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम्।

योगी साधारण गुदड़ी धारण करता है। उसकी राह गुण-दोष से परे है और जिसका मन पूरी तरह से ब्रह्मानंद में रम चुका है, ऐसे योगी का मन भोले-भाले बच्चे जैसा होता है।

सच्चे आत्मज्ञानी योगियों को कोई अहं नहीं होता।

योग वाशिष्ठ कहता है तत्त्व ज्ञान से आत्मा की शांति होती है, मन निश्चल होता है और दुःखों का नाश होता है। ऐसे संन्यासियों के मन में कोई विकार नहीं होता, इसलिए उनका व्यवहार शिशुओं जैसा या सुध-बुध बिसराये उन्मत्त व्यक्ति जैसा होता है। हमारे समय के रामकृष्णदेव ऐसे ही परमहंस थे।

कस्त्वं कोऽहं कुत आयातः
का मे जननी को मे तातः।
इति परिभावय सर्वमसारं
विश्वं त्यक्त्वा स्वप्नविचारम्।।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम्।

तुम कौन हो? मैं कौन हूँ और कहाँ से आया? मेरे माता-पिता कौन हैं? इस प्रकार सारे विश्व को सारहीन और सपना समझकर त्यागो और (आत्म) तत्त्व की जिज्ञासा करो।

आचार्य शंकर एक शिक्षक की भाँति साधक की परीक्षा लेते हैं और प्रश्न करते हैं। वे साधक को सावधान करते हुए कहते हैं कि जगत को निस्सार और स्वप्नवत जानो। योग वाशिष्ठ में वशिष्ठ कहते हैं-

कोऽहं कस्य च संसार इत्यापद्यपि धीमता

मैं कौन हूँ? यह संसार कहाँ से आया? ऐसे प्रश्नों पर विचार करो। वे यह भी कहते हैं-

विवेकान्धो हि जात्यन्दधः।

जो पुरुष विचार रूपी नेत्र से हीन है उसे जन्मान्ध समझना चाहिए।

त्वयि मयि चान्यत्रैको विष्णु-
र्व्यर्थं कुप्यसि मय्य सहिष्णुः।
भव समचित्तः सर्वत्र त्वं

वाञ्छस्य चिराद्यदि विष्णुत्वम।।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम्।

मुझमें, तुममें हम सब में एक ही सत्य व्यापक है। तुम अकारण ही मुझ पर क्रोधित हो रहे हो। यदि तुम विष्णुत्व को प्राप्त करना चाहते हो हर परिस्थिति में अपने चित्त को एक सा रखो।

यह एक साधनापरक श्लोक है। आचार्य यहाँ एक साधना बताते है

भव समचित्त: सर्वत्र त्वं

हम सब अधीर हैं। सुख में अहंकारी हो जाते हैं और दु:ख में विह्वल और नास्तिक। शंकर कहते हैं सुख में, दु:ख में सम भाव रखो। धैर्य बनाकर रखो। सभी में ईश्वर को देखो। ऐसा करने से तुम्हें शीघ्र ही विष्णु पद मिल जाएगा।

तुझमें मुझमें है एक तत्त्व
मत हो अधीर, वह है अव्यक्त
हर स्थिति में, तुम रखो समत्व
यदि तत्त्व से मिलना चाहो तो
समता का भाव सराहनीय।
भज गोविन्दम्, भज तारणीय।
यदि पाना चाहो संसिद्धि
पहले कर लो तुम सम बुद्धि
संदेह त्याग, अनुभव वृद्धि
अनेकत्व तजो हर स्थिति में
है ज्ञान मार्ग विश्वसनीय।
भज गोविन्दम्, भव तारणीय

शत्रौ मित्रे पुत्रे बन्धौ
मा कुरु यत्नं विग्रहसन्धौ।
सर्वस्मिन्नपि पश्यात्मानं
सर्वत्रोत्सृज भेदाज्ञानम्।।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम्।

– प्रभा तिवारी

अपने शत्रु या मित्र या पुत्र और बन्धु बान्धवों से लड़ने-झगड़ने में या मित्रता करने में अपनी ऊर्जा मत लगाओ। अपने आप को सभी प्राणियों में देखो और भेद-विभेद की अज्ञानता का त्याग करो। अध्यात्म जीवन को एक संतुलित और समदृष्टि प्रदान करता है। अध्यात्म में व्यक्ति के साथ-साथ समष्टि के कल्याण की भावना भी है। इसीलिए शंकर का संदेश है सबमें स्वयं को देखो और अपने भेदज्ञान को नष्ट करो। ऋग्वेद में कहा गया है कि '**श्रृणवन्तु सर्वे: अमृतस्य पुत्रा:**' हम सब अमृत की संतान हैं, सब में नारायण का अंश है।

शंकर यहाँ एक सर्वजनीन सत्य और विश्व बंधुत्व की परिकल्पना प्रस्तुत करते हैं।

कामं क्रोधं लोभं मोहं
त्यक्त्वाऽऽत्मानं पश्यति सोऽहं।
आत्मज्ञान विहीन मूढ़ा
ते पच्यन्ते नरकनिगूढः ।।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम्।

काम, क्रोध, लोभ और मोह- इन विकारों का त्याग कर ही मनुष्य स्वयं को पहचानता है। जिन्हें यह आत्मज्ञान नहीं है वे मूढ़ हैं और नरक में प्रताड़ित होते हैं।

इस श्लोक में शंकर 'मूढ़' की सरलीकृत परिभाषा देते हैं-

आत्मज्ञान विहीन मूढ़ा

भज गोविन्दम् के प्रथम श्लोक में जब शंकर 'मूढ़मते' सम्बोधित करते हैं, तब बहुत स्पष्ट नहीं होता कि उनका आशय क्या है?

इस श्लोक तक आते-आते वेदान्त की शांकरीय अवधारणाएँ स्पष्ट हो जाती है, तब आचार्य मूढ़ की परिभाषा देकर मानो इस संकल्पना को पूर्णता प्रदान कर देते हैं।

योग वाशिष्ठ में मोक्ष के द्वार के द्वारपालों की चर्चा वशिष्ठ करते हैं-

मोक्षद्वारे द्वारपाला: चत्वार: परकीर्तिता: ।
शमो विचार: संतोष: चतुर्थ साधुसंगम् ।।

In the gateway of liberation (heaven) it is declared there are four door keepers. They are tranquillity, enquiry, contentment and the fourth association with the sages.

शंकर का यह श्लोक यो.वा. के इस श्लोक का पूरक है। यहाँ नरक के प्रवेश द्वार के प्रहरियों की चर्चा है। ये हैं-

काम	Desire	लोभ	Delusion
क्रोध	Anger	मोह	Greed

ये चारों मनुष्य का जीवन नारकीय बना देते हैं, इसलिए शंकर कहते हैं-

ते पच्यन्ते नरक निगूढ़:

काम, क्रोध, लोभ, मोह ये चार मोक्षमार्ग के पथिक के अत्यन्त बलिष्ठ शत्रु हैं- इसलिए आचार्य कहते हैं इनका त्याग करो। अन्य सभी दुर्गुणों का मूल काम (Desire) है।

गीता के दूसरे अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण बताते हैं कि मनुष्य का पतन क्रमश: किस प्रकार होता है। वे पतन की सम्पूर्ण प्रक्रिया का प्रारूप प्रस्तुत करते हैं-

ध्यायतो विषयान्पुंस: संगेस्तेषूपजायते।
संगात् संजायते काम: कामात्क्रोधायऽभिजायते।।
क्रोधाद्भवति संमोह संमोहात्स्मृति विभ्रम:।
स्मृतिभ्रंशात बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।।
ध्यान, आसक्ति, इच्छा, क्रोध, सम्मोह (मूढ़ भाव), स्मृति विभ्रम, बुद्धि नाश, प्रणश्यति

विषयों का ध्यान या चिन्तन करने वाले पुरुष की उन विषयों में आसक्ति हो जाती है और आसक्ति से उन विषयों की इच्छा (कामना) उत्पन्न होती है। इच्छा में विघ्न पड़ने से क्रोध उपजता है। क्रोध से

सम्मोह-अविवेक या मूढ़ भाव उत्पन्न होता है। अविवेक से स्मरण शक्ति भ्रमित हो जाती है और स्मृति विभ्रम से बुद्धि अर्थात् ज्ञान शक्ति का नाश हो जाता है और बुद्धि नाश से मनुष्य अपने श्रेय साधन से गिर जाता है।

आत्मज्ञानी व्यक्ति लालसाओं, कामनाओं से मुक्त रहता है, सम्पूर्ण संतुष्ट रहता है। ऐसे ही आत्मज्ञानी संतुष्ट व्यक्ति की मनोवृत्ति का चित्रण भर्तहरि निम्न पंक्तियों में करते हैं-

आशीमहि वयं भिक्षामाशावासो वसीमहि।
शयीमहि महीपृष्ठे कुर्वीमहि किमीश्वरैः ।।

भरेंगे पेट
भीख के अन्न से
वस्त्र दिशाओं का
लेंगे ओढ़ पहन
धरती के सीने पर
रखकर सिर अपना
सोएँगे सुख की नींद
हुआ करे कोई
आदमी बड़ा
हमें क्या!

इसी को कबीर कहते हैं- अवधू, बेगम देस हमारा, यहाँ सदा आनंद, दुख-दन्द व्यापै नहीं और भर्म और भ्रान्ति तहँ नेक नहिं पाइये।

जो इस आत्मज्ञान के स्वर्गीय आनंद से वंचित हैं, उनका जीवन नारकीय ही होगा। इस आत्मज्ञान को उपनिषदों में तप कहा गया है-

यस्य ज्ञानमयं तपः।

गेयं गीतानाम सहस्त्रं
ध्येयं श्रीपतिरूपमजस्त्रम् ।
नेयं सज्जनसंगे चित्तं
देयं दीन जनाय च वित्तम ।।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम् ।

भगवद् गीता और विष्णु सहस्त्रनाम का पाठ करो। ईश्वर का सदा स्मरण करो, प्रभु (परम सत्ता) के रूप का ध्यान करो। अपने मन को के सत्संग में लगाओ और दीन जनों को दान दो।

यह आठवीं शताब्दी के एक हिन्दू सद्गृहस्थ की दिनचर्या का सटीक चित्रण है। आठवीं शताब्दी तक आते-आते विष्णु के अवतार के रूप में श्रीकृष्ण-वासुदेव, एक सर्वमान्य देव के रूप में प्रतिष्ठित हो चुके थे और मंदिरों में उनके विग्रह की स्थापना होने लगी थी। गीता और विष्णु सहस्त्रनाम धार्मिक ग्रंथों के रूप में स्वीकृत हो चुके थे। इसलिए यहाँ कहा गया है कि-

भगवद्गीता और विष्णुसहस्त्रनाम का पाठ करो
भगवान के रूप का स्मरण करो, सत्संग करो और दान-पुण्य करो।
निरासक्त भाव से (अनासक्त) कर्म करने की शिक्षा को रोज पढ़ो और गुनो।
ईश्वर को उसके विविध स्वरूपों में स्मरण करो। सत्संग करो।

अकिंचनों की सेवा करो, दान करो, दान में ही धर्म की सार्थकता है। दान का भारतीय सामाजिक और धार्मिक जीवन में बहुत महत्व है। इसे हमारे सामाजिक और धार्मिक संस्कारों का मेरुदण्ड कहा जा सकता है।

सुखतः क्रियतेरागाभोगः
पश्चाद्धन्त शरीरे रोगः।
यद्यपि लोके मरणं शरणं
तदपि न मुंचति पापाचरणम्।।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम्।

क्षणिक सुख के लिए वासना के वशीभूत होकर लोग शारीरिक भोग में कूद पड़ते हैं। भोग की अधिकता से शरीर रोगग्रस्त हो जाता है।, यद्यपि उन्हें अंतिम शरण मृत्यु में ही मिलती है फिर भी वे पाप पूर्ण आचरण नहीं छोड़ते।

इस श्लोक में आचार्य शंकर द्वारा गृहस्थों को सावधान किया गया है कि भोग मर्यादा और उचित सीमा में ही करना चाहिये।

सुख प्राप्ति को करते नाना भोग
उससे पाते हैं विभिन्न रोग
सत्संग का पाते नहीं सुयोग
अंतिम मृत्यु है शाश्वत
फिर भी बनते पापाचारणीय
भज गोविन्दम् भवतारणीय।

– प्रभा तिवारी

अर्थमनर्थं भावय नित्यं
नास्ति ततः सुखलेशः सत्यम्।
पुत्रादपि धनभाजां भीतिः
सर्वत्रेषा विहिता रीतिः ।।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम्।

धन-संपत्ति विपत्ति का कारण है, उससे कोई सुख नहीं मिलता। धनवान को अपने पुत्र से भी खतरा है। सभी जगह यही रीति है। व्यक्ति धन में सुख ढूँढता है। धन में सुख नहीं है। सुख तो हमारे अंदर है।

समझ अर्थ को सदा अनर्थक
सुख इसमें है कहीं न रंचक
भीति सुतों से भी धनिकों को
रीति यही है जग में व्यापक।

– चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

प्राणायामं प्रत्याहारं
नित्यानित्य विवेक विचारम्।
जाप्यसमेत समाधिविधानं
कुर्ववधानं महदवधानम्।।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम्।

प्राणायाम नियमपूर्वक करो। इन्द्रियों को उनके विषयों से दूर करने का यत्न करो। नित्य-अनित्य का विवेचन और जप के साथ समाधि पूर्वक रहने का अभ्यास अत्यन्त यत्नपूर्वक करो।

इस श्लोक में शंकर साधक को अपने मन रूपी दुर्ग की सुरक्षा के प्रयत्नों की जानकारी देते हैं। प्राणायाम, प्रत्याहार, नित्य-अनित्य विवेक, जप और समाधि ये अंतरंग साधना की क्रियाएँ मानी गई हैं।

प्राणायाम : प्राण (श्वास) का आयाम (नियंत्रण)। मन को ऐकाग्र करने का यह मुख्य साधन माना जाता है।

प्रत्याहार : इन्द्रियों का दमन करना।

नित्य-अनित्य : शाश्वत तथा नश्वर का विवेक ।

जप : मंत्रों का गुनगुनाना मन ही मन प्रार्थना करना। जप में प्रकार से शब्द संयोग से उत्पन्न ध्वनियाँ बताई गई हैं-

बैखरी : जो दूसरों को भी सुनाई दे।

मध्यमा : जो खुद को सुनाई दे।

पश्यन्ति : मन में

समाधि : मन को एकाग्र कर ध्यान।

ध्यान भीतर का-अन्दर का स्नान है। शंकर का आग्रह है कि ध्यान के बीज को वृक्ष बनाओ, इसीलिए कहा गया है कि **बीजावधानम्** ध्यान बीज है। ध्यान है निर्विकार चैतन्यावस्था, जहाँ होश तो हो पर कोई विचार न हो। साधक तो रहे पर उसका मन न बचे। एक प्रकार से मन की मृत्यु को ध्यान कह सकते हैं। समाधि का अर्थ है जहाँ मन बिल्कुल शून्य हो जाए।

हठयोग में ज्ञान की अविचल अवस्था को ध्यान कहा गया है। सांख्य दर्शन में ध्यान को निर्विषय मन की संज्ञा दी गई है। समाधि अंतिम अवस्था है। ध्यान की अवस्था तक साधक को ध्याता, ध्यान और ध्येय की चेतना रहती है। पर समाधि में ध्यान और ध्याता भी ध्येय में लीन होकर एकाकार हो जाते हैं। समाधि का फल मुक्ति या कैवल्य ही है।

समाधि : काव्य शास्त्र में एक अर्थालंकार भी है। मम्मट ने काव्यप्रकाश में लिखा है-

समाधिः सुकरं कार्य कारणान्तर योगतः

जहाँ कतिपय अन्य कारणों के योग से कार्य सुगम हो जाय। हिन्दी में मतिराम, पद्माकर, भूषण आदि ने इसे सोदोहारण परिभाषित किया है।

गुरुचरणाम्बुज निर्भर भक्तः
संसारादचिराद्भव मुक्तः।
सेन्द्रियमानसनियमा देवं
द्रक्ष्यसि निजहृदयस्थं देवम्।।
भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम्।

गुरु के कमल रूपी चरणों के भक्त-इन्द्रिय और मन का नियंत्रण करने से तुम शीघ्र संसार के बंधनों से छुटकारा पाओगे और अपने हृदय में निवास करने वाले देव को देख सकोगे।

संसार में मुक्ति सच्चे ज्ञान से मिलती है और यह ज्ञान गुरु कृपा से प्राप्त होता है। स्वामी दादू दयाल कहते हैं-

दादू सतगुरु सूं सहजै मिला, लीया कंठ लगाइ।
दाया भई दयाल की, तब दीपक दिया जगाइ।।

'गुरु चरणाम्बुज निर्भर भक्तः' की तर्ज पर जगजीवन साहब को पंक्ति है-**'गुरु के चरन करै सुक्ख निवासा'**।

दरिया साहब (मारवाड़ के संत कवि) कह गए-

दरिया सतगुरु सबद सौं मिट गई खैंचातान।
भरम अंधेरा मिट गया, परसा पद निरबान।।

संत चरनदास तो गुरु के ऊपर बलिहारी हैं, क्योंकि-

बलिहारी गुरु आपने, तन मन सदके जावँ।
जीव ब्रह्म छिन में कियो, पाई भूले ठावँ।।

यह जगत्, यह सृष्टि और उसकी माया सब ब्रह्म का विस्तार है, ईश्वर की रचना है। गुरु कृपा करके साधक को ज्ञान से आलोकित कर 'आत्मज्ञान' की ओर ले जाते हैं और मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

सहजोबाई अपने गुरु चरनदासजी के लिए लिखती हैं-

राम तजूँ पै गुरु न बिसारूँ।
हरि ने जन्म दियो जग माहीं। गुरु ने आवागमन छुटाहीं।।
हरि ने कुटुंब जाल में गेरी। गुरु ने काटी ममता-बेरी।।
हरि ने रोग-भोग उरझायौ। गुरु जोगी कर सबै छुड़ायौ।।
हरि ने कर्म-भर्म भरमायौ। गुरु ने आतमरूप लखायौ।।
हरि ने मोसूँ आप छिपायो। गुरु दीपक दें ताहि दिखायो।।
चरनदास पर तन मन वारूँ। गुरु न तजूँ हरि को तजि डारूँ।।
राम तजूँ पे गुरु न बिसारूँ।

इसीलिए कहा जाता है- जिसको मिला गुरु, उसका हुआ जीवन शुरू।

शिवसूत्र का एक सूत्र है- **'गुरु उपायः'** गुरु उपाय है। आचार्य रजनीश कहते हैं- यह जो जीवन की खोज है, तुम अकेले न कर पाओगे, क्योंकि अकेले तो तुम अपने वर्तुल में बंद हो। तुम्हें उसके बाहर दिखाई भी नहीं पड़ता। इसलिए गुरु उपाय है। गुरु का अर्थ है- जिसे अनुभव हुआ हो, जिसने जाना हो, जो कारागृह से छूट गया हो। वही तुम्हें खबर दे सकता है, वही तुम्हें रास्ता बता सकता है कि आओ मेरे पीछे, इस कारागृह में भी द्वार है, जहाँ से बाहर निकला जा सकता है। शास्त्र तुम्हें बाहर नहीं ले जा सकते। गुरु जीवित शास्त्र है। इसलिए शंकर कहते हैं कि जिसने गुरु के चरण कमलों में मन लगाया मानो उसे संसार रूपी कारागृह की कुंजी मिल गई। वह भवसागर पार हो गया।

हमारी सभी धार्मिक पद्धतियों एवं साधनाओं में गुरु के महत्व को स्वीकार किया गया है। सभी में यह माना गया है कि जो गुरुहीन है- निगुरा है उसे ब्रह्म की उपलब्धि नहीं हो सकती।

लेखक वरिष्ठ साहित्यकार एवं सेवानिवृत प्राध्यापक है
संपर्क : आर 36 महालक्ष्मी नगर इंदौर(म.प्र.)
मो. 9827459970

आलेख

आयुष्मान भव, भाग- 1

डॉ.सतीश चतुर्वेदी
शाकुंतल

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलं।।

अर्थात् नित्य ही अपने बड़ों के सान्निध्य का लाभ लेने वाले की आयु, विद्या, यश और बल ये चार चीजें बढ़ती हैं। प्रत्येक मानव को अपने जीवन की सार्थकता के लिए ये चार चीजें ही चाहिए। और आज की पीढ़ी बड़ों के संपर्क में रहना अपने समय की हानि मानने लगी है। इन चारों का क्रम बहुत सुंदर है। सर्वप्रथम आयु का आशीर्वाद दिया गया है। मैं जब भी अपने गुरु जन के चरण स्पर्श करता हूं, तो वे आयुष्मान भव का आशीर्वाद देते हैं। एक रचनाशील जीवन को इस आशीर्वाद की महती आवश्यकता है; क्योंकि वह जीवन में बहुत कुछ करने का अभिलाषी होता है। इससे वह विद्या, यश और बल अर्जित कर सकता है। कुछ गुरु जन 'स्वस्थ और सुखी भव' से आशीषित करते हैं ,तो मुझे उनका यह आशीष भी बहुत भाता है; क्योंकि आज व्यक्ति संपन्न तो है, किंतु सुख उसके जीवन से गायब है। उसके चेहरे से तेज गायब है। आज नई-नई बीमारियां जन्म ले रही हैं। युवाओं के हृदयाघात और रक्तचाप की समस्याएं या उनके कारण जीवन से हाथ धोने की घटनाएं प्राय पढ़ने में आती हैं। आज व्यक्ति आनंद के साथ जीवन यापन करना लगभग भूल चुका है। वह बदहवास होकर भाग रहा है और पूछने पर कहता है -बस कट रही है । यानी वह जीवन जी नहीं रहा, काट रहा है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की भारतीयता की गीता 'भारत भारती' में लिखी ये पंक्तियां आज कितनी प्रासंगिक लगती हैं--

हम कौन थे, क्या हो गए हैं, और क्या होंगे अभी!
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएं सभी।।

आज अति भौतिकता के चलते मूल्य हीन परिवेश में जीवन जैसे बिखर गया है। इसके चलते 'जीवेम शरदः शतम्' की सूक्ति अथवा 'शतायु भव' का आशीष बेमानी हो गया है। अपने बड़ों के सामीप्य का लाभ न लेना अपनी जड़ों से कटना है । हमारे वेदों के साथ-साथ हमारा लोक वेद भी अत्यंत समृद्ध है। हमारे पूर्वजों ने हमें हमारे जीवन की सुगमता के लिए रीति - नीति की हितकारी अद्भुत शिक्षा दी है। उनके ही व्यावहारिक सिद्धांतों के आधार पर लोक में यह कहावत प्रचलित हो गयी--

पहला सुख निरोगी काया ।
दूजा सुख पास हो माया ।
तीजा सुख सुलक्षण नारी।
चौथा सुख पुत्र हो आज्ञाकारी।।

अभी एक दिन कॉलेज गया। वहाँ एक महिला के जन्मदिन पर मिष्ठान वितरण हुआ, तो उनके एक कलीग ने मिष्ठान लेने से मना कर दिया। इस पर जब मैंने आश्चर्य व्यक्त किया,तो वहां कार्यरत मेरे शिष्य ने हंसकर मुझसे कहा --सर, ये अब बड़े लोगों में सम्मिलित हो गये हैं इसलिए मिठाई नहीं खा सकते हैं। मैंने कहा --'मैं समझा नहीं'

वे बोले-- सर, इन्हें बड़े लोगों की बीमारी लग गई है । ये डायबिटिक हो गए हैं । यह हम जैसे लोगों के पास थोड़े ही आती है।' मैं समझ गया। आज व्यक्ति श्रीमद्भगवत गीता में कह गए भगवान श्री कृष्ण की उस शिक्षा को भूल गया है, जिसमें वे कहते हैं

युक्ताहार विहारस्य युक्त चेष्टस्य कर्मसु।
युक्त स्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।।(6/17)

ऋषियों ने आयुर्वेद में भी स्वास्थ्य के दो ही आधार कहे जो परस्पर अन्योन्याश्रित हैं -आहार और विहार। आहार के उपरांत श्रम भी आवश्यक है और श्रम कर लेने पर आहार की इच्छा स्वयमेव हो जाती है । केवल भोजन का समय होने पर बिना भूख के खा लेना सर्वथा अनुचित माना गया है। भोजन में 70 प्रतिशत क्षारीय और 30 प्रतिशत अम्लीय खाद्य पदार्थों का सेवन उचित माना गया है, किंतु आज स्थिति उलट है। घरों में या बाजार में 70 प्रतिशत अम्लीय भोजन मिल रहा है जबकि 30 प्रतिशत क्षारीय ,जो बढ़ते रोगों का कारण है। सभी फास्ट फूड मैदा से निर्मित होते हैं जो आंतों में चिपकते हैं, मोटापे का कारण बनते हैं और रोगों को आमंत्रण देते हैं। किंतु आज लोगों को स्वास्थ्य की चिंता नहीं, जीभ का स्वाद चाहिए। कल पुणे से बिटिया का फोन आया किपापा, मेरे पेट में दर्द है, सिर भारी है और बुखार आ गया है। मैंने जब पूछा तो बाद में उसने बताया कि कल रात को मैंने मैस के बाहर एक होटल में पनीर की सब्जी के साथ भोजन किया था। मैंने उसे समझाया कि बेटा, बाजार में जो भी पनीर आ रहा है, वह अधिकांश नकली होता है। एक बात बता- गाएं उतनी ही हैं,भैंसें उतनी ही हैं फिर पनीर-दूध से बनी मिठाइयाँ त्यौहारों पर कई गुना कैसे बढ़ जाती हैं! अतः हमें बाहर के खानपान से बचना चाहिए। आज बाजार बाजार में बड़े आकर्षक ढंग से चाइनीज प्लाजा, इटालियन डिश, पिकनिक बेकरी, फास्ट फूड प्लाजा जैसी आकर्षक दुकानें खुल

गई हैं। ये हमें भारत में भारतीय नहीं रहने देना चाहतीं। खाने की वस्तुओं के नाम पर बाजार में मिलावट से युक्त अधिकांश जहर बिक रहा है। हमें सावधान रहने की आवश्यकता है। बाजार हमें पैसे के लिए खिलाता है, जबकि घर में हमारी माताएं, दादी, बहनें, बेटियां हमारे स्वास्थ्य के लिए खिलाते हैं। अब तो होटलों में मिक्स वेज में भी पनीर मिलाने लगे हैं। सब्जियों में मसाला इतना होता है कि पता ही नहीं चलता कि यह सब्जी है किसकी ! महात्मा गांधी जी ने एक स्थान पर लिखा है कि आज हमने अपनी जीभ को कुतिया बना डाला है। घाघ कहते हैं---

गाय दुहे बिन छाने लावे। गरमा गरम तुरंत चढ़ावे।।
बाढ़ै बल और बुद्धी भाई घाघ कहे यह सच्ची गाई ।।

मैगी के विज्ञापन में एक बच्चा अपनी मां की साड़ी पकड़ कर कहता है-- मम्मी, मम्मी, भूख लगी है। उसकी मां कहती है-- बस 2 मिनट । और फिर वह मैगी बनाकर उसको दे देती है। मेरा कहना है कि हमारा फास्ट फूड सत्तू तो 2 मिनट में घुलकर पेट में ही पहुंच जाता है। उससे अधिक फास्ट और क्या हो सकता है !

आज बाजार में विज्ञापन बिक रहे हैं। हमें अपने भारतीय फास्ट फूड का ध्यान ही नहीं रहा। स्वास्थ्य के लिए शरीर विज्ञानियों की सलाह है कि यदि हम सीजनल और रीजनल खाद्य पदार्थों का सेवन करेंगे, तो हम स्वस्थ रहेंगे । हमारे यहां प्रत्येक ऋतु के अनुसार सुबह के लिए सत्तू की व्यवस्था है। जौ और मटर के सत्तू, मक्का के सत्तू, गेहूं और चने के सत्तू जिन्हें सुबह पीकर हमारे कृषक दोपहर तक खेत में कार्य करने के लिए जाते हैं और लौटकर दोपहर का भोजन करते हैं। हमारा फास्ट फूड कभी खराब नहीं होता। चाहे भुने चने हों, या पंजीरी। हमारे खाद्य पदार्थ हमारी सांस्कृतिक परंपराओं का अंग हैं। मुझे याद है कि हमारे बुजुर्ग लोग जब अपनी बिटिया के यहां उसकी ससुराल में जाया करते थे, तो वे अपने साथ थोड़े से सत्तू ,नमक और गुड़ थैले में रख कर ले जाया करते थे।

वे बिटिया के घर का पानी तक नहीं पीते थे। भूख लगने पर वे वहां किसी कुएं पर जाकर डोरी से लोटे में पानी खींचकर उसमें सत्तू घोलकर 2 मिनट में उसका सेवन कर लिया करते थे। हमारे यहां प्रत्येक ऋतु की अलग-अलग सब्जियां हुआ करती थीं। आज वर्ष भर सारी सब्जियां उपलब्ध हैं जो व्यक्तियों के शरीर में कैंसर का कारण बन रही हैं। ये धरती में भारी केमिकल डालकर उसी तरह उगाई जा रही हैं जैसे दूध न देने पर इंजेक्शन लगाकर भैंस से दूध निकाल लिया जाता है।

भगवान कृष्ण की दिनचर्या मानव जीवन के लिए संदेश देती है। वे प्रात: काल उठकर मक्खन मिश्री खाया करते थे। खाली पेट मक्खन मिश्री को आयुर्वेद में डायबिटीज की औषधि बताया गया है और जो सुबह-सुबह मक्खन मिश्री खाते हैं डायबिटीज उनसे दूर रहती है। भगवान कृष्ण 125 वर्ष धरती पर रहे ,किंतु उनका एक भी बाल सफेद नहीं था। भगवान श्री कृष्ण नियमित रूप से निश्चित समय पर व्यायाम और ध्यान किया करते थे। इसलिए घाघ कहते हैं कि निश्चित समय शारीरिक अनुशासन का नाम है--

जबहिं तबहिं डंडे करे। ताल नहाइ ओस में परे। देव न मारें आपै मरै।।

धारोष्ण दूध का स्वाद उसका पान करने वाले ही जानते हैं। नए बच्चे तो दूध का स्रोत ही नहीं जानते। सुबह-सुबह ताजा निकला हुआ मठा, मक्खन और रात्रि को सोने से पूर्व दूध के सेवन में वैज्ञानिकता समाहित है। गांव में एक कहावत में सुनता आया हूं - **जो पियेगा मट्ठा। वह बनेगा पट्ठा।।** सुबह-सुबह मट्ठा शरीर में मोबी ऑयल का काम करता है और रात्रि को दूध का सेवन शरीर में जिस प्रोटीन विटामिन की कमी रह गई होती है उसकी पूर्ति कर भोजन को पचाने का कार्य करता है। मैं दिसंबर, 2000 में पुनश्चर्या पाठ्यक्रम में सरदार पटेल विश्वविद्यालय, आनंद (गुजरात) में गया। वहां गुजराती भोजनालय पर भोजन करने के लिए हमें बता दिया गया था। जब मैं पहले पहले दिन भोजन के लिए बैठा तो दोपहर के भोजन परोसने वाले बालक ने एक गिलास में छाछ और एक में पानी परोसा। अगले दिन से मैंने दोनों गिलासों में पानी के बजाय छाछ ही का सेवन किया। मैंने पाया कि छाछ से पचकर सारा भोजन शरीर को लगा और 21 दिन उपरांत जब मैंने अपना वजन किया तो पाया के 21 दिन में मेरे वजन में 9 किलो की वृद्धि हो गई है। तब मुझे मट्ठे की तासीर ज्ञात हुई।

आज उन लोगों का क्या कहें जो सुबह बिना कुल्ला किए तंबाकू का सेवन करते हैं या फिर चाय का। जबकि ये दोनों ही वस्तुएं हमारे देश की नहीं है। इससे उनके पेट में पहले से जमा मल सड़ने सड़ने लगता है जिससे उन्हें गैस की समस्या पैदा होती है। फिर डाक्टर और दवाइयाँ। गुटका सेवन करने वाले लोगों के मुंह की तरफ देखने का एवं उनसे बात करने का तो मन ही नहीं होता। मोती जैसे दांतों की कल्पना जैसे अतीत की बात हो गई है।

असल में आज हमारी दिनचर्या ही गड़बड़ा गई है। हमारे यहां ब्रह्म मुहूर्त में जागरण की सलाह दी गई है और इसी समय के लिए कहा गया है -

जो सोवै सो खोवै।
जो जागै सो पावै।

इसी समय मलयाचल की शीतल मंद सुगंध समीर का सेवन किया जा सकता है।

जगने के पश्चात् कवि घाघ ने आयुर्वेदिक सलाह देते हुए लिखा-

प्रात काल खटिया तें उठिकें पियै तुरंतै पानी।
ताके घर में वैद न आवै, बात घाघ नें जानी।।

सुबह-सुबह दो गिलास पानी पीने से पेट का मल पूरी तरह साफ हो जाता है और उदर के सारे अंग लीवर, किडनी,आंतें आदि स्वस्थ होकर अपना कार्य करने लगते हैं। बीमारियां दूर रहती हैं। विगत 30 वर्षों से मैंने नियमित प्रात: भ्रमण करने वाले प्रौढ़ एवं वृद्ध जनों को नीरोग देखा है।

हमारे घरों की रसोई में प्लास्टिक और अल्युमिनियम का उपयोग बढ़ गया है जो हमारे लिए जहर का कार्य कर रहा है। पहले हमारे घरों में लोहे की कड़ाही हुआ करती थी। इससे शरीर को आयरन मिलता था जो हीमोग्लोबिन का आधार है। प्लास्टिक एवं नॉन स्टिक बर्तनों को रसोई में होना ही नहीं चाहिए, लेकिन सुविधा के कारण हम उनके हानिकारक पहलुओं पर विचार ही नहीं करते। हमारी सभी परंपराएं वैज्ञानिक हैं। पहले पंगतों में पलाश के पत्तल - दोने, मिट्टी के घड़े, कुल्लड़, सकोरे शरीर के लिए लाभप्रद हुआ करते थे। आयुर्वेद के अनुसार पलाश का स्पर्श भी व्यक्ति को नीरोग रखता है। कांसे, पीतल, तांबे के बर्तन प्रत्येक घर में वांछनीय हैं।

अभी हमारे प्रधानमंत्री श्री मोदी जी ने मिलेट्स (मोटे अनाज) खाने का नारा दिया है ताकि हम स्वस्थ रह सकें और बीमारी में ली जाने वाली दवाइयों के बहाने हमारा पैसा विदेश में जाने से रुक सके। मैंने बचपन से देखा है कि गांव में सुबह-सुबह गेहूं चने (गोचना) की नमकीन मोटी रोटी बना करती थी। दही मट्ठा आवश्यकता अनुसार पड़ोसियों को दे दिया जाता था। दूध विक्रय की वस्तु नहीं थी। घी का सेवन यथेच्छ होता था और तदनुसार शरीर श्रम भी। मैं बचपन से कहावत सुनता आया हूँ - **खाऐ चना, रहै बना।** मैंने पाया है कि बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश में सुबह-सुबह स्वल्पाहार के रूप में अंकुरित या उबले चने ही चारों ओर दिखाई देते हैं। इस बहाने सुबह-सुबह पर्याप्त प्रोटीन शरीर में पहुंच जाता है।

आज एक तो पठनीयता का संकट उत्पन्न हो गया है और दूसरी ओर हमारी जीवन की मार्गदर्शक धार्मिक पुस्तकों को पूजा की वस्तु मानकर उन्हें धूप दिखाने या आरती करने की वस्तु मान लिया गया है जबकि **पुस्तक का धर्म है--पढ़ा जाना।** इससे जीवन अधिक भ्रमित होता चला गया, मूल्यहीन होता चला गया।

आयुष्मान भव, भाग- 2

कवि घाघ ने आयुर्वेद का भलीभांति अध्ययन कर उसका निचोड़ सामान्य कहावतों के रूप में प्रस्तुत किया है जिससे जनमानस लाभान्वित हो सके। उन्होंने खाद्य और अखाद्य दोनों को रोचक शब्दों में बांधा है। उन्होंने 12 महीनों के वर्जित खाद्य पदार्थों एवं कार्यों के विषय में लिखा है --

चैते गुड़ बैसाखे तेल। जेठ में पंथ आषाढ़ में बेल।।
सावन साग न भादों दही। क्वारें दूध न कातिक मही।।
अगहन जीरा पूष धना। माधै मिश्री फागुन चना।।
इन महीनन में छोड़ें जो। घाघ न कबहूं मांदें हों।।

इसी प्रकार वे 12 महीना के खाद्य पदार्थों की सलाह देते हुए लिखते हैं--

सावन हरैं भादो चीता। क्वार मास गुड़ खाहू मीता।।
कातिक मूली अगहन तेल। पूस में करै दूध सों मेल।।
माघ मासास घी खिचड़ी खाइ। फागुन उठ कें प्रात नहाय।।
चैत मास में नीम सेवती। बैसाखहि में खाइ बसमती।।
जेठ मास जो दिन में सोवै। ताको जुर असाढ़ में रोवै।।
खाइ कें मूतै सोवै बाऊं। काहे वेद बसावै गाऊँ।।

इसी प्रकार लोक में गरिष्ठ भोजन के विषय में एक दोहा प्रचलित है ---

जाको मारा चाहिए बिन मारे बिन घाव।
बाको यही बताइए घुइया पूरी खाव।।,

भारतीय वर्ष के प्रारंभिक महीने चैत्र में गुड़ी पड़वा को भारत में नीम की कोंपल और गुड़ की डली बांटने की परंपरा है। परंपरा नदी की भांति होती है जो कहीं कुछ छोड़ती है, कहीं से कुछ लेती है। परंपरा में अच्छी बातें शाश्वत रहती हैं, जो अनंत काल तक चलती रहती है लेकिन हमारे यहां बहुत सारी अच्छी बातों को केवल पूजा पाठ तक सीमित करके रहने दिया गया। जबकि वे मानव जीवन के हित के लिए बताई गई बातें थीं। आयुर्वेद कहता है कि गुड़ी पड़वा से लेकर 40 दिन तक प्रात: खाली पेट नीम की कोंपलों का सेवन किया जाए तो वह व्यक्ति वर्ष भर निरोग रहता है। उन दिनों नीम में कोंपल आ जाती हैं।

प्रकृति हमें सब कुछ देती है, किंतु हम उसके संकेत को नहीं समझते। वह ग्रीष्म ऋतु में ठंडी तासीर की वस्तुएं उगाती है और शीत ऋतु में गर्म तासीर की। लेकिन आजकल अधिक सभ्य समाज में कोल्ड ड्रिंक, आइसक्रीम बारहों महीने चलन में आ गए हैं। एक बार में यूनिसेफ की ट्रेनिंग में एक बड़े होटल में ठहरा हुआ था। दोपहर में भोजन के बाद लोग मिष्ठान्न की पंक्ति में लगे हुए थे। जब मैं मिष्ठान्न की टेबल पर पहुंचा तो मैंने देखा कि उन्होंने प्लेट में धुआं निकलते हुए गरम-गरम गुलाब जामुन और उसके बगल में आइसक्रीम रख दी। मैं चौका और मैंने पूछा तो वे मुझे गंवार समझ कर हंसे, किंतु मैंने निवेदन किया कि मुझे केवल गुलाब जामुन दीजिए। यदि यही आधुनिकता है तो यह आधुनिकता यह क्यों नहीं सोचती के पेट के अंदर ठंडी गर्म दोनों चीजें जाने से लीवर का क्या होगा!!! आज लोग सिविलाइज्ड तो हो गए हैं, किंतु कल्चर्ड नहीं रहे। आज बाजार में चाट के ठेलों पर लगी भीड़ को देखा जा सकता है। फास्ट फूड के नए-नए रेस्टोरेंट खुल रहे हैं। बुफे सिस्टम के स्वरुचि भोज को लोगों ने सब रुचि भोज बना डाला है। विपरीत स्वभाव की वस्तुओं का सेवन एक साथ करते और बीमार होते देखा गया है। मैंने अनेक बार देखा है कि लोग दही बड़े भी खा रहे हैं और रसमलाई भी। चाऊमीन और चोकोज के स्टालों पर तो क्या कहने!! भोजन के अंत में मैंने कई लोगों को कॉफी पीने के बाद आइसक्रीम खाते देखा है। मतलब यह कि लिफाफा दिया है अत: कोई चीज छूटनी नहीं चाहिए। हमने अपने पेट को कचरा पेटी समझ कर उसमें सब कुछ डालना स्वीकार कर लिया है। स्वाद के आगे हमें परिणाम की चिंता नहीं।

कल भुजरिया मिलने डॉक्टर शर्मा जी के घर गया। वे चाइल्ड

स्पेशलिस्ट हैं। मेरे सामने उनके पास एक 12 वर्षीय दुबला सा बच्चा आया। उसे उल्टी, दस्त और बुखार था। उन्होंने खान-पान के विषय में पूछा, तो साथ आए उसके पिता और बाबा से कहा कि इसका स्वाद बदलिए। यदि आपको पैसा ही खर्च करना है तो चाऊमीन पिज़्ज़ा बर्गर कुरकुरे मत खिलाइए। इनमें प्लास्टिक होता है। इनके स्थान पर फल लाकर खिलाने की आदत डालिए अन्यथा यह बड़ा होकर आपको कोसेगा कि मेरे दादा ने मेरा शरीर बेकार कर दिया। फिर मेरी ओर देखकर बोले --चतुर्वेदी जी, जब भी किसी का कोई बर्थडे होता है ,अगले दिन दो-तीन बच्चे इलाज करने के लिए मेरे पास आ जाते हैं; क्योंकि पता नहीं केक कब का बना होता है और उस पर आधी क्रीम लदी होती है।

वैसे भी आज हम चिकना खा रहे हैं, चिकना पहन रहे हैं और चिकने पर रह रहे हैं और चल रहे हैं। मोटा खाना भूल गए। भुना चना और सत्तू खाना भूल गए। हम घर में बैठे रहते हैं। गाड़ी में बैठकर ऑफिस जाते हैं, वहां भी बैठे रहते हैं और पल-पल पर चाय पीते हैं जिससे जल्दी ही डायबिटीज की गिरफ्त में आ जाते हैं। सिद्धांत है कि पैदल चलने से शरीर में इंसुलिन बनता है और शरीर का ग्लूकोस पचता है। किंतु अधिकांश लोगों को पैदल चलने में शर्म महसूस होती है। लेकिन जन्मदिन पर समाचार पत्रों में इन्हीं डायबिटिक लोगों के सुंदर फोटो छपते हैं और उनके नीचे शुभकामनाएं देने वालों की ओर से लिखा रहता है 'जीवेम् शरदः शतम्।'

मेरा मानना है कि प्रत्येक व्यक्ति को शरीर विज्ञान के विषय में थोड़ी बहुत जानकारी होनी चाहिए। हमारे यहां यह कहावत चली आई है कि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निवास होता है। आज मुहावरा बदल गया है। आज चकाचौंध के इस युग में यदि स्वस्थ मन होगा, मन अपने नियंत्रण में होगा तो शरीर भी स्वस्थ होगा। अत: एलोपैथी से आंती आए हुए लोग योग का सहारा लेने लगे हैं। योग हमारे भारतवर्ष के ऋषियों द्वारा दी गई ऐसी व्यवस्था है, ऐसी क्रियाएं हैं जिसके बारे में विषय में यह कहा जाता है - **हर्रा लगे न फिटकरी रंग चोखा आवे।** केवल हमें शरीर के लिए थोड़ा समय देने की आवश्यकता है। प्रात: काल प्रकृति के सान्निध्य में जाने की आवश्यकता है। ऑक्सीजन लेने की आवश्यकता है।

मैंने बचपन में अंग्रेजी की पुस्तक में एक छोटी सी कविता पढ़ी थी - Early to bed and early to rise. Makes a man healthy, wealthy and wise. प्रत्येक व्यक्ति को स्वास्थ्य, धन और बुद्धिमत्ता ही तो चाहिए। कवि घाघ भी यही सलाह देते हैं - **पहले जागै, पहले सोवै। जो वह चाहै वही होवै।।**

आज लोगों की दिनचर्या बदल गई है। जबकि इधर दस बजे तक सोने का विधान और उधर ब्रह्म मुहूर्त में उठने का विधान व्यक्ति को स्वस्थ रखता है। व्यक्ति को स्वास्थ्य धन और बुद्धि तीनों की प्राप्ति का यह कितना सुगम उपाय बताया है। आज व्यक्ति ऐसी मोटरसाइकिल हो गया है, जो चल रही है तब तो स्टार्ट है ही, किंतु जब खड़ी हुई है तब भी स्टार्ट है। अभिप्राय यह है कि वह ब्रह्म मुहूर्त में दिनभर की योजनाओं के पहले चिंतन करने के बजाय बहुत अधिक चिंतित रहने लगा है। भोजन करते समय भी वह मोबाइल पर बात करता है या कहीं किसी चिंता में डूबा हुआ भोजन करता है। उसे भोजन के स्वाद का ही पता नहीं है। एक बार मां आनंदमयी अपने प्रवचन में एक प्रसंग सुन रही थीं कि पत्नी ने पति को भोजन परोसा। पति तब तक दो रोटी खा चुका था। पत्नी ने सब्जी में नमक आदि के विषय में पूछा तो पति ने एक कौर तोड़ा और सब्जी में डूबा कर बोला - अभी बताता हूं। तो प्रश्न यह है कि वे दो रोटी किसने खाईं! मेरे पिता कृषक थे, किंतु वे हड़बड़ाहट में कोई कार्य नहीं करते थे। वे कहा करते थे - **सौ काम छोड़कर नहा ले। हजार काम छोड़कर खा ले।।** इसमें स्वास्थ्य का कितना बड़ा दर्शन है। क्योंकि स्नान और भोजन यह दोनों ही स्वास्थ्य से सीधे संबंध रखते हैं और आज व्यक्ति ये दोनों ही जल्दबाजी में काम की तरह निपटाता है। इसलिए अस्वस्थ रहने लगा है। वह वर्तमान में जीना ही भूल गया है। वह किसी कार्य को करते समय एकाग्र नहीं रह पाता है।

मैंने छोटी कक्षा में अंग्रेजी की एक कविता पढ़ी थी -

Work while you work, play while you play.
That is the way to be happy and gay.

एक समय में एक कार्य व्यक्ति को सफलता देता है। जीवन के आनंद का यही आधार है। स्वस्थ रहने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को दिनचर्या में अनुशासन आवश्यक है।

जब तक हम परिवेश के अनुकूल स्वयं को नहीं ढालेंगे, तब तक 'सर्वे भवंतु सुखिन: सर्वे संतु निरामया:' की कामनाएँ व्यर्थ हैं। घर में तुलसी का पौधा इसलिए लगाया जाता है कि वह शुद्ध एंटीबायोटिक है, किंतु हम उसे जल देना और उसकी आरती कर दीपक जलाना तो जानते हैं, किंतु सुबह-सुबह पानी के साथ उसके पत्तों का सेवन करना नहीं जानते। हमारे चारों ओर औषधीय पौधे, वनस्पतियां बिखरे पड़े हैं, किंतु हमें इनका ज्ञान नहीं। हम लहसुन खाना पसंद नहीं करते, लहसुन के बने गार्लिक पर्ल्स कैप्सूल बड़े गर्व के साथ सेवन करते हैं। मल मूत्र के आवेगों को कभी नहीं रोकना चाहिए अन्यथा किडनी पर विपरीत असर पड़ता है। इसकी सावधानी के लिए भी कवि घाघ ने चिंता की है -

आलस कभी न करिए यार। चाहे काम पड़े हों हजार।।
मल की शंका तुरत मिटावे। वही सभी सुख पुनि- पुनि पावे।।

अंत में कवि घाघ की एक बात और उल्लेखनीय है--

ज्यादा खाए जल्द मर जाई। सुखी रहै जो थोड़ा खाई।।

लेखक- वरिष्ठ साहित्यकार एवं पूर्व प्राध्यापक हैं।
सम्पर्क : बी- 113 सिसोदिया कॉलोनी (शहीद पार्क के पास) गुना 473301
चलभाष 9425618652

■

आलेख

योग विद्या एवं प्राकृतिक चिकित्सा सार

डॉ. इस्माइल टाक

यह धरती भौतिक तत्वों से एवं मानव शरीर भौतिक रासायनिक तत्वों से बनी एक सर्वश्रेष्ठ कृति है। जिसे स्वस्थ एवं निरोग रखना प्रत्येक मनुष्य का प्रथम कर्तव्य एवं धर्म है। वर्तमान समय में जीवन की जटिलताएँ इतनी बढ़ती जा रही है कि मनुष्य विभिन्न शारीरिक एवं मानसिक रोगों से आक्रान्त हो रहा है। जहाँ जनजीवन में सामान्यत: नये-नये रोग विकसित हो रहे हैं, वहीं चिकित्सा पद्धतियों का भी विस्तार हो रहा है। एक रोग का उपचार दूसरे अन्य रोगों को जन्म देता है और औषधियों की संख्या भी बढ़ रही है।

प्राचीन काल से भारत में विभिन्न चिकित्सा पद्धतियाँ प्रचलित है, रोगों के विस्तार होने के कारण कुछ नयी पद्धतियाँ भी सामने आ रही हैं, तथा सभी चिकित्साशास्त्रों के पृथक् पृथक् गुण और दोष भी है। कुछ पद्धतियाँ ऐसी है जिनसे रोग तो शीघ्र ठीक हो जाते हैं, परन्तु उनमें स्थायित्व नहीं रहता। कुछ ऐसी भी पद्धतियाँ है, जिनके उपचार से निर्दिष्ट रोग तो ठीक हो जाता है पर दूसरा रोग पनप जाता है, इसके साथ ही भारत की प्राचीन पद्धतियों में ऐसे भी उपचार है, जो रोग के गुण दोषों को साम्यावस्था में लाकर स्थायी लाभ एवं आरोग्य प्रदान करते हैं।

आयुर्वेद के अनुसार स्वस्थ शरीर का लक्षण है आत्मा, मन एवं इन्द्रियों के प्रसन्न रहने के साथ-साथ शरीर स्थित दोष-अग्नि, धातु, मल एंव क्रियाओं का सम-अवस्था में रहना-

समदोषः समाग्रिश्च समधातु मलक्रियः।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनः स्वस्थ इत्यभिधीयते।।

समत्व ही योग का एवं सृष्टि व्यवस्था का मूल आधार है। योग साधना में भी रोगो को योग का सर्वप्रमुख विघ्न माना गया है। अतएव लौकिक या अलौकिक पुरुषार्थ के निष्पादन में समर्थ बने रहने के लिये आरोग्यवान् आधि-व्याधि शून्य बने रहना अत्यन्त आवश्यक है।

प्राकृतिक चिकित्सा और योग विद्या के द्वारा भौतिक शरीर के दोषों को दूर करने के लिये-षटकर्म, आसन प्राणायाम, मुद्रा, धारणा एवं ध्यान का आलम्बन लेना चाहिये।

वमनम् कफ नाशाये, वाता: नाशाये मर्दनम् !
शयनम् पित: नाशाये, ज्वर नाशाये लंघनम् !!

षट कर्म (धौति, वस्ति, नैति, त्राटक, नौलि तथा कपालभाति) का उपयोग प्रवृद्ध कफ-दोष को दूर करके वात्, पित्त एंव कफ इन तीनों दोषों को समभाव से स्थापित करने के लिये होता है। यदि कफ दोष बढ़ा न हो तो जिस अंग में विकार या आसक्ति प्रतीत हो उसी अंग को बलवान बनाये या उक्त अंग से विकार को दूर करने के लिये षट्कर्मो में से यथावश्यक दो या तीन अथवा चार कर्मों का अभ्यास करना चाहिये।

धौति कर्म- कण्ठ से आमाशय तक के मार्ग को स्वच्छ करके सभी प्रकार के कफ रोगों का नाश कर देता है। यह विशेष रूप से कफ प्रधान कास, श्वास, प्लीहा एवं कुष्ठरोगों में लाभकारी है।

वस्ति-कर्म- द्वारा गुदामार्ग एवं छोटी आंत के निचले हिस्से की सफाई हो जाती है इससे अपानवायु एवं मलन्त्र के विकार से उत्पन्न होने वाले रोगों का शमन हो जाता है। आंतो की गर्मी शान्त होती है कब्ज दूर होती है। आँतों में स्थित संचित दोष नष्ट होते हैं। जठराग्नि की वृद्धि होती है। अनेक उदर रोग नष्ट होते है। वस्ति-कर्म करने से वात-पित्त एवं कफ से उत्पन्न अनेक रोग तथा प्लीहा और जलोदर रोग दूर होते हैं।

नेति-कर्म- नासिका मार्ग को स्वच्छ कर कपाल-शौधन का कार्य करता है। यह विशेष रूप से नेत्रों को उत्तम दृष्टि प्रदान करता है और

गले से ऊपर होने वाले दाँत, मुख, जिह्वा, कर्ण एवं शिरोरोगों को नष्ट करता है।

त्राटक-कर्म- द्वारा नेत्रों के अनेक रोग नष्ट होते हैं। एवं तन्द्रा, आलस्य आदि दोष नष्ट होते है।

नौलि-कर्म- उदररोग एवं अन्य सभी दोषों का नाश करने के लिये नौलिक्रिया प्रमुख है। मन्दाग्नि को नष्ट कर जठराग्नि की वृद्धि करता है। पचाने की शक्ति सशक्त करता है तथा वातादि दोषों का शमन होने से चित्त सदा प्रसन्न रहता है।

कपालभाति- विशेष रूप से कफ-दोष का शोषण करने वाली है। षट्कर्मो का अभ्यास करने से जब शरीर के अन्तर्गत कफ-दोष मलादि क्षीण हो जाते है, तब प्राणायाम का अभ्यास करने से अधिक शीघ्र सफलता मिलती है।

जिन्हे पित्त की अधिक शिकायत रहती है उनके लिये कुंजल क्रिया लाभदायक रहती है। इस क्रिया में प्रात: शौच से निवृत्त होकर पर्याप्त मात्रा में नमक मिश्रित गुनगुना जल पीकर फिर वमन कर दिया जाता है। जिससे आमाशय पित्त का शौधन होता है। जिन्हें मन्दाग्नि की शिकायत है या जिनका स्वास्थ्य उत्तम भोजन करने पर भी सुधरता नहीं है, उन्हें अग्निसार नामक क्रिया का अभ्यास करना चाहिये। इस क्रिया में नाभि ग्रन्थि को बार-बार मेरु-पृष्ठ में लगाना होता है। इसके अभ्यास में परिपक्वता प्राप्त होने से सभी प्रकार के उदर रोगों को दूर करने में सहायाता मिलती है।

आसन- का अभ्यास शरीर से जड़ता एवं आलस्य को दूर करके सम्पूर्ण स्नायु-संस्थान एवं प्रत्येक अंग को पुष्ट बनाने के लिये होता है। आसनों के अभ्यास से शरीर के सभी संस्थानों में एवं सूक्ष्मातिसूक्ष्म नाड़ियों में रक्त पहुँचाता है। सभी ग्रन्थियाँ सुचारू रूप से कार्य करती है। स्नायु संस्थान बलवान् हो जाने पर साधक काम, क्रोध, भय आदि के आवेगों को सहने में समर्थ होता है। वह मानस रोगी नहीं बनता। शरीर का स्वस्थ होना मस्तिष्क, मेरूदण्ड, स्नायु-संस्थान, हृदय एवं फेफड़े तथा उदर के बलवान् होने पर निर्भर है। अत: आसनों का चुनाव इन पर पड़ने वाले प्रभावों को दृष्टि में रखकर करना चाहिये।

ध्यानात्मक आसनों- को जैसे पद्मासन, सिद्धासन आदि को सर्वरोगनाशक इसलिये कहा जाता है कि इन आसनों से ध्यान या जप में बैठने पर शरीर में साम्यभाव, निश्छलता, शान्ति आदि गुण आ जाते हैं जो भौतिक स्तर पर सत्वगुण की वृद्धि करने में सहायक होते है। आरोग्य की दृष्टि से किये जाने वाले आसनों में सर्वांगासन, मत्स्यासन, हलासन, भुजंगासन, शलभ, धनु, पश्चिमोत्तानासन, मत्स्येन्द्र, गोरक्ष, मयूर, कुक्ट, वज्रासन, पद्मासन मुख्य है। आसन धीरे-धीरे किए जाए जिससे अगों एवं नाड़ियों में तनाव, स्थिरता, संतुलन, सहनशीलता एंव शिथिलता आ सके। अपनी पूर्ववत् स्थिति में धीरे-धीरे ही आना चाहिये। जो अंग रोगी हो, उस पर भार डालने वाले आसनों का अभ्यास अधिक नहीं करना चाहिये। जैसे अल्सर या जो महिलायें मासिक धर्म से युक्त है, उन्हे उन दिनों पेट के आसन नहीं करने चाहिये। जिस आसन का प्रभाव जिस ग्रन्थि या नाड़ी चक्र पर पड़ता है, आसन करते समय वहीं ध्यान केन्द्रित करना चाहिये। एक आसन के बाद उसका पूरक आसन भी करना चाहिये जैसे पश्चिमोत्तासन का पूरक ऊष्ट्रासन या पूर्वोत्तानासन है। सर्वांगासन का पूरक मत्यासन है। सूर्य नमस्कार को अन्य आसनों के अभ्यास के पूर्व कर लेना लाभकारी है। यह अभ्यास अन्नमय कोश को पुष्ट करता है। स्थूल शरीर निरोग होता है।

प्राणायाम का अभ्यास शरीरस्थ सभी दोषों का निराकरण कर प्राणमयकोष एवं सूक्ष्म शरीर को निरोग तथा पुष्ट बनाता है। नाड़ी-शौधन का अभ्यास करने के बाद कुम्भक प्राणायामों का अभ्यास करना उचित होगा। सभी प्राणायाम युक्तिपूर्वक शनै-शनै ही करने चाहिये। रेचक एवं पूरक सभी प्राणायामों को धीरे-धीरे करनी चाहिये, भस्त्रिका प्राणायामों को छोड़कर प्रत्येक कुम्भक की अपनी-अपनी दोषनाशक विशेष शक्ति होती है। अत: दोष का विचार करके ही उसके दोषनाशक कुम्भक का अभ्यास करना चाहिये।

सूर्यभेद प्राणायाम- पित्रवर्धक, जरादोषनाशक, वातहर, कपालदोष एवं कृमि दोष को नष्ट करने वाला है।

उज्जायी प्राणायाम- कफरोग, क्रूरवायु, अजीर्ण, जलोदर आमवात, क्षय खाँसी, ज्वर एवं प्लीहा को नष्ट करता है। स्वास्थ्य एवं पुष्टि की प्राप्ति के लिये उज्जायी प्राणायाम का विशेष रूप से अभ्यास करना चाहिये।

शीतली शीतकारी प्राणायाम्- अजीर्ण, कफ, तृषा, गुल्म, प्लीहा एवं ज्वर को नष्ट करता है।

भस्त्रिका प्राणायाम- वात-पित्त कफ हर शरीर में अग्निवर्धक एवं सर्वरोगहर है।

मुद्रा- महामुद्रा, खेचरी, उड्डीयान बन्ध, जालन्धर बन्ध, मूलबन्ध, अश्वनीमुद्रा, शाम्भवी मुद्रा, काकी मुद्रा एवं विपरीत करणी मुद्रा मुख्य हैं।

महामुद्रा- कुष्ठ, क्षय, अजीर्ण आदि रोगों एवं सभी दोषों को नष्ट करती है। इसके अभ्यास से पाचन शक्ति की प्रचण्ड वृद्धि होकर विष को भी पचाने की क्षमता प्राप्त होती है। महामुद्रा के साथ महाबन्ध या महावेध का भी अभ्यास किया जाता है।
इन तीनों के अभ्यास से बुढ़ापा दूर होता है। एवं अनेक शारीरिक सिद्धियों की प्राप्ति होती है।

खेचरी मुद्रा- इसके अभ्यास से शरीर में अमृत तत्व की वृद्धि होती है। सिद्धियों की प्राप्ति होती है। तथा देह-क्षय की प्रक्रियारूक जाती है।

उड्डीयान का अभ्यास- उदर एवं नाभि से नीचे स्थित अंगो के रोगों को दूर कर पुरुषत्व की अभिवृद्धि करता है। जननांग एवं प्रजननांग के रोगों से पीड़ित नर-नारियों को उड्डीयान बन्ध का विशेष अभ्यास करना चाहिये।

जालन्धर बन्ध– से कण्ठ रोगों एवं शिरोरोगों का नाश होता है।

मूलबन्ध– का अभ्यास गुदा एवं जननेन्द्रीय पर प्राण एवं अपान पर नियन्त्रण प्रदान करता है। उड्डीयान एवं जालन्धर बन्ध का अभ्यास तो प्राणायाम के समय ही किया जाता है, परन्तु मूलबंध का अभ्यास सतत करना चाहिये। विपरीत करणी मुद्रा का ठीक-ठीक अभ्यास वृद्धावस्था को दूर कर युवावस्था प्रदान करता है।

उपरोक्त मुद्राओं के अतिरिक्त घेरण्ड संहिता की कुछ अन्य मुद्राओं का अभ्यास भी रोगनाश व युवा अवस्था बनाये रखने के लिये है।

अश्विनी मुद्रा– अकाल मृत्यु को दूर करने वाली, गुप्तरोगों को दूर करने वाली तथा बल एवं पुष्टि प्रदान करने वाली है।

पाशिनी मुद्रा– से बल एंव पुष्टि की प्राप्ति होती है।

तड़ागी एंव भुजांगिनी मुद्रा– ये दोनों ही उदर के अजीर्ण, रोग को नष्ट कर दीर्घ जीवन प्रदान करती है।

ध्यान– से शरीर, प्राण, मन, हृदय एवं बुद्धि में शान्ति पवित्रता एवं निर्मलता आती है। **'जैसा होवे मन वैसा होवे तन,'** मैं निरोग हूँ स्वस्थ हूँ ऐसा चिन्तन निरन्तर दृढतापूर्वक करते रहने से व्यक्ति आरोग्य बना रहता है। इसे आत्मसम्मोहन (ऑटो सजेशन) की विधि कहते है। इसी प्रकार योगनिद्रा में प्रबल संकल्पशक्ति के द्वारा असाध्य शारीरिक व मानसिक रोगों से मुक्ति मिल सकती है।

रोग निवारण के लिये प्रमुख बात यह है कि रोग होने पर उसका चिन्तन ही न करे, उसकी परवाह ही न करे। रोग का चिन्तन करने से रोग बद्धमूल हो जाता है एवं व्यक्ति का मनोबल दुर्बल हो जाता है। मानसिक रोगों का संकल्पशक्ति एंव प्रज्ञा बल से निवारण करना चाहिये एवं शारीरिक रोगों का औषध से। इन रोगों के उन्मूलन में यौगिक साधनों का अद्भुत योगदान रहा है।

शारीरिक एवं मानसिक रोगों से मुक्ति चाहने वालों को योगक्रियाओं का अभ्यास करने के साथ-साथ रोगोत्पादक सभी मूल कारणों का त्याग करना चाहिये तथा अपने लिये अनुकूल एंव चिकित्साशास्त्र द्वारा निर्दिष्ट सात्विक पथ्य, सदाचार एवं सत्कर्म का सेवन करना चाहिये। यथासम्भव अनिष्ट चिन्तन से बचना चाहिये। सम्पूर्ण दु:खों का व रोगों का मूल कारण अज्ञान है। नासमझी है।

1. प्राकृतिक चिकित्सा के आधारभूत मौलिक सिद्धान्त–

सभी रोग एक होते है, सभी रोगों के कारण एक होते है व सभी रोगों की चिकित्सा एक होती है। प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान का एक अटल सिद्धांत है कि वातावरण जन्य परिस्थितियों और दुर्घटना (चोट चपेट) को छोड़कर शेष रोगों का मूल कारण एक ही होता है। जो कि मानव शरीर में स्थित विजातीय द्रव्यों का संग्रह ही अनेक रोगों के रूप में विभिन्न नामों से प्रकट और विख्यात होते है। सारे रोग अनेक होते हुये भी वस्तुत: एक ही होते है, केवल उनके रूप और प्रकार में भिन्नता होती है। एक सत्यवस्तु जिस प्रकार विभिन्न रूपों में प्रगट होती है, एक स्वर्ण जिस प्रकार विविध नाम और रूप के आभूषणों में प्रदर्शित होता है, उसी प्रकार प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान का यह एक अटल सिद्धान्त है कि मानव शरीर में स्थित एक ही विजातीय द्रव्य अनेक रोगों के रूप में तथा विभिन्न नामों से प्रगट और विख्यात होता है। उपर्युक्त भारतीय संस्कृति के सिद्धान्तानुसार मानव शरीर एक और अभिन्न होता है। समुचा मनुष्य एक और अभिन्न है। सारा विश्व एक और अभिन्न है। अखिल ब्रह्माण्ड एक और अभिन्न है। सारे ब्रह्माण्ड को एक नियम के सूत्र में बांधने वाली सत्ता की शक्ति एक और अभिन्न है, और यही 'सर्वखल्विंद ब्रह्म का अर्थ है।' एकता का ही यही दार्शनिक सिद्धान्त, प्राकृतिक चिकित्सा दर्शन का भी प्रमुख सिद्धान्त है।

रोगों का कारण एक ही है शरीर में दूषित मल। अप्राकृतिक जीवनयापन जनित द्रव्य को प्राकृतिक चिकित्सा में विजातीय द्रव्य कहते हैं। यह विजातीय द्रव्य ठोस-(कफ) द्रव-(पित्त), गैस- (वात) के रूप में होते है। यह भी अविभाज्य है। जैसे जल जम कर बर्फ बनता, जल वाष्पित होकर गैस बनती है और गैस वापस जल व जल से बर्फ बनता है। अत: प्राकृतिक चिकित्सा में रोग का कारण एक ही है।

सभी रोगो का इलाज विजातीय पदार्थो का निष्कासन व सही आहार विहार होता है। बुखार, जुकाम, गठिया, मधुमेह, उच्च रक्तचाप, दस्त, बवासीर आदि रोग एक दूसरे से भिन्न है लेकिन युक्त आहार, उपवास से जीवनी शक्ति को बढाना, जलोपचार, मिट्टी पट्टी, एनिमा, मालिश, सेक, भाप, लपेट, पाद स्नान आदि से मल मार्गों को पूर्णत: खोलकर उनको क्रियशील कर देना प्राकृतिक चिकित्सा के कार्य हैं ताकि वे शरीर में उपस्थित विजातीय दृव्य मल का बहिष्कार करने में सफल हो सकें। इस तरह देखेंगें कि संसार के सभी रोग वास्तव में एक ही है तथा सभी रोगों का कारण भी एक ही है एवं सभी रोगों की चिकित्सा भी एक ही है।

2. रोग के कारण जीवाणु-कीटाणु नहीं–

जिनका खानपान नियमित और प्राकृतिक है उनके निर्मल शरीर में संसार के कीटाणु-जीवाणु एक साथ मिलकर भी रोग उत्पन्न नहीं कर सकते बल्कि वह हमारे शरीर के अनगिनत स्वास्थ्य कोष के रूप में बदल जायेंगे जिनसे शरीर का निर्माण हुआ है किन्तु यदि जिनका आहार विहार अनियमित व अप्राकृतिक है उनके शरीर में कीटाणुओं के पोषण योग्य मल विद्यमान रहता है जिसमें रोगाणु अवश्य उत्पन्न होंगे, पनपेंगे तथा वृद्धि प्राप्त करेंगे। अत: विजातीय पदार्थ (मल) ही कीटाणु के कारण है। जो विजातीय तत्व से मुक्त होंगे उन पर प्राकृतिक नियम के अनुसार कीटाणुओं का आक्रमण होना असम्भव है।

अगर किसी भी शरीर में जीवाणु-कीटाणु पाये जाते हैं। तो इस बात की सूचना है, कि उन जीवाणुओं कीटाणुओं की खुराक उस शरीर में है। जीवाणु-कीटाणु शरीर में जीवनी शक्ति के ह्रास व विजातीय पदार्थो के जमाव के पश्चात आक्रमण कर पाते है। जब शरीर में उनके रहने लायक अनुकूल वातावरण व उनकी खुराक तैयार हो जाती है। अत: रोग

का मूल कारण विजातीय पदार्थ है जीवाणु-कीटाणु नहीं। जीवाणु कीटाणु द्वितीयकरण होते है। रोगी अवस्था में जीवाणु-कीटाणु पाये जाते है।

3. तीव्र रोग शत्रु नहीं, मित्र होते हैं-

एक प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक का कथन है- तुम मुझे ज्वर दो मैं तुम्हे स्वास्थ्य देता हूँ अर्थात् मल पूरित शरीर को मल रहित करने के लिये ज्वरादि तीव्र रोग ही एक मात्र सच्चा उपाय है। शरीर में सदैव विजातीय द्रव्य (मल) उत्पन्न होता रहता है, जिसको हमारे शरीर के मल मार्ग (रोमकूप, गुर्दे, गुदा, फेफडे आदि) प्रतिदिन निकालते रहते हैं। यदि किसी कारण से उस मल को बाहर निकल जाने का रास्ता न मिले तो शरीर रोगग्रस्त होकर विजातीय तत्व बाहर निकालता है अत: आवश्यकता पड़ने पर मनुष्य के शरीर का रोगग्रस्त होना अत्यन्त आवश्यक है। जैसे-प्रकृति को पेट में स्थित मल धोना है तो उल्टी, दस्त, फोड़े आदि रोग पैदा करता है, मस्तिष्क विकारों को साफ करना है तो जुकाम से नाक व मुँह के रास्ते मल निकालता है। रोग होने पर हमें अपनी गलतियों पर निगाह दौड़ानी चाहिये तथा रोगी बनकर प्रायश्चित भी करना चाहिये। तीव्र रोग शरीर के उपचारात्मक प्रयास है। तीव्र रोगों के गलत उपचार और दमन से जीर्ण रोग पैदा होते है। तीव्र रोग इंगित (सूचना) करते हैं कि शरीर में ठीक होने की शक्ति है। जिसे हम रोग कहते है वह वास्तव में चिकित्सा है। इसलिये इन रोगों को शरीर का मित्र भी कहते हैं।

4. प्रकृति स्वयं चिकित्सा है-

आरोग्य लाभ की प्राकृतिक प्रणाली का अर्थ भली भांति समझने के लिये इसके आधारभूत सिद्धान्तों को मन में अच्छी तरह बैठा लेना आवश्यक है। शरीर अपनी स्वच्छता पुननिर्माण और क्षति पूर्ति-जैसी कुछ प्रक्रियाओं द्वारा प्राकृतिक रूप में स्वास्थ्य-प्राप्ति का निरन्तर प्रयत्न करता रहता है। घावों को भरकर और टूटी हुई अस्थि को जोडकर तथा ऐसे ही कफ को खांसी के जरिये बाहर निकालकर, जहरीली वस्तु पेट में जाने पर उल्टी के द्वारा निकाल प्रकृति अपनी क्षति पूर्ति की प्रवृति का परिचय स्पष्ट रूप से दे देती है। जिस शक्ति के द्वारा सब पदार्थों का नियमन होता है, वह सर्वदा कार्यरत रहती है और उसके आभाव में जीवन का अस्तित्व क्षणभर भी स्थिर नहीं रह सकता। यह मानव शरीर ही नहीं बल्कि पृथ्वी पर विद्यमान हर एक पदार्थ और जीवधारी के अन्दर कार्य करती रहती है और हम चाहे जो कुछ करें, सोचें या विश्राम रखें, यह अपना काम बराबर करती जाती है।

यह पद्धति इस बात की असंदिग्ध रूप से शिक्षा देती है कि शरीर में जो भी विकार या बीमारी होती है, वह वस्तुत: शरीर के प्राकृतिक रूप में आत्म-परिष्कार का प्रयत्न मात्र है।

प्रकृति की इस शक्ति के साथ मिलकर कार्य करना या उसके विरूद्ध आचरण करना बहुत कुछ हमारी इच्छा पर निर्भर है, पर यदि इस विषय पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया जाये तो प्रकृति के साथ मिलकर काम करना ही हमारे लिये श्रेयस्कर होगा, इसलिये उपचार सम्बन्धी जो प्रणाली काम में लायी जाये उसका शरीर-विज्ञान के सिद्धान्त की दृढ़ नीव पर टिकना आवश्यक है और जिसे हम शरीर का प्राकृतिक नियम समझ रहे है उसके कार्यान्वित होने में किसी प्रकार की बाधा नहीं आनी चाहिये। इसी उदेश्य की पूर्ति के लिये तीव्र रोगो में शरीरिक क्रिया की दृष्टि से शरीर को पूर्ण विश्राम की जरूरत मालूम होती है, खाने से परहेज करना चाहिये और जीर्ण रोगों में विकार को बाहर निकालने के लिये प्रकृति के सहायता देने के विचार से आवश्यकता के अनुसार या तो उपवास करे या फल अथवा शाक का रस लेकर आंशिक उपवास करे। स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करने वाला अपने को इस भुलावे में नहीं रखे कि निरोग करने की शक्ति उपचार में आरोग्यता पर हमेशा प्रकृति का ही विशेषाधिकार रहता है।

प्राकृतिक चिकित्सा को जीने की कला कहना उपयुक्त होगा। यह चिकित्सा प्रचलित चिकित्सा पद्धतियों से सर्वथा भिन्न है। दीर्घायु युक्त स्वास्थ्य एवं आनन्दमय जीवन बिताने की कला है। मानव प्रकृति के विरूद्ध चलने पर रोगी हो जाता है किन्तु प्रकृति के नियमों का पालन करके स्वास्थ्य को पुन: सुरक्षित कर सकता है। प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने से रोग होते ही नहीं है। इस चिकित्सा का उद्देश्य रोग का कारण शरीर में स्थित विजातीय तत्व का बहिष्कार करके रोगी का शरीर निर्मल करना है।

प्राकृतिक चिकित्सा में पंच तत्वों (धूप, पानी, मिट्टी, हवा) और रामनाम जो इस शरीर का जीवन है, से इलाज होता है। इस चिकित्सा प्रणाली का पथ इतना सहज और सुगम है कि एक बार इसके आश्रय में आने के बाद हर व्यक्ति इसका सच्चा अनुरागी और अनुगामी बन जाता है। अच्छे स्वास्थ्य की पहचान है व्यक्ति का निरोग होना, शरीर में विजातीय तत्वों का न होना ही अच्छा स्वास्थ्य कहलाता है। शरीर, मन और आत्मा सहज व शांत हो तो व्यक्ति अपने को स्वस्थ कह सकता है। प्राकृतिक नियमों का पालन करके व्यक्ति उसकी छत्रछाया में निरोगी व स्वस्थ जीवन यापन कर सकता है।

पता - आरोग्य विहार 33/101, वरूण पथ,
मानसरोवर, जयपुर (राज.) मो. नं. 94147 75134

पुस्तक - समीक्षा

'कला समय' पत्रिका में कला, संस्कृति, साहित्य, इतिहास पुरातत्व, लोक साहित्य, पर्यटन, गीत, ग़ज़ल, कविता एवं समसामयिक इत्यादि विषयों पर प्रकाशित पुस्तकों की समीक्षा प्रकाशित की जाती है। प्रकाशनार्थ समीक्षा के साथ पुस्तक की एक प्रति भेजना आवश्यक है। साथ ही समीक्षा दो पृष्ठों से अधिक की नहीं होना चाहिए। **-संपादक**

आँख में अंजन, दाँत में मंजन

डॉ. सुमन चौरे

आँख में अंजन, दाँत में मंजन,
नितकर, नितकर, नितकर।
नाक में अँगुली, कान में काड़ी,
मतकर, मतकर, मतकर।

ऐसी ही कई अनेक सारगर्भित सूक्तियाँ हमारी नानी-दादियों ने कितनी सहजता से और न जाने कब और कैसे हमें सिखा दी। इसका हमे कभी पता ही नहीं चला। कभी रात पड़े चिमनी के उजाले में आँगन में नन्हों मुन्नों के बीच बैठी आजी माँय ने कथा-वार्ता के माध्यम से शिक्षाएँ दी, तो कभी कुएँ पर नहलाते-नहलाते माँ ने सब दैनिक चर्याओं का जान दे दिया। क्या करना है, और क्या नहीं करना है।

तथाकथित निरक्षर अप्पढ़ कहलाने वाले इन लोगों ने जीवन को पूरी तरह **'निरोगी काया और संतोषी माया के साथ जिया।'** छोटी-मोटी बीमारियों को तो ये लोग चुटकियों में ठीक कर लेते थे। बड़ी ही चिकित्साविद् चिकित्सा शास्त्री थी, हमारी पुरानी पीढियाँ। इन्होंने कभी डॉक्टर-वैद्य से नाता ही नहीं रखा; किन्तु आज क्या हो गया, सदियों के अनुभवों के वही सूत्र वर्तमान में निरर्थक क्यों सिद्ध हो रहे हैं। जिन नुसखों से हम ठीक हो जाते थे, अब उन्हीं नुसखों के उपयोग अपने बच्चों पर करने में क्यों कॉप उठते हैं।

तब बचपन में खूब खेलते थे, पूरे गाँव, खेत-बाड़ी में दौड़ा-दौड़ी। गाँवों में हरी धास के गलीचे वाले बगीचे तब कहाँ हुआ करते थे प्राकृतिक उब्बड़-खाब्बड मैदान हुआ करते थे और जब कभी गिरे गहरी चोट लगी, तब ही घर खबर पहुंचती थी। आजी माँय तुरत हल्दी का घोल बनाती, साफ कपड़ा उसमें डुबोकर खून रिसते घाव को साफ कर, उसमें एक चुटकी हल्दी इतनी जोर से दबा देती थी कि उस समय तो असह पीड़ा और चरपराहट होती थी, लेकिन फिर तो पता ही नहीं चलता था कि घाव कब भर गया। थोड़ी बहुत लगी चोट की तो घर खबर ही नहीं होने देते थे। जहाँ गिरे और खरोंच से थोड़ा खून निकला, वहीं से थोड़ी-सी धूल उठाई, दोनों हथेलियों में छानकर उसे महीन किया और चोट पर धूल लगाई, खून सूखा...। एक दो दिन में कब नई पपड़ी आ जाती थी, याद ही नहीं रहता था। खेलते-खेलते किसी के घर आँगन में गिरे तो चुपचाप से माचिस की बारूद वाली पट्टी निकाली, घोट पर चिपकाई और सब ठीक-ठाक हो जाया करता था। हमारी आजी माँय सिखाया करती थीं जरा-जरा सी बात में डरना नहीं, अपने आप उपचार कर लेना चाहिए। सब जानते हैं, पशु पक्षी भी तो अपनी चोंटे स्वयं ही ठीक कर लेते हैं।

आजी माँय स्वयं ही प्राकृतिक साधनों और जड़ी-बूटियों से औषधियाँ तैयार कर लेती थीं। दीपावली के कुछ दिन पूर्व से ही उनके पास संदेश आने शुरू हो जाते थे, ''माँय हमारी बहू का पैर भारी छेऽ'' तो कोई खबर करता 'माँय अपनी बेटी आशा से है।' माँय उत्तर में यही कहती थी, ''डिब्बी साफ़-सूफ कर, दे जाना।'' दीपावली के दिन माटी का बड़ा दिया पानी में भिगोकर, संजा पड़े उसमें नये कपास की लम्बी बत्ती रखती थी। घर की घाणी का तिल्ली का शुद्ध तेल होता था। लक्ष्मी पूजा के समय जलाया गया वह दीपक रात भर जलता था। पूजा के बाद माँय पीतल की साफ थाली दीपक की लौ पर ऐसे तिरछी जमाती थी कि बत्ती का काजल उस पर जमे। फिर हाथ जोड़कर प्रार्थना करती या कहें साबर मंत्र से काजल को अभिमंत्रित करतीं

ऑजणेऽ कॉजणऽ बाधा भाँजणेऽ
भूवन भास्कर ज्योति आपणेऽ।

हे भगवान् भुवन भास्कर! कृपा करें। कान से आँखों की बाधा दूर करें और आप की ज्योति जैसी ज्योति प्रदान करें।

बड़ी उत्सुकता लिए हम रात देर सोते। हम प्रात: जरा जल्दी उठकर देखते थे, तो देखते ही रह जाते कि थाली पर बड़े-बड़े काजल के पहाड़ बन गए है। आजी माँय बड़ी सावधानी से साफ थाली में काजल निकालकर गाय के मक्खन से खूब फेंटती थीं। वे इस वक्त बहुत ही सावधानी रखती थी नहाकर धुली साफ साड़ी पहनती थीं, ताकि ऐसा न हो कि साड़ी पर चिपका कोई कण काजल में जा गिरे। वे साफ-सुथरी जगह में बैठती थी कि कहीं से धूल का कोई कण आकर काजल में न गिर जाय।

वे 'दसी कपूर' भी इतना महीन फैटती थी कि काजल मक्खन जैसा मुलायम हो जाता था। काजल बनाने की प्रक्रिया का सबसे अहम हिस्सा होता है उसका फेंटना। फेटते-फेटते लुग्धी बनने लगती थी। परीक्षण के लिए इसे पानी में डाला जाता था। इस तरह काजल बनकर तैयार हो जाता।

इस काजल को वे पुन: भगवान के सम्मुख रखकर नेत्र ज्योति बढ़ाने का वरदान माँगती थी। गुणवत्ता की दृष्टि से काजल कैसा बना है? वे परीक्षण के तौर पर इसे स्वयं अपनी आँख में लगाती थी। इस परीक्षण से वे, पहले यदि कोई कमी-बेसी होती तो, इसे दूर कर लेती थी। आँख में काजल पहनते ही टप टप आँसू टपक पड़ते थे। एक तो शुद्ध देसी कपूर

और साथ में गाय का मक्खन। थोड़ी ही देर में तो आँखों में बहुत ठंडक महसूस होने लगती थी। आजी माँय आवाज देती थीं, 'कौन बहादुर बच्चा है?' किसको ता जिंदगी बिना चश्मे के पढ़ना है?, किसको ज्यादा दूर तक देखना है, किसको सुन्दर दिखना है? जल्दी आओ, मैं आँख बन्द करती हूँ। इधर उनका आँख बन्द करना होता और उधर तीन-चार बच्चे उनकी गोदी में सिर रख देते थे। बच्चों की आँखों में बहुत जलन होती है पर बहादुर कहलाने की होड़ में वे यह सब सह लेते। बच्चों की आँखों में काजल पहनाते समय आजी माँय कहती 'आँख में अंजन... तो बच्चे जलन के कारण मिचमिचाती, टपकती आँखों से कहते ' नितकर नितकर...- नितकर...।

जन्म के छठवें दिन से ही बालक को काजल की आदत डाल दी जाती थी। छठी पूजन के दिन छठी माँ की जोत से काजल तैयार कर जच्चा और बच्चा को पहनाया जाता था। सवा महिने तक रोज कोरा काजल पहनाने का रिवाज रहा है। ऐसी मान्यता है कि इससे जच्चे-बच्चे के चेहरे कांतिमान व आँखे ज्योतिमान होती हैं। आँखे शरीर का अनमोल गहना है। अत: हमारे पूर्वज नेत्र ज्योति का विशेष ध्यान रखते थे।

आजकल आई-फ्लू आदि रोग हैं। हमारी माँय अगर बच्चे की आँख में लाल डोरा देखती थी तो तुरंत रूमाल हल्दी में डुबाकर दे देती थीं और निर्देश देतीं, 'आँखे इसी से साफ करो।' वे साफ कपड़े की पट्टी बनाकर, उसे गीलाकर दिनभर मटके पर चिपके रहने देती और रात को कटोरी में धी कड़का कर उसमें गीली पट्टी जैसे ही डालती तो घी से छुन्न की आवाज निकलती। पट्टी ठंडी होती तो इसे आँख पर बाँध देती थी। रात भर में आँख ठीक हो जाती थी। सुबह पट्टी खुलती तो आँख एक दम सुन्दर, लाली खतम।

बुधवार हमारे गाँव का बाजार का दिन होता था। इस दिन केले की भट्टी खुलती थी। अगर किसी की आँख में कोई भी खराबी होती तो माँय रात को उसकी आँख पर केले का छिलका बाँध देती थीं। सुबह देखों तो आँख की खराबी दूर।

आँखों के दोनों कोरों पर बारीक-बारीक ऊम-ऊम (फुंसी) जैसे हो जाती थीं। ये आँखों में बहुत किरकिराती थीं। आजी माँय साफ सफेद नरम कपड़े को फिटकरी के घोल में डुबोकर बच्चों की पलकें उल्टी कर ऊम साफ कर देती थीं। कल्पना की जा सकती है, बच्चे को कितनी पीड़ा होती होगी, पर वे कहती थी, दिन भर की री-री-री से एक बार का कष्ट ज्यादा अच्छा .... हम बच्चों के लिए रोज प्रात: सूर्य को नमस्कार करना जरूरी होता था। साथ ही उगते सूर्य को टकटकी लगाकर देखना रहता था। ऐसा आँखों से आँसू टपकने तक करना होता था। वे कहती थी, 'ऐसा करने से अस्सी साल की उम्र में भी मैं चाँद के उजेले में सुई में डोरा पिरो लेती हूँ ना--। तुम भी ऐसा ही करो। सुबह आँखों पर कुएँ का ताजा पानी छीटों। रात सोने से पहले आँखें धोवो। ऐसा करने से आँखै सदा ही अच्छी सुन्दर रहेंगी।'

आँखों के साथ-साथ उनका पूरा ध्यान दाँतों पर भी रहता था। वे कहती थी, ''जैसे आँख अनमोल हैं, वैसे ही दाँत भी हैं।'' दाँतों के विषय में आजी माँय बड़े मजाकिया मिज़ाज से कहती थीं, 'दाँत बड़े बेईमान होते हैं। आते और जाते, दोनों वक्त कष्ट देते हैं। इसलिए इनकी कुछ ज्यादा ही खातिरी करते रहना चाहिए। दाँत स्वस्थ तो सब मस्त। दाँतों से शरीर सुन्दर और पुष्ट भी रहता है। देखते नहीं, मैं अस्सी साल की उम्र में भी दड़ा-दड़ चना और खटा-खट गन्ना खा लेती हूँ।'

हमारे आँगन के कुएँ पर ताजी दातौन रखी रहती थीं, कभी बबूल की, तो कभी नीम की। मंजन तो आजी माँय स्वयं ही बनाती थी। अखरोट-बादाम के छिलकों को जलाकर, उनको खल में महीन कूंट लेती थीं। उसमें सेंधा नमक, असमान तारा, सौंठ, लौंग या काली मिर्ची डालकर मंजन बनाकर कुएँ के पास वाली दीवाल में बने आले में डिब्बा भरकर रख देती थीं। छोटे बच्चों को स्वयं अपनी निगरानी में मंजन करवाती थी। कहती थीं, 'किसको बुढ़ापे तक गन्ना चना खाना है, किसको दाँत चमकाना है, तो ऊंगली से दाँत बजाकर बताओ।' साथ-साथ बच्चों से कहलाती जाती थीं, 'दाँत में मंजन।' बच्चे कहते, ''नितकर -नितकर-नितकर।'' किसी के मसूड़ों में जरा भी सूजन आई कि हल्दी नमक सोंठ लगाकर दो बार के मंजन में ही सब ठीक करवा देती थीं। दाँत की बीमारियों से ही पेट बीमार हो जाता है। अत: भोजन के बाद भी वे बच्चों को निर्देश देती थीं, ''दाँत रगड़ कर कुल्ला करो।''

गर्मी के दिनों में हम काली चिकनी मिट्टी से मुँह धोया करते थे। हमारे गाँव के पास एक खेत है, जिसमें ऐसी काली मिट्टी थी कि उस पर एक बूंद पानी डालो तो बड़ी सौंधी सुगंध आती थी और मक्खन जैसे मुलायम हो जाती थी। कहते हैं, गर्मी में काली मिट्टी से मुँह धोने में छाले नहीं होते हैं। ठंड के दिनों में कण्डे की राख से ही मुँह धोया करते थे। गाँवों में किसी भी जलाशय पर लोग कण्डे की राख व काली मिट्टी रख देते थे। हर स्नान करने वाला आश्वस्त हो उस मिट्टी या राख से दाँत रगड़ते और फिर डुबकियाँ लगाने लगते थे। हम भी तो ऐसा ही किया करते थे।

आज उन दिनों की यादों से मन सिंहर उठता है। आज के प्रदूषित वातावरण में धूल को घाव पर लगा लें तो टिटनस हो जाय, मिट्टी या कंडे की राख से दाँत रगड़ें तो मुँह में घाव और छाले हो जायँ।

आँखों में काजल न लगाने की सलाह डाक्टर इसीलिए देते हैं कि सब कुछ प्रदूषित हो रहा है। आज वह सूक्ति उल्टी हो गई आँख में अँजन, दाँत में मंजन मतकर... मतकर... मतकर...।

लेखिका - वरिष्ठ लोक संस्कृतिविद् हैं।
संपर्क : 13 समर्थ परिसर, ई-8 एक्स्टेन्शन, बावड़िया कला, पोस्ट ऑफिस त्रिलंगा, भोपाल-462039 मो.: 09424440377, 09819549984

■

आलेख

आर्ता: पुत्रवत आचारेत अर्थात-रोगी से पुत्र के समान व्यवहार करने सहित अनेक सिद्धांतों के प्रतिपादक

महर्षि चरक के सिद्धांत आज भी हैं प्रासंगिक

इन्दर सिंह परमार

चरक जयंती श्रावण शुक्ल नाग पंचमी 2081 संवत इस बार 9 अगस्त 2024 को है। ईसा से लगभग 200 वर्ष पूर्व चिकित्सा ग्रंथ लुप्त हो गए थे । यह पूरे भारतीय जनमानस और विश्व के लोगों के लिए अत्यंत ही संकट का दौर था। जब सारी मानवता त्राहि-त्राहि करने लगी जब सारी धरती के लोग कष्ट से मरने लगे।

जब समाज अकाल मृत्यु को प्राप्त होने लगा जैसा कि भगवान ने श्रीमद्भगवद्गीता में प्रतिज्ञा की, जब-जब धर्म की हानि होगी तब-तब मैं आऊंगा। जब-जब अधर्म रूपी रोगों का साम्राज्य होगा। पाप का साम्राज्य होगा तब- तब मैं प्रकट होउंगा। तब भगवान शेषनाग स्वयं इस धरती पर विचरण करते हुए आये और उन्होंने देखा कि जनता कितने कष्ट में है कितनी दुखी है। उनका हृदय द्रवित हो गया, करुणा से भर उठे और उन्होंने कपिष्ठल नामक गाँव जो कश्मीर में पुंछ के पास स्थित गांव है, वहां पर वेद वेदांग नामक एक वैदिक ब्राह्मण के घर में श्रावण शुक्ल नाग पंचमी के दिन जन्म लिया। शेषनाग का पूज्य दिवस अवतरण दिवस श्वेत वाराह पुराण में स्वयं ब्रह्मदेव ने नाग पंचमी का दिन बताया है। इस कारण से महर्षि चरक के जन्मदिन को हम श्रावण शुक्ल पंचमी नाग पंचमी मनाते हैं। महर्षि चरक ने वेद उपनिषदों का अध्ययन करने के उपरांत आयुर्वेद का अध्ययन प्रारंभ किया। उन्होंने महर्षि पुनर्वसु आत्रेय के द्वारा उपदिष्ट और आचार्य अग्निवेश के द्वारा प्रणीत लिखित ग्रंथ अग्निवेश तंत्र को खोजा। उसके छिन्न-भिन्न अंशों को सहेजा सम्हाल। जो बड़ी मुश्किल से उनको प्राप्त हुए और उस ग्रंथ को अग्निवेश तंत्र को जो कि पूर्ण नहीं था उस समय उसको धीरे-धीरे करके लेखन कार्य प्रारंभ किया। औषधियों का चयन करना, औषधियों के बारे में खोजना,उनका प्रयोग किया। इस प्रकार से चरक संहिता का वर्णन लिखना प्रारंभ किया। जिसमे मानव जीवन रोग चिकित्सा का वर्णन है। सबसे महत्व की बात चिकित्सा जगत में उन्होंने चिकित्सा सिद्धांत दिए। वह अपने आप में अप्रतिम कार्य था । पूरी मानव सभ्यता, मानव समाज, पृथ्वी उनके उपकार कभी नहीं भूल सकती। ऐसे मनीषी का जन्म भगवान के तुल्य ऐसे सर्वश्रेष्ठ चिकित्सक का जन्मदिन मनाना हम चिकित्सकों का ही नहीं इस मानव जाति का परम कर्तव्य है। आभार प्रदर्शन है। यह धन्यवाद है ऐसे व्यक्ति के लिए जिन्होंने मानव समाज को इस पूरी धरती को रोगों के भय से दूर किया। चिकित्सा सिद्धांतों की स्थापना की।

विश्व के प्रथम चिकित्सक शेषावतार महर्षि चरक का परिचय

अथर्ववेद के उपवेद और पंचमवेद आयुर्वेद के आदि चिकित्सक महर्षि चरक को भगवान शेषनाग का अवतार माना जाता है। उनका जन्म ईसा से 200 वर्ष पूर्व कश्मीर में पुंछ के पास कपिष्ठल नामक गांव में हुआ था। श्वेत वाराह पुराण के अनुसार उनका जन्मदिन श्रावण शुक्लपक्ष नागपंचमी (इस बार 9 अगस्त 2024) को मनाया गया। उज्जैन स्थित महाकाल मंदिर में भगवान शेषनाग के कपाट भी आज ही के दिन खोले जाते हैं। उन्होंने महाभारत काल के पश्चात खण्डित हो चुके कायचिकित्सा(मेडिसिन) के महान ग्रंथ अग्निवेश-तंत्र का प्रतिसंस्कार (पुनर्लेखन) कर चरक-संहिता रूपी कालजयी रचना प्रदान की।

बौद्ध धर्म के नास्तिक दर्शन काल में अहिंसा के सिद्धांत के कारण राजव्यवस्था द्वारा वैदिक और शल्य क्रियाओं का निषेध कर दिया गया था। दूसरी तरफ बौद्ध धर्म के 'स्वभावो परमवाद' के सिद्धांत की आड़ में (यानी शरीर तो स्वभाव से ही बनता बिगड़ता है इसलिए चिकित्सा की क्या आवश्यकता है ऐसा कहकर) वैद्यों के चिकित्सा कार्यों का विरोध किया जाता था। कहा जाता है कि बौद्ध सम्राट बिम्बिसार को भी बवासीर की तकलीफ़ हुई थी, लेकिन अहिंसा के सिद्धांत के चलते उन्होंने शल्य चिकित्सा को अंगीकार नहीं किया। जिस पर आचार्य जीवक ने एक लेप बनाकर अर्श को ठीक किया था। सम्राट अशोक के बाद चिकित्सा कार्यों पर शासन द्वारा ऐसा प्रतिबंध

करीब 50 वर्ष तक रहा, जिसे भारत के मेडिकल-इमरजेंसी का काल कहा जा सकता है। मान्यता है कि ऐसे कालखंड में अनन्त भगवान-शेष छद्म रूप में धरती पर विचरण करने आए। रोगों से पीड़ित मानवता को देखकर करुणावश उनका हृदय द्रवीभूत हो गया और उन्होंने वेद-वेदांग नामक ब्राह्मण के घर जन्म लिया।

ऐसे समय में रोगों से पीड़ित मानवता की सेवा के लिए उन्होंने भारत भर में घूमते हुए चिकित्सा का कार्य और उसका प्रचार किया। इसी कारण 'चरकात् चरक' नित्यप्रति घूमने के कारण उनका नाम चरक पड़ा। उन्होंने 'आर्ता पुत्रवत आचारेत' यानी रोगी से पुत्र के समान व्यवहार करने सहित अनेक सिद्धांतों का प्रतिपादन कर चिकित्सक समाज के लिए एक मिशाल कायम की।

आचार्य चरक ने आज से 2150 वर्ष पूर्व चरक संहिता का लेखन किया था। चरक संहिता मूल रूप से अग्निवेश तंत्र का ही परिष्कृत ग्रंथ है। पुनर्वसु आत्रेय द्वारा उपदिष्ट सूत्रों को, महर्षि अग्निवेश ने अग्निवेश तंत्र में निबंध किया था। काल क्रम से वह ग्रंथ लुप्त हुआ तथा आयुर्वेद चिकित्सा के प्रति भी समाज में उपेक्षा हुई। जिसके कारण मानवता और सारा विश्व रोगों से ग्रस्त हुआ।

आचार्य चरक ने ऐसे समय में जन्म लेकर और पूरे जीवन भर परिभ्रमण करते हुए चंक्रमण करते हुए, औषधीयों के माध्यम से रोगों की चिकित्सा की और इन चिकित्सा के प्रयोगों को उन्होंने चरक संहिता के ग्रंथ में स्थान दिया। चरक सूत्र स्थान के प्रारंभ में छः पदार्थों के महत्व को प्रतिपादित किया। सामान्य, विशेष, समवाय, द्रव्य, गुण एवं कर्म के महत्व को प्रतिपादित किया। दिनचर्या का व्याख्यान विस्तार से किया। ऋतु अनुसार हमें क्या भोजन करना चाहिए, कैसे भोजन करना चाहिए, किन दोषों का प्रकोप है कैसे समान है कौन सी व्याधि किस ऋतु में हो सकती हैं इन सब बातों को उन्होंने बताया। वेगों के धारण करने से क्या नुकसान होता है, क्या व्याधियों होती है, सिद्धांत प्रतिपादित महर्षि चरक ने किया। ऐसे विषय जो वैद्य के लिए अनिवार्य हैं ऐसे गुण ऐसे कर्म जो वैद्य को करनी चाहिए,गुण जो धारण करने चाहिए,उन सभी गुणों को आचार्य चरक ने बताया। पंचकर्म चिकित्सा पद्धति जो रोगों को मूल से समाप्त करने वाली है, उस का सिद्धांत प्रतिपादन स्थापित किया जो लुप्त हो चुका था। सर्वश्रेष्ठ औषधियों की गणना,स्रोतसो के बारे में विस्तार से वर्णन शरीर रचना के सिद्धांतों का प्रतिपादन करके मानव जाति केलिए, चिकित्सा शास्त्र के लिए बड़ा अवदान है।

निदान स्थान के अंतर्गत ज्वर का निदान रक्तपित्त का निदान का उन्माद अपस्मार और इत्यादि के बारे में विस्तार से वर्णन किया है। बहुत सारे ऐसी गंभीर व्याधियां थी जिसमें उन्होंने व्याधियों को दूर करने के लिए औषधियों का वर्णन किया। महर्षि चरक ने 2000 वर्ष पूर्व जिन सिद्धांतों का प्रतिपादन किया उन सिद्धांतों के आधार पर आज भी चिकित्सा की जाती है। अभी 2 वर्ष पूर्व पूरे विश्व में कोरोना नामक व्याधि का आतंक हुआ था। जिसमें बड़ी संख्या में लोगों की जान गई थी। कोरोना व्याधि की चिकित्सा आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के पास भी नहीं है। परंतु महर्षि चरक के सिद्धांतों के अनुसार कोरोना नामक व्याधि में वात,पित्त और कफ इन तीनों दोषों का सन्निपात होने के कारण से संप्राप्ति होती है। अतः यदि इन दोषों की समता स्थापित की जाए तो यह रोग दूर हो सकता है। इस सिद्धांत पर कार्य करते हुए आयुर्वेद चिकित्सा संस्थाओं ने कोरोना के रोगियों की चिकित्सा की और उसमें सफलता प्राप्त की। इसी प्रकार विभिन्न प्रकार की संक्रामक व्याधियों स्वाइन फ्लू, टाइफाइड,मलेरिया,चिकनगुनिया,जीका वायरस,डेंगू,चांदीपुरा वायरस इत्यादि का महर्षि चरक के त्रिदोष के सिद्धांत के आधार पर चिकित्सा करने से इन समस्त आधुनिक समय में प्राप्त रोगों की चिकित्सा सरलता से होती है।

अतः यह सिद्ध होता है कि महर्षि चरक के चिकित्सा सिद्धांत और त्रिदोषवाद का सिद्धांत ही सार्वत्रिक,सर्वकालिक सत्य सिद्धांत है।ये सिद्धांत वैज्ञानिक है और स्वीकार करने योग्य है।

ऐसे महापुरुष जिन्होंने इतने हजारों वर्ष पूर्व इस प्रकार के वैज्ञानिक चिकित्सा सिद्धांतों की प्रस्तुति देकर मानवता को और विश्व को हमेशा हमेशा के लिए रोगों से मुक्त होने का एक सूत्र दिया,उनका स्मरण करना उनका प्रातः स्मरण करना हमारा कर्तव्य है।महर्षि चरक ने ही रसायन प्रकरण में च्यवनप्राश का उल्लेख किया है च्यवनप्राश एक ऐसा रसायन है जिसका सेवन करने से व्यक्ति को जरा नामक व्याधि नहीं होती है। बुढ़ापा नहीं आता है और व्यक्ति की समस्त धातुएं श्रेष्ठ निर्मित होती है जिसके कारण व्यक्ति में ऊर्जा और उत्साह का स्तर उच्च बना रहता है। च्यवनप्राश के उल्लेख के समय ही महर्षि चरक ने उसके लाभ बताते हुए कहा कि च्यवनप्राश का उपयोग श्वास और केश रोग में विशेष रूप से करना चाहिए इस सिद्धांत के आधार पर समझ में आता है कि चवनप्राश श्वसन व तंत्र के रोगों पर अच्छी तरह से कार्य करता है। कोरोना में भी कोरोनावायरस फेफड़ों में जाकर फेफड़ों की कोशिकाओं को नष्ट करता है तथा श्वसन संस्थान को अपना स्थान बनाता है अतः कोरोना के रोगियों को जब च्यवनप्राश दिया गया तो उनको इससे अत्याधिक लाभ हुआ। अतः आचार्य चरक के द्वारा दिया गया यह रसायन भी मानवता के लिए अत्यंत कल्याणकारी रहा। इसके अतिरिक्त वर्तमान में प्राप्त होने वाली बहुत सी ऐसी बीमारियां हैं जिनका चिकित्सा आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के द्वारा संभव नहीं है। जितने भी प्रकार के कुष्ठ अर्थात त्वक रोग हैं, उन सभी की चिकित्सा महर्षि चरक ने दी है।जिसको दोष अनुसार चिकित्सा करने से निश्चित रूप से वैद्य को यश और रोगी को लाभ प्राप्त होता है।

इसके अतिरिक्त मानस रोग विज्ञान में भी आचार्य ने रोगों का और चिकित्सा सिद्धांतों का उल्लेख किया है।

इसी प्रकार ग्रहणी दुष्टि भी एक रोग है। आधुनिक चिकित्सक

चित्र ओमजी जैसे, मित्र ओमजी जैसे...

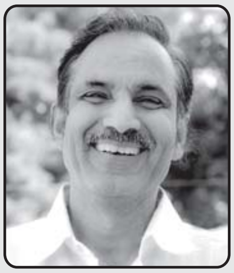

यह सच कह रहा हूं। जिस तरह कलम के धनी, वैसे ही मन के भी सागर ओमजी। ऐसे मित्र जिनसे आपका और मेरा परिवार सीख सकता है: सज्जनता, सर्जनात्मकता और सकारात्मकता हैं। तो सोनी लेकिन वास्तव में धुनी हैं। सीधे और सादे, चित्र अराधे! स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय और अग्रणी रहे सेनानी परिवार में जन्मे तो तेवर क्रांतिकारी ही रहे। बिजोलिया जैसे गांव से उदयपुर आ गए। उदयपुर अपनी चित्र शैली के लिए ख्यात रहा भी हैं। यहीं भगवती अम्बामाता के आश्रय में अपनी चित्र साधना शुरू की। पहले भारतीय चित्र शैलियों का गहन अध्ययन, फिर उत्कृष्ट चित्रांकन और धीरे - धीरे प्राचीन जीर्ण चित्रों का यथारूप अनुरक्षण, नवीकरण।

उदयपुर ही क्या, देश का हर घराना, ठिकाना उनके काम को जानता है। हर तरह के काम की जानकारी और उसको पूरा करने का आग्रह... ओमजी सचमुच अच्छे कलाकार और अच्छे इंसान हैं। कितनी तरह से चित्र बनाए जा सकते हैं? कोई उनसे पूछे! मूर्त चित्र ही कूंची के कौशल की वास्तविक परीक्षा और प्रमाण होते हैं। उनका घर मेरे लिए सुंदर सा संग्रहालय, अजायबघर, चित्रशाला! मुझे आया देख, पूरा परिवार स्नेह बरसा देता है!

उनकी एक बड़ी विशेषता यह भी है कि नित नए चित्रों की खोज करना और मुझे बताना। जिस तरह आदरणीया दलजीत कौर आदि मुझे नवीन चित्र भेजकर संवाद स्थापित करते थे, वैसे ही ओमजी भी अल्प ज्ञात, नव ज्ञात और सर्वथा नवीन कला प्रतीक, चित्र, मूर्ति, अभिलेख आदि को भेजकर लंबी चर्चा छेड़ते हैं। मेवाड़ के शकुन चित्र हो या पुष्टिमार्गीय वार्ताओं, संहिताओं की वेलें, रागिनियों की नवीन श्रृंखला हो या कामकंदला का अंकन... महाराणा प्रताप से संबंधित सबसे अधिक पुराने चित्रों की खोज उन्होंने मेरे लिए की। मेरी अनेक पुस्तकों के मुखपृष्ठ उनकी कलम या उनके खोजे गए चित्रों से सजे और सराहे गए।

उनके कई चित्र मुझे नवीन विषय सुझाने वाले भी रहे। मेवाड़ी शकुनावली उनकी प्रेरणा से ही पूरी हुई और... यह भी बता दूं, बुद्ध के जन्म के अवसर पर शरीर के लक्षणों को कहते दैवज्ञ का जो चित्र उन्होंने पिछले दिनों बनाया, तो मैंने 'सामुद्रिक लक्षण एकादशी' तैयार की। स्त्री - पुरुष के शारीरिक लक्षण बताने वाले 11 ग्रंथों की खोज, संपादन, अनुवाद और विश्लेषण। देश - विदेश के ग्रंथ भंडारों से ये ग्रंथ जुटाए गए। यही नहीं, महाराणा प्रताप की पत्नी महारानी अजबदे और उनके पीहर बिजोलिया पर उन्होंने जो चित्र बनाए तो पांच पीढियां देखने वाली अजबदे पर मेरी पुस्तक की पीठिका ही तैयार कर दी। मन है कि मेवाड़ी चित्रकला वाली पुस्तक जल्दी पूरी कर उन्हें समर्पित करूं! ओमजी ऐसे प्रेरक मित्र हैं।

– डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'

इसको बाउल सिंड्रोम कहते हैं।ग्रहणी दुष्टि की चिकित्सा के बारे में भी महर्षि चरक ने विस्तार से वर्णन किया है। प्रमेह नमक व्याधि इस समय संसार के लिए एक चुनौती बनी हुई है।मधुमेह एक प्रमेह का भेद है।

आचार्य चरक ने प्रमेह के भी 20 भेदों का वर्णन किया और बताया कि कफ कारक और कफ को बढ़ाने वाली जीवन शैली से ही प्रमेह रोग होते हैं।प्रमेह की चिकित्सा भी आचार्य ने विस्तार से बताई और कहा कि शरीर को श्रम साध्य बनाने से और अपने जीवनचर्या को सुधारने से प्रमेह की चिकित्सा होती है।

आचार्य चरक ने ही आंवला और हल्दी, त्रिफला आदि रसायनों के माध्यम से प्रमेह की चिकित्सा के सूत्र दिए,जो वर्तमान में भी अत्यंत प्रासंगिक है। आधुनिक चिकित्सा में जहां बहुत सारे साइड इफेक्ट्स होते हैं वहीं आयुर्वेद चिकित्सा प्रमेही की चिकित्सा तो करती ही है, इसके अतिरिक्त शरीर में होने वाले ह्रास को भी रोकते हैं और शरीर को अधिक ऊर्जावान बनाती है। आचार्य चरक ने अन्य रोगों यथा हृदय रोग,श्वास रोग,वात व्याधि,कास रोग, शोथ रोग(सूजन) आदि के चिकित्सा सिद्धांतों का वर्णन किया है।

ऐसे महर्षि जिन्होंने इस प्रकार चिकित्सा को आधार बनाकर मानवता को इस संकट से दूर करने के लिए इस ग्रंथ का निर्माण किया। उनकी जयंती मनाना उनका जन्मदिन मनाना हमारा कर्तव्य है।

प्रणाम करते हैं, वंदन करते हैं, अभिनंदन करते हैं ऐसे महर्षि चरक का, आइए सभी मिलकर उनका जन्मदिन मनाएं। इस बार चरक जयंती 9 अगस्त 2024 को धूमधाम से महर्षि चरक का जन्मदिन मनायें और समाज को पूर्ण स्वस्थ और रोग मुक्त करने का संकल्प लें।

चरक संहिता के शिष्योपनयनीय अध्याय से संकलित चरक-शपथ आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के हिप्पोक्रेटिस-ऑथ से अधिक समीचीन प्रतीत होती है। आजकल देशभर के मेडिकल और आयुर्वेद कॉलेजों में प्रवेश लेने वाले छात्रों को चरक शपथ की प्रतिज्ञा करवाई जाती है। हिमाचल प्रदेश के एक गांव का नाम आज भी चरेख-डांडा है। मान्यता है कि इसी पहाड़ी पर महर्षि चरक ने तपस्या की थी। इस स्थान पर विश्व आयुर्वेद परिषद के प्रयासों से महर्षि चरक की मूर्ति स्थापना की गई है। जहां आसपास के आयुर्वेद महाविद्यालय के छात्र चरक जयंती के अवसर पर चरक-यात्रा आदि का आयोजन करते हैं।

हमें चिकित्सा के इन महान वैज्ञानिक का जीवन स्मरण कर इस आर्थिक भौतिकवादी युग में नैतिक सुचिता (मेडिकल एथिक्स) को अपनाना चाहिए। और इस अवसर पर चिकित्सा शिविर, औषधीय पौधारोपण, स्वास्थ्य प्रबोधन आदि का आयोजन कर महर्षि चरक को उनके अवदान के लिए श्रद्धांजलि अर्पित करनी चाहिए।

य आयुर्वेद। चरकाचार्यो विजयते।।

चरक जयंती की शुभकामनाएं।

लेखक मंत्री : उच्च शिक्षा, तकनीकी शिक्षा,एवं आयुष विभाग

लोक का आयुर्विज्ञान

श्यामसुंदर दुबे

मन है मन का क्या है कुछ भी सोचने लगता है। अभी-अभी मुझ से कह रहा था कि जरा पता तो लगाओं कि जब आदिम अवस्था में आदमी बीमार पड़ता होगा तो उसका इलाज कैसे होता होगा। मैं ने झिड़क दिया कि पगले! उस समय कोई बीमारी नहीं रही होगी वातावरण बहुत स्वच्छ और पवित्र था। प्रकृति में प्रदूषण नाम का कोई शब्द ही नहीं था। वक्त ऐसा था कि आदमी के पास सार्थक भाषा भी नहीं थी। संवाद न्यूनतम रहा होगा। इसलिए मनुष्य किसी रोग-राई से ग्रस्त नहीं था। यह सुनकर मन तो शांत हो गया लेकिन मुझे कुछ नये तरह से सोचने को बाध्य कर गया। शरीर से रोगों का संबंध सृष्टि रचना के साथ की शुरू हो गया होगा। जिसे आदिम मनुष्य कहा जाता है उसे भी चलते-फिरते चोट लग जाती होगी। कोई जानवर या विषाक्त कीड़ा काट लेता होगा। तब वह इनका इलाज कैसे करता होगा? यदि पशुश्रेणी की तरह वह मनुष्य जी रहा था तब पशु क्या बीमारी से ग्रस्त नहीं थे जो कि सही नहीं है। पशु भी बीमार होता रहा और मनुष्य भी बीमार होता रहा है। फिर इलाज की क्या व्यवस्था थी? जब कोई व्यवस्था जैसी बात उस समय थी ही नहीं तो इलाज की व्यवस्था का प्रश्न उठाना बेमानी है।

मुझे मनुष्य की फितरत पर भरोसा है। उसने उस समय न जाने कितने वर्षों बाद यह जाना होगा कि शरीर में रोग जैसी विकृति उत्पन्न होती है जब जान गया होगा तब उसने पत्तों छालों, जड़ों और मिट्टी जैसे पदार्थों की उपयोगिता पर विचार किया होगा और प्रयोगों पर प्रयोग चलते रहे होंगे। उसने बदलते मौसमों की तासीर से शरीर को अनुकूलित करने की तरकीबें सीखी होंगी बस यहाँ से उपचार सामग्रियों और उनके प्रयोग के गुर उसके हाथ में आये होंगे। लोकानुभवों का एक सिलसिला विस्तृत और परिवर्द्धित होता हुआ-समय की गुटिका में दर्ज होता रहा होगा। यही आगे चल कर लोक आयुष का आधार बना होगा। मानवीय सस्यता के विकास क्रम में लोक चिकित्सा वद्धति क्रमशः एक रूप धारण करती रही है और इस आधार पर आयुर्वेद का विधिवत एक स्वरूप ज्ञान की शाखा के रूप में सामने आया।

ग्राम्य संस्कृति, गौचारण जीवन शैली के साथ कृषि कर्म के विकास की कथा भी कहती है। यह कृषि संस्कृति का प्रारंभिक काल ही था, जब मनुष्य की मेद्या ने जीवनगत संसाधनों का अभूतपूर्व प्रयोग करना प्रारंभ कर दिया था। चित्त वृत्तियों के अनुसार गुणात्मक कर्मनिर्धारक समुदाय निर्मित हुऐ और समुदायों का संघर्ष भी संसाधनों पर अधिकार जमाने के लिए प्रत्यक्ष हुआ। समुद्र मंथन की कथा इसी तरह के संघर्ष का एक शांति प्रस्ताव जैसा था। इसमें अब तक जो मानवीय मेघा के माध्यम से अर्जित रत्न तुल्य उपलब्धियाँ थी उनका बँटवारा किया जाना था। इनमें एक उपलब्धि आयुर्वेद संहिता का लोकार्पण जैसा प्रसंग भी था। इस हेतु धन्वंतरि जी आयुर्वेद के जनक के रूप में अवतरित हुऐ आयुर्विज्ञान के क्षेत्र की यह बड़ी घटना थी। प्रज्ञामंथन से तात्पर्य था कि अब तक जो ज्ञान और ज्ञान से प्राप्त उपलब्धियों के बिखरे हुए विभिन्न क्षेत्रीय सूत्र थे उनकी विद्या-विभाग की तरह समाज में उपास्थित करना। अमृत प्राप्ति का उद्देश्य उद्यम सीलता से ही पूर्ण किया जा सकता है। अमृत बाद में मिला किंतु अमृत तुल्य आयुर्विज्ञान पहले प्राप्त ही प्राप्त हो गया। धन्वंतरि जो कुंभ अपने हाथों में लिए हैं - वह उन अनुभवों से परिपूर्ण था जो आदिम मनुष्य से लेकर इस प्रतीक कथा के रचना समय तक संपुंजित होकर एक उपवेद का रूप धारण कर चुका था।

आयुर्वेद की लोक परक धारणाओं का यह वह काल था, जब शरीर की प्रकृति और विकृति का ज्ञान मनुष्य को अच्छी परह से हो गया था। रोगों का निदान और तदनुकूल औषधि का अनुपान आदि का एक निश्चित निर्धारण कर दिया गया था। मेरे पूर्वजों ने कुछ हस्त लिखित पांडुलिपि रूप में पुस्तकें तैयार की थीं। इन पांडुलिपियों में एक पुस्तक मुझे मिली जिसका नाम था 'आयुर्वेद रत्न'। यह प्रसंग इसलिए कि समुद्र मंथनजात रत्न श्रेणी में धन्वंतरि को रत्न के रूप में लोक ने भी मान्यता दी थी। इस आयुष विद्या का संबंध प्रकृति और मनुष्य की चर्या के अंतर्वर्ती तालमेल से था। प्रकृति प्रदत्त वस्तुओं के माध्यम से शरीर के लिए जिन तत्वों की कमी वेशी से रूग्णता का शिकार होना पड़ा है उन तत्वों की आपूर्ति या उन तत्वों का संतुलन शरीरिक स्तर पर करना आयुर्वेद का लक्ष्त्य रहा है। चूँकि मनुष्य का शरीर भी प्राकृतिक तत्वों से ही निर्मित हुआ है इसलिए उन्हीं तत्वों का प्रयोग ही शरीर को निरूजता प्रदान कर सकता है यह आयुर्वेद की आधार भूत संकल्पना है।

लोक का ज्ञान विज्ञान एक एक प्रभाग में जरूर वितरित किया गया है किंतु ये सभी प्रभाग एक दूसरे से संबद्ध है और एक दूसरे को प्रभावित करने वाले हैं इसका तात्पर्य यह हुआ कि भारतीय मनुष्य ने समग्रता और अनुपूरकता को महत्व दिया है। आयुर्विज्ञान भी ज्ञान के अंतरावलंबन पर भरोसा करता है। ज्योतिष योग, धर्मतंत्र के कर्मकांड और ऋतु-विज्ञान जैसे क्षेत्र भी आयुर्वेद के आनुसंगी हैं। ज्योतिष के अनुसार वनस्पतियों का उत्पादन और खनिजों का उत्खनन निर्धारित है ये वनस्पतियाँ और खनिज औषधि निर्माण के निमित्त होता है। औषधि के सेवन का मुहूर्त यहाँ तक कि चिकित्सक से मिलने तक का समय ज्योतिषीय गणना से निश्चित किया जाता है। फिर रोगी के जन्मांक का अध्ययन भी इस हेतु किया जाना निश्चित है। मैं अपने इलाज के लिये जब एक सुप्रसिद्ध आयुर्वेद चिकित्सक के पास दवा कराने गया तो उसने मुझसे मेरी जन्म पत्री माँग ली और एक गणक के अनुसार उसने उसकी ग्रह स्थिति देखकर ही दवा निर्धारित की। मैं ने उससे इस विषय पर बात की और उससे जानना चाहा कि यहाँ ज्योतिष का क्या

प्रयोजन है? तो उसने बताया कि शरीर जैसे प्राकृतिक तत्वों से निर्मित है वैसे ही वह आकाशीय ग्रह-नक्षत्रों से भी प्रभावित हुऐ बिना नहीं रह पाता है। संपूर्ण प्रकृति पर ग्रह नक्षत्र असर डालते हैं। फिर उसने मुझ से जानना चाहा कि मैं कुछ पूजा पाठ करता हूँ। मैं ने उसे बताया कि मेरी आस्था इस तरह के कर्मकांड पर है तब उसने मुझे एक मंत्र दिया जिसका जाप करने को उसने विधिपूर्वक निर्देशित किया। यह घटना स्पष्ट करती है कि स्वास्थ्य की रक्षा के लिए मनुष्य ने कितने तरह से विचार किया है? उसका एक मात्र कारण यह रहा कि शरीर जो सभी धर्मों के पालन का निमित्त है जब समुचित आचरण करेगा तभी तो वह अपने सभी धर्मों को निभा पायेगा।

''शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम।''

आयुर्वेद के क्षेत्र में प्रयोग और परीक्षण निरंतर गतिशील रहा। श्रेष्ठतम आयुर्वेदाचार्यों ने नवीन अन्वेषण किये। ग्रंथ से और इस परंपरा को सर्वोत्तम स्तर पर ले जाने का उपक्रम किया। इसके समानांतर लोक में भी इस विधा पर अपने तरह से विचार-विमर्श चलता रहा इसे देशज पद्धति के अनुसार सर्वसुलभ कराने का कार्य लोक के गुणी-जनों ने अपने अनुभवों में बाँटकर किया। शरीर को महत्वपूर्ण मानते हुए लोक ने निरोग रहने को सर्वश्रेष्ठ सुख माना। घर गृहस्थी में सुख के जो पायदान माने गये हैं उन्हें लोक कंठ ने इस रूप में सुरक्षित रखा है, **''पहला सुक्ख निरोगी काया। दूजा सुख घर में हो माया। तीजा सुख पतिव्रत हो नारी। चौथा सुख सुत आज्ञाकारी।''** ये सभी सुख परस्पर अवलंनित सुख हैं। इनमें परिगत कौटुम्बक और मानसिक संदर्भ निहित हैं। भारतीय दृष्टि जिस स्वस्थ परिवेश की परिकल्पना कर रही है उसमें व्यक्ति समाज और इनकी सबकी आंतरिक चेतना का संगुथन जरूरी है। उस दृष्टि में शरीर को सुखी रखना उन परिस्थितियों पर निर्भर है जो हमारे परिगत हैं।

शरीर स्वस्थ रहते हुए भी सुखी हो यह परिस्थिति तंत्र पर निर्भर करता है। मैं जब अपनी समसामयिकता को इस आधार पर मूल्यांकित करता हूँ, तब मेरा ध्यान पारिवारिक असंतुन पर टिक जाता है। शरीर को स्वस्थ रखने के हजार प्रयत्न किये जा रहे हैं। लेकिन सब व्यर्थ हो रहे हैं। घर-गृहस्थी का कचूमर निकल रहा है। पति-पत्नी कोर्ट में खडे होकर विवाह विच्छेद के लिए जिरह करते अपने-अपने वकीलों की जेबें भरने के दु:सह दुख से पीड़ित हो रहे हैं तब स्वस्थ शरीर के सुख के परखच्चे उड़ेंगे ही। बेटा मकान का बँटवारा करने की जिद पर अड़ा हो तब पिता के स्वस्थ शरीर के चिथड़े-चिथड़े पुरा-पड़ौस में फैलेंगे ही! भारतीय लोक ने सुख सोपान के इस दर्शन में व्यक्ति के शरीरिक सुख को समाज के वृहत्तर सुखों की सापेक्षता में बड़ा बनाया है।

शरीर का सुख मन पर आधारित है मन में रूग्णता समायी है तो शरीर भी उस रूग्णता से प्रभावित होगा ही। जैसे शारीरिक रोग हैं वैसे मानसिक रोग भी है। लोक ने मानसिक रूग्णता को दूर करने के अनेक उपाय बताये हैं उनमें से आहार शुद्धि को बड़ा महत्व दिया गया है। जैसा खाये अन्न वैसा बने मन्न हम जैसा अन्न खाते हैं वैसा मन बनने लगता है। यह अन्नमय कोष से आनंदमय कोष की यात्रा का प्रथम चरण है। यही वजह है कि लोक खान-पान पर विशेष ध्यान देता है। लोक के स्वास्थ्य संबंधी सभी कथन अनुभूत सत्य हैं। यदि लोक की दिनचर्या बदलती है तो ये कथन इस बदली परिस्थिति में कितने कारगर होंगे? यह परीक्षण पर आधारित है - यही बजह है कि कभी-कभी आधुनिक विज्ञान के प्रकाश में ये धूमिल दिखायी देता हैं, किंतु इन्हें पूरी तरह से खारिज नहीं किया जा सकता है मुझे धन्वंतरि जयंती के एक कार्यक्रम में वक्ता के रूप में आमंत्रित किया गया था। मैं ने उस कार्यक्रम में बच्चों को घूलिभरी गलियों में खेलने में उनकी इम्यूनिटी की चर्चा करते हुए रसखान के एक पद की चर्चा की। **''धूरि भरे अति सोहित स्याम जू।''** यह वह पंक्ति थी इस पर एक पढ़े-लिखे सज्जन ने आपत्ति उठा दी। और उन्होंने कहा कि घूलि-कण बच्चे को नुकसान पहुँचा सकते हैं। प्रतिवाद करने की गुंजायश नहीं थी। किंतु बाद में मैं ने एक वैज्ञानिक के हवाले से पढ़ा कि घूलि में खेलने वाले बच्चों का प्रतिरक्षा कवच मजबूत हो जाता है। यह लोक का पुनरावलोकन जैसा ही है। बुंदेलखंड में रात्रि भोजन को ब्यारी कहते हैं। ब्यारी की अनिवार्यता पर एक उद्धरण दे रहा हूँ, **''ब्यारी कबहुँ न छोड़िये ब्यारी से बल जाये।''** ब्यारी जरूरी है। इधर कहा जा रहा है कि रात्रि का भोजन स्वल्प हो! यह कार्य पद्धति के बदलने का गुणा-भाग है। दिनभर कमरतोड़ परिश्रम करने वाले यदि ब्यारी नहीं करेंगे तो सुबह वे शक्तिहीन हो जायेगे। अब वैसा श्रम कम लोग ही करते हैं - इसलिए यह मान लिया गया कि ब्यारी में कम खायें या रात्रि भोजन छोड़ ही दें। लेकिन मुझे लगता है लोक की इस धारणा का समर्थन वैज्ञानिक जन आगे कर सकते हैं। लोक अनुभव, हजारों वर्ष के अनुभवों का प्रतिफल हैं उन्ही को लोक आज मान्यता देता है।

लोक में खान - पान का विधि - निषेध भी है। किस महिने में क्या नहीं खाना चाहिए इसका उल्लेख एक बारहमासी तालिका से प्रस्र होता है। कुछ अंश उसके **''चैते गुड़, बैशाखे तेल, जेठे लटा अषाढ़े बेल ....''** आगे भी इसी तरह की जोड़ी है और अंत में कहा जाता है कि यदि यह जो जिस महिने में वर्जित है उसे खाओंगे तो मृत्यु को प्राप्त नहीं हुए तो बीमार अवश्य पड़ोगे **''मरहो न तो पर हो सही''** लोक में स्वास्थ्य के लिए जो रक्षात्मक प्रयत्न किये जाने चाहिये उनका ध्यान रखा है और उन्हें इस तरह सार्वजनिक करने की प्रणाली अपनाई है। इस तरह लोक ने जीवन - व्यवहार से संबंधित जानकारियों के माध्यम से यह सुनिश्चित किया है कि दवा खाने की अपेक्षा रोगों से बचने के उपाय करना प्राथमिक चिकित्सा जैसा ही प्रकरण है।

लोक के आयुर्वेद - कोष में दवाओं की प्रचुरता है। ये समस्त दवायें रसोईघर के मसाले और जड़ी - बूटियों से निर्मित हैं। इन्हें पुरानी पीढ़ी की दादी नानियाँ नुस्खे के रूप में प्रयोग करती थी और ये एक तरह का घरेलू उत्पाद्य थीं। इन दवाओं का असर भी होता था इसलिए ये प्रामाणिक भी था। हरड़-बहेड़ा-आँवला जैसे फलों की उपयोगिता स्वयं सिद्धथी। ये सब प्राकृतिक जीवन से जुड़े हुए प्रसंग थे। लोक ने प्रकृति की छाया में मनुष्य की निरूजता का जो स्वप्न देखा था - वह भले ही आदिम जीवन की आँखों में उतरा हो, लेकिन मानवीय सम्यता के विकास क्रम में वह सदैव साकार होता रहा है और सिद्ध करता रहा है कि प्रकृति ही मनुष्य की संरक्षिका है। बस आवश्यकता इस बात की है कि मनुष्य भी प्रकृति का वात्सल्य भाव पाने हेतु सतत प्रयत्न सील रहे।

लेखक- वरिष्ठ साहित्यकार लोक मर्मज्ञ हैं।
सम्पर्क : श्री चंडी जी वार्ड
हटा (दमोह) म.प्र. - 470775 मोबा. 9977421679

आलेख

आयुर्वेद : हमारी आस्था और विश्वास

वैद्य कुमार अरोज्योति

ब्रह्मवैवर्त पुराण में वर्णित है कि 'तीर्थ, प्रियतम पति, इष्ट देवता, गुरु मंत्र तथा औषधि में जिनकी जैसी आस्था होती है, उन्हें वैसी ही सिद्धि प्राप्त होती है।' अत: परम्परा अनुसार सदियों से हमारी आस्था और विश्वास इन चीजों में है जिसका एक प्रमुख अंश है औषधि शास्त्र अथवा आयुर्वेद। आधुनिक काल में भी आयुर्वेद उतना ही प्रभावशाली और विश्वास योग्य है जितना हजारों साल पहले था। इसका कारण यह है कि आयुर्वेद का आधार है इसका मूल सिद्धांत जो की हर युग में स्थायी अथवा शाश्वत है, आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के जैसा बदलता नहीं है। आयुर्वेद का मूल सिद्धान्त है – पंच महाभूत सिद्धान्त और त्रिदोष सिद्धांत।

आयुर्वेद दर्शन के अनुसार **'सर्वं द्रव्यं पंच भौतिकम्'**, अर्थात् समग्र ब्रह्मांड का आधार उपादान है पंच महाभूत – पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश। सजीव और निर्जीव हर चीज इन पंच महाभूतों से बनी है। बस इनका संगठन में कुछ भेद, भिन्न भिन्न चीज में भिन्न भिन्न होता है। हमारा शरीर भी इन पंच महाभूतों से बनी है और इसकी रक्षा और चिकित्सा दोनो पंच महाभूतो से बनी चीजों से ही हो सकता है।

आयुर्वेद की दूसरा मूल सिद्धान्त है त्रिदोष सिद्धांत। वात, पित्त और कफ त्रिदोष कहलाते है। ये तीनो साम्य अवस्था में शरीर की रक्षा करते हैं और विषम अवस्था में शरीर में व्याधि उत्पन्न करते हैं। जगत में वायु, सूर्य और चंद्रमा होने से जैसे हमें चलत्व अथवा गति, उत्ताप और शीतलता प्राप्त होती है वैसे ही हमारे शरीर मैं वात, पित्त और कफ गति, उत्ताप और शीतलता प्रदान करके अपने शरीर के संतुलन बनाए रखने में तथा क्रियात्मकता में सहायक होते हैं। इसलिए कहा गया है –

'रोगस्तु दोषवैषम्यं दोषसाम्यमरोगता।'

पुन:, हम जीवित तथा स्वस्थ रहने के लिए खाद्य पदार्थ और औषधि के ऊपर निर्भरशील है। और इन खाद्य पदार्थ और औषधि भी अपने प्रकृति के अनुसार हमारे शरीर में त्रिदोष की वृद्धि अथवा ह्रास कराते हैं। अत: आहार और औषधि की उचित प्रयोग से हम स्वस्थ रह सकते है । इनके अलावा स्वस्थ दिनचर्या भी हमें निरोग रखने में सहायक होता है। वैसे ऋतु अनुसार ऋतु चर्या का पालन करके हम अपने आप को स्वस्थ रख सकते हैं। अत: आहार, विहार (दिन चर्या और ऋतु चर्या) और औषधि इनका उचित प्रयोग हमें स्वस्थ रखते है।

आयुर्वेद का और एक प्रमुख विशेषता है देह प्रकृति। मनुष्य का गर्भावस्था में ही उसकी प्रकृति निरूपण हो जाती है। हम कह चुके हैं कि हम सब पंच महाभूत से ही निर्मित है। अत: गर्भ धारण के समय हम में जिन महाभूतों की प्राधान्यता होती है उसके अनुसार हमारी प्रकृति निरूपण होती है। अगर हम में वायु महाभूत की प्राधान्यता होती है तो हम वात प्रकृति के इंसान कहलाते है, अगर हम में अग्नि महाभूत की प्रधान्यता होती तो हम पित्त प्रकृति के इंसान कहलाते है, और अगर हममें पृथ्वी और जल महाभूत की प्राधान्यता होती है तो हम कफ प्रकृति के इंसान कहलाते हैं। द्वदज प्रकृति के इंसान भी होते हैं जैसे – वात-पित्त, पित्त-कफ और वात-कफ। और एक प्रकृति भी होता है वो है सम प्रकृति अथवा वात-पित्त-कफ। हमे हमारे प्रकृति के अनुसार ही आहार, विहार तथा औषधि की सेवन करना चाहिए जिससे हमारी स्वास्थ्य की रक्षा हो सके। अगर हम अपने प्रकृति के विपरित आहार, विहार और औषधि का सेवन करेंगे तो अस्वस्था प्राप्त होगी, रोग से मुक्ति नहीं मिलेगी।

स्वस्थ रहने के लिए प्रकृति अनुकूल आहार, विहार, औषधि के अलावा और एक चीज भी उपकारी होता है, वो है सद्वृत्त। अर्थात् – मानसिक स्वास्थ्य और सामाजिक व्यवहार के लिए अच्छे आचरण की संहिता। आयुर्वेद शास्त्र में हमारे व्यवहार कैसे होनी चाहिए इसका विस्तृत विवरण है, जैसे की गो, ब्रह्मण, गुरु, गुरुजन आदि को सम्मान, सत्य वचन का पालन, आत्म-नियंत्रण का पालन, अपनी इन्द्रियों पर नियंत्रण इत्यादि। इनका पालन करने से भी हम स्वस्थ और तनावो मुक्त रह सकते हैं।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में सुस्थता की परिभाषा में कहा गया है कि संतुलित शारीरिक, मानसिक और सामाजिक सुस्थावस्था ही स्वस्थ है। पर आर्युवेद में सुस्थावस्था की सुविशेष वर्णन किया गया है। आयुर्वेद में सुस्थता की परिभाषा में कहा गया है –

'समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते॥'

अर्थात् जब त्रिदोष और अग्नि साम्यावस्था में हो, शरीर मैं सप्त धातु सम परिमाण मैं हो, मलक्रिया सम हो और आत्मा, इंद्रिय तथा मन प्रसन्न हो तो उसे सुव्यथावस्था कहते हैं।

अत: आयुर्वेद समग्र और पूर्ण रूप से स्वस्थ कि निरूपण करता है जिसको पाने के लिए हमे इसके ऊपर सदियों पुरानी आस्था और विश्वास को जताना पड़ेगा, आयुर्वेद के अमूल्य ज्ञान को अपनाना पड़ेगा:

'आयुर्वेदो अमृतानां।' जय आयुर्वेद ! जय धन्वंतरी !

लेखक- वरिष्ठ आयुर्वेदाचार्य हैं।
डॉ. कुमार अरोज्योति
आयुर्द्वार क्लिनिक, जयी राजगुरु चौक स्टेशन रोड, पूरी, ओडिशा
पिन – 752002 ई मेल – ayurkumar@gmail.com

■

आलेख

सदृश विधान: होमियोपैथी

डॉ. राजीव सक्सेना

होमियोपैथी एक वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति है। इसके जनक जर्मनी के चिकित्सक डॉक्टर सीएफएस हैनीमैन है। लगभग 200 वर्ष पूर्व यह पद्धति उनके द्वारा आविष्कृत की गई थी। इस पद्धति का मूल सिद्धांत है Simlia simlibus curentaur अर्थात समान प्रकार के लक्षण सदृश रोग को समाप्त कर देते हैं। यह सिद्धांत भारत में पूर्व से ही विद्यमान रहा है जब हम कहते हैं कि, विषस्य विषमौधम, विष ही विष की काट करता है।

हैनीमैन ने यह पाया कि स्वस्थ शरीर पर, जिस औषधि को निरंतर खाने से, जो लक्षण उत्पन्न होते हैं यदि वैसे ही लक्षणों वाला कोई भी रोग हो तो, उस औषधि की शक्तिकृत अर्थात सूक्ष्म मात्रा देने से मूल रोग दूर हो जाता है।

उन्होंने कुनैन के प्रभाव का अध्ययन किया था, यह वस्तु स्वस्थ्य शरीर में शीत लगकर ज्वर उत्पन्न कर रही थी, यही औषधि अपने सूक्ष्म मात्रा में जूडीताप को दूर करती है। हैनीमैन का ग्रंथ ऑर्गनन होमियोपैथी की गीता है, इस महान ग्रंथ में, जिसके कि छह संस्करण निकल चुके हैं, इस चिकित्सा पद्धति की संपूर्ण दार्शनिकता का निरूपण करता है।

इस चिकित्सा पद्धति के मूलभूत सिद्धांत हैं

1. सदृश लक्षण उत्पन्न करने वाली औषधि सदृश रोग को समाप्त करते हैं।
2. औषधि की सूक्ष्म एवम न्यूनतम मात्रा ही रोगी को दी जानी चाहिए।
3. एक बार में एक औषधि ही पर्याप्त है।
4. रोगी की मूल प्रकृति होती है उसके अनुरूप ही औषधि दी जाती है, जो कि जीर्ण रोगों के लिए आवश्यक है।

इस पद्धति के अंतर्गत मानव शरीर में मूल जीवनी शक्ति और तीन प्रकृति मानी जाती हैं। तीन प्रकृति निम्नवत हैं

1. सोरा अर्थात जहां शरीर में प्रकार्यात्मक असंतुलन होता है।
2. साइकोसिस अर्थात जहां शरीर में कोई वृद्धि संबंधी सरंचनागत असंतुलन हो।
3. सिफलिस अर्थात जहां क्षरण होता हो। इन तीनों ही प्रकृति के, एकल, युगल या मिश्रण का स्वरूप ही लक्षणों के आधार पर पाया जाता है और फिर वैसे ही लक्षण उत्पन्न करने वाली औषधि क्रम की व्यवस्था की जाती है।

होमियोपैथी की औषधियां खनिज, वनस्पति, जंतु, रोग के श्राव और पदार्थों से, स्वस्थ्य जानवरों की अंगों से, सिंथेटिक कृत्रिम पदार्थों से और आकाशीय पिंडों या विभिन्न किरणों से, बनाई जाती हैं।

इन औषधियों को सूक्ष्म और शक्तिकृत करने के भी तीन मापदंड हैं

1. दशमिक क्रम अर्थात औषधि की एक मात्रा और विलायक की नौ मात्रा और पुन: इस मिश्रण का एक अंश निकाल कर पुन: दश मात्रा में मिलाना इस प्रकार यह क्रम आगे जाता है
2. शतमिक क्रम में औषधि की एक मात्रा और अल्कोहल की शत मात्रा
3. पचास सहस्त्र में, औषधि की एक मात्रा और पचास हज़ार भाग अल्कोहल औषधियों का यह मिश्रण और उनको शक्तिकृत भी किया जाता है, जो दुग्ध शर्करा में घिस कर या अल्कोहल में मिश्रित कर दो प्रकार से किया जाता है। कुछ औषधियां स्थूल रूप अर्थात मदर टिंक्चर स्वरूप में भी उपयोग की जाती हैं।

होमियोपैथी का यूं तो विश्व के 150 देशों में प्रचलन है परंतु भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, जर्मनी, में इस पद्धति का अधिक प्रचलन है, परंतु यह भी कि अब यह पद्धति निरंतर प्रचलित हो रही है। वर्तमान तक लगभग 4000 औषधियां खोजी जा चुकी हैं और इनको यदि उपर्युक्त तीन शक्ति क्रम में चलाया जाए तो कितना विशाल कोष है होमियोपैथी के पास। होमियोपैथी का ज्ञान बहुमूल्य है क्योंकि यह सरल है और सामान्य रूप से व्यवहृत भी होता है।

भारत में इस चिकित्सा पद्धति में स्नातक बीएचएमएस, परास्नातक एम डी और अब तो पीएचडी तक की डिग्री दी जाती है। इस पद्धति का सबसे बड़ा लाभ यह है कि सामान्य रूप से इसके साइड इफेक्ट नहीं होते हैं, औषधियां सस्ती होती हैं और जीर्ण रोगों में अति लाभकारी होती हैं। इस चिकित्सा पद्धति से सामान्य रूप में लगभग सभी रोगों का निदान किया जा सकता है।

लेखक- होम्योपैथी के विद्वान अध्येता हैं।
संपर्क : डी 102/10 शिवाजी नगर, भोपाल (म.प्र.)
मोबा. 9827238727

■

आहार और आयु का अंतर्संबंध

बृजेश मिश्रा

21 वी सदी में सबसे अधिक बिगड़ा है तो वो है हमारा आहार और विहार। हमें कब क्या खाना है, कब क्या करना है इसका एहसास ही नहीं है। आधुनिकता और दिखावा के इस दौड़ में हम तमाम वो काम कर रहे हैं, जो हमे बीमार करें ।

आजकल ज्यादातर लोग फास्ट फूड जैसे चाऊमिन, पिज्जा, बर्गर, पास्ता, आदि अधिक प्रयोग करते हैं और समय-असमय भोजन करते हैं तथा अधिक समय तक रात को जागते हैं। जिसके कारण पाचन क्रिया ठीक से नहीं होती है। व्यक्ति को अपच कब्ज, एवं तेजाब बनने लगता है। यदि व्यक्ति अपने आहार- विहार में शीघ्र सुधार कर लेता है तो उसका रोग शीघ्रातिशीघ्र शांत हो जाता है। यदि अपने आहार-विहार में सुधार नहीं करता है तो वह सदैव रोगी बना रहता है। जिसके कारण न तो वह अपना दैनिक कार्य ही समुचित रुप से कर सकता है। उसका शरीर जीर्ण-शीर्ण हो जाता है। फलस्वरुप वह विविध रोगों से ग्रस्त हो जाता है। आमाशय (पेट) ही सभी रोगों का घर कहा गया है। यदि व्यक्ति का पेट ठीक है तो उसका स्वास्थ्य, शरीर के अंग-प्रत्यंग और मन प्रसन्न रहता है। जिससे वह सुखी एवं स्वस्थ रहता है। इसके अतिरिक्त वह सौ बसन्त तक जीवित रहता है।

आयुर्वेद का सिद्धांत है कि-

स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणं ।आतुरस्य विकार प्रशमनं चः।।

अर्थात स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना और आतुर यानी रोगी के रोग को दूर करना अर्थात रोगी को निरोगी बनाना।

मनुष्य रोग मुक्त रहे इसका विचार भारत में प्राचीन काल से होता रहा है। मनुष्य के शरीर एवं प्रकृति पर यहां लम्बे समय तक प्रयोग एवं परीक्षण हुए हैं जिनका उल्लेख **चरक, जीवक, वाग्भट** जैसे विद्वानों ने किया है।भारत जैसे विविध ऋतुओं तथा अनेक प्राकृतिक संसाधनों से युक्त देश में सब कुछ है। बस उन्हें पहचानना है और अपने स्वास्थ्य के लिए उनका उपयोग करना हैं। हमारा आहार-विहार देश काल, समय, ऋतु, दिनचर्या के अनुसार होना चाहिए। इन सभी विषयो को इस लेख के माध्यम से समझने की कोशिश करेंगे।

प्रकृति (वात, पित्त,कफ) के अनुसार हो आहार-विहार

आयुर्वेद के अनुसार यदि व्यक्ति अपने खान-पान रहन-सहन को अपनी प्रकृति के अनुसार रखें तो उसके बीमार पड़ने की संभावना बहुत कम हो जाती है प्रकृति का अर्थ होता है स्वभाव या बनावट आयुर्वेद के अनुसार जन्म लेते ही प्रत्येक व्यक्ति की अपनी अपनी प्रकृति होती है। कोई वात प्रधान होता है, कोई पित्त प्रधान होता है तो कोई कफ प्रधान होता। उसी प्रकृति के अनुसार ही शारीरिक मानसिक रचना और अन्य स्वभाव व आदतें निर्धारित होती हैं । उसका मोटा या दुबला होना पढ़ने में तेज या कमजोर होना चंचल या स्थिर होना यहां तक कि उसे भविष्य कौन सी बीमारियां होंगी या हो सकती हैं । ये भी प्रकृति पर ही निर्भर करता है। अक्सर हम पाते हैं कि कोई व्यक्ति गर्मी के मौसम में आइसक्रीम खा ले तो उसे जुकाम हो जाता है और कोई जाड़े में आइसक्रीम खाता रहता है पर उसे कुछ नहीं होता है। ऐसा होता है उसकी प्रकृति के कारण आयुर्वेद में जो न केवल एक चिकित्सा प्रणाली है बल्कि जीवन जीने का विज्ञान भी है कहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी प्रकृति का ज्ञान अवश्य होना चाहिए यदि उसे अपने प्रकृति का ज्ञान हो तो वह अपना खान-पान रहन-सहन उसके अनुसार रखें तो उसके बीमार पड़ने की संभावना बहुत कम हो जाती है।

वात प्रकृति के लिए आहार-विहार

वात प्रकृति के लोग पतले दुबले होते हैं हर समय तनाव में रहते हैं ज्यादा बोलते हैं पाचन क्रिया कमजोर होती है तो ऐसे लोगों के लिए जरूरी है कि वह अपने खाने और सोने का समय निर्धारित करें और इसका कड़ाई से पालन करें। वात प्रकृति के लोगों को वात संबंधी रोगों से बचने के लिए भोजन में चिकनाहट, घी , तेल आदि का सेवन अवश्य करना चाहिए क्योंकि वात प्रकृति के लिए सर्वोत्तम उपचार बताया गया स्नेहन। दूध और दूध से बने हुए पदार्थ अच्छा होता है। इस प्रकृति के लोगों भोजन में कटु,तिक्त, कषाय रस का प्रयोग कम करना चाहिए। व्यायाम भी कम करना चाहिए।

पित्त प्रकृति के लिए आहार-विहार

इस प्रकृति के लोग आमतौर पर बहुत ही आकर्षक और तेज दिमाग वाले होते हैं। इस प्रकृति के लोगों के अंदर बहुत गर्मी होती है। इसलिए इन्हें गर्म चीज खाने से बचना चाहिए । इनके लिए ठंडी चीज शरीर में सही संतुलन को बनाए रखने के लिए आवश्यक है इन्हें सूर्य की सीधी किरणों में जाने से बचना चाहिए।

पित्त प्रकृति के लोगों को हर दो-दो घंटे पर कुछ खाते रहना चाहिए किंतु ऐसा आहार लेना चाहिए जो पित्त प्रकृति के अनुकूल हो और हितकर हो।

इस प्रकृति के लोगों को रसभरी व मीठे फलों का सेवन अधिक करना चाहिए और इमली जामुन से संतरा जैसे खट्टे फलों का सेवन कम करना चाहिए। तीखा कम खाना चाहिए।

कफ प्रकृति के व्यक्तियों के लिए आहार-विहार

कफ प्रकृति के लोगों के लिए व्यायाम काफी महत्वपूर्ण है। कफ बढ़ाने के अनेक कारणों में से एक कारण हमारा खान-पान है। मिठाइयां, मक्खन, खजूर, नारियल, उड़द की दाल, किला आदि का अधिक सेवन शरीर में कफ प्रवृत्ति को बढ़ाता है दिन में सोने और फास्ट फूड के अधिक सेवन से भी शरीर में कफ पड़ता है तो कफ प्रकृति के व्यक्तियों को इनका सेवन नहीं करना चाहिए।

ऋतुओं और मौसम के अनुसार आहार-विहार

हिंदुस्तान में मौसम की विविधता होती है, जिसको तीन मौसम ठंडी, गर्मी, वर्षा में बांटा गया है और इन तीन मौसम को छः ऋतुओं (बसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, शिशिर और हेमंत) ऋतुओं में बांटा गया है। हमारा आहार-विहार इन्ही ऋतुओं के अनुसार हो उसकी चर्चा चरक संहिता, सुश्रुत संहिता, अष्टांग हृदय जैसे आयुर्वेद ग्रंथों में विस्तृत वर्णन है। आहार के लिए घाघ की ये लोक कहावत बहुत चर्चित है:

चैते गुड़ बैसाखे तेल, जेठ में पंथ आषाढ़ में बेल।
सावन साग न भादों दही, क्वारें दूध न कातिक मही।
मगह न जारा पूष घना, माघे मिश्री फागुन चना।

घाघ! कहते हैं कि चैत (मार्च-अप्रेल) में गुड़, वैशाख (अप्रैल-मई) में तेल, जेठ (मई-जून) में यात्रा, आषाढ़ (जून- जुलाई) में बेल, सावन (जुलाई-अगस्त) में हरे साग, भादों (अगस्त-सितम्बर) में दही, क्वार (सितम्बर-अक्तूबर) में दूध, कार्तिक (अक्तूबर-नवम्बर) में मट्ठा, अगहन (नवम्बर-दिसम्बर) में जीरा, पूस (दिसम्बर-जनवरी) में धनियां, माघ (जनवरी-फरवरी) में मिश्री, फागुन (फरवरी-मार्च) में चने खाना हानिप्रद होता है। ये सिर्फ कहावत ही नही ये विज्ञान है, जिसे आज की पीढी को समझना होगा जो ठंड के मौसम मे भी आइसक्रीम, कोल्ड ड्रिंक इत्यादि का सेवन करती है दिखावा के चक्कर में हम कभी भी कुछ भी खाने लगे है।

वसंत ऋतु शीत और ग्रीष्म का संधिकाल काल होता है। संधि होने से थोड़ा-थोड़ा असर दोनों ऋतुओं का होता है। इस ऋतु में कफ प्रकोप होता है। जिसके कारण इन दिनों सर्दी, खासी, जुकाम होता है इसलिए अच्छा यही है कि कफ कुपित करने वाले आहार विहार धीरे-धीरे छोड़ दिया जाय। वसंत ऋतु में होली आती है, उस समय हम सोंठ और गुण की गोझियाँ खाने की परंपरा रही है, सोंठ और गुण दोनों ही कफ रोगों में लाभप्रद होते हैं लेकिन सोंठ और गुण की गोझियाँ का स्थान अब खोवा, ड्राई फ्रूटस और चीनी ने ले लिया है जो कफ को और बढ़ाता है।

ग्रीष्म ऋतु में हमें अत्यधिक गर्मी के कारण शरीर से जलीय और स्निग्ध अंश बाहर निकल जाता है। जिसके कारण दुर्बलता, थकान, बेचैनी आदि का अनुभव होता है। अतः इस ऋतु में सत्तू का सेवन, आम का पना, गन्ने का रस, शिंकजी, मीठा आदि सेवन करना चाहिए। केवल इस ऋतु में दिन में सोने की छूट दी गई है। गर्मियों के दिनों में तरबूज, खरबूज, संतरा आदि मौसमी फलों का सेवन करना चाहिए।

वर्षाऋतु में वात का कुपित होता है, अतः इस ऋतु बुजुर्गो वातजन्य रोगों के मरीजों विशेष रूप से वात वर्धक खान-पान रहन-सहन से बचना चाहिये। इस ऋतु में चिकनाई वाले भोजन करना चाहिए, खाने मे घी का अवश्य सेवन करना चाहिए। इसीलिए इन दिनों घेवर आदि स्निग्ध मिठाइयों के खाने का प्रचलन है।

शरद ऋतुचर्या वर्षा और शीतकाल का संधिकाल होता है। आकाश साफ और निर्मल होने के कारण इन दिनों धूप गर्मियों से भी ज्यादा तीखी होती हैं। शरद ऋतु में पित्त कुपित होता है, इस ऋतु में खीर खाने का विधान है, खीर पित्त का शमन करता है , ध्यान रहे कि खीर में ड्राई फ्रूट इत्यादि ना डाले। इस ऋतु में आइसक्रीम, कोल्ड ड्रिंक इत्यादि का सेवन नही करना चाहिए। इस ऋतु मे एसिडिटी, रक्तपित्त, चर्म रोग आदि होते है।

शीतकाल में हेमंत और शिशिर ऋतुयें आती हैं। इन दिनों खानपान वर्षभर के लिए रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है। शीतकाल के तीन- चार महीनों में बनाए जाने वाले प्रमुख व्यंजनों में अनेक प्रकार के स्वास्थ्यवर्धक पाक, मेवे, उड़द के बने हुए पदार्थ, गुड़, मुंगफली, दूध, सौंठ की मिठाई प्रमुख है, जो स्वादिष्ट और सुपाच्य होती है तो स्वास्थ्य की दृष्टि से दवा का काम करती है। शीत के प्रतिकार हेतु तिल और तेल का उपयोग अति आवश्यक है। तिल-गुड़ के पदार्थ स्वास्थ्यकर होते हैं। बादाम की अपेक्षा तिल में छह गुना से भी अधिक कैल्शियम है, तिल विशेषतः अस्थि, त्वचा, केश व दांतो को मजबूत बनाता है। इसलिए इस ऋतु में आने वाले व्रत त्योहारों में तिल के सेवन करने के लिए कहा गया है।

शिशिर ऋतु को स्वास्थ्य साधना की ऋतु है इस ऋतु में पौष मास आता है। जो पुष्टि का मास है। आयुर्वेद ग्रंथों केवल शिशिर ऋतु में सुबह का नाश्ता करने के लिए कहा गया है। हेमंत और शिशिर लिया गया पौष्टिक आहार वर्षभर शरीर को तेज, बल और पुष्टि प्रदान करता है।

कहा क्या खाएं

हमारा आहार देश के अनुसार होना चाहिए। हमें प्रकृति वही देती भी है, जो हमारे लिए स्वास्थ्यप्रद होते है।

आयु के अनुसार :

बाल्यकाल में कफ की अधिकता रहती है। जल एवं पृथ्वी तत्त्वों की प्रधानता रहती है। बचपन सर्दी, खाँसी जुकाम अधिक होता है। कफ ऊर्जा से ही शरीर का ठोस ढाँचा वृद्धिमान होता है। जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होता है, उसकी कफ ऊर्जा धीरे-धीरे घटती जाती है और पित्त ऊर्जा बढ़ती जाती है। बचपन उन आहारों का सेवन नही करना चाहिए जो कफ

दोष को बढ़ाये। आयुर्वेद के अनुसार बालपन सत्रह वर्षों की आयु तक रहता है।

युवा अवस्था में पित्त ऊर्जा की प्रमुखता रहती और अग्नि तत्त्व बढ़ा हुआ होता है। आयु बढ़ने के साथ-साथ पित्त ऊर्जा घटती जाती है और वात् ऊर्जा प्रमुख होती जाती है। युवा अवस्था में तिखा, खट्टा, चटपटा और पित्त को बढ़ाने वाले आहार नहीं करने चाहिए।

वृद्धावस्था में वातप्रधान होती जाती है। अवस्था में जोड़ों का दर्द बढ़ जाता है।

दिन का समय: सवेरे के समय के कुछ घंटों तथा सन्ध्याकाल में कफ की प्रधानता होती है, अर्थात् प्रात: छह बजे से दस तक तथा शाम के छह से दस बजे तक कफ ऊर्जा की प्रमुखता रहती है। इसके बाद यानी प्रात: दस बजे से दोपहर दो बजे और रात के दस बजे से मध्य रात्रि दो बजे तक शरीर में पित्त ऊर्जा बढ़ी रहती है। इसके बाद अपराह्न में दो बजे से छह तक तथा रात्रि में दो बजे से प्रात: छह बजे तक वात् ऊर्जा की प्रधानता होती है। यह समय सूची ग्रीष्म एवं शीतऋतु में थोड़ी आगे-पीछे हो सकती है।

एक कहावत है कि **'सुबह का खीरा हीरा, दोपहर में खीरा खीरा और रात में खीरा पीरा'** अर्थात अगर सुबह खीरा खाते हो तो उसका फायदा हीरा के समान है, दोपहर में खाते है तो केवल खीरा है और रात्रि में खाते हैं तो रोग है।

विरुद्ध आहार करने से बचे। किस भोजन के बाद कौन सा आहार स्वीकार है। कौन विष के समान है इसकी लम्बी फेहरिस्त है। **उदाहरण इस प्रकार है:**

पक्का कटहल खायके फिर लो पान चबाय। पेट फुलै सांसा रुके और तुरन्त मरि जाय। (पक्का कटहल खाना के बाद पान नहीं खाना चाहिए) दूध के साथ फलों का सेवन ना करे। दूध के साथ नमक सेवन नहीं करना चाहिए। समान मात्रा में शहद और घी का सेवन नहीं करना चाहिए। इस प्रकार अगर हम आहार-विहार के नियमों का पालन करके स्वस्थ रह सकते है।

(लेखक 'भारतीय धरोहर' पत्रिका के संपादकीय विभाग से जुड़े हुए हैं)
संपर्क : D-76, Ground Floor, Sector-51,
Noida Sector 51, Noida - 201307
(Be Side LPS Global School, Sector-51)
Mob.: 7651897223

पत्रिका ही नहीं, एक रचनात्मक अनुष्ठान

पत्रिका मुफ्त मांग कर, कृपया हमारे अनुष्ठान को आघात न पहुँचाएं

'कला समय' के सदस्य बनें- ❍ पत्रिका की वार्षिक/द्वैवार्षिक /आजीवन सदस्यता ग्रहण करें। सदस्यता शुल्क मनीआर्डर, ड्राफ्ट, ऑनलाइन अथवा व्यक्तिगत रूप से भुगतान किया जा सकता है।

'कला समय' की एजेंसी के नियम- ❍ आपके गांव, कस्बे, शहर में सांस्कृतिक पत्रिका 'कला समय' की एजेन्सी के लिए सम्पर्क करें। ❍ कम से कम दस प्रतियों से एजेन्सी शुरू की जायेगी। ❍ पत्रिका कुरियर अथवा रजिस्टर्ड बुक पोस्ट से भेजी जायेगी। डाक खर्च एजेन्सी को वहन करना होगा। ❍ कमीशन, प्रतियों की संख्या के आधार पर।

स्थायी तथा सम्पादकीय पता और दूरभाष क्रमांक के साथ सम्पर्क करें- जे-191, मंगल भवन, महावीर नगर, ई-6, अरेरा कॉलोनी, भोपाल- 462016 Email : bhanwarlalshrivas@gmail.com मो. 9425678058, 0755-2562294

लेखकों/कलाकारों से ❍ कला, संस्कृति साहित्य एवं समसामयिक विषयों के अछूते पहलुओं पर सृजनात्मक, शोधात्मक और सूचनात्मक आलेख, टिप्पणियां, रिपोर्ताज, साक्षात्कार, ललित निबंध, कविताएँ, छायाचित्र, रेखांकन तथा शोध आमंत्रित हैं। ❍ रचनाएँ कागज के एक ओर टाइप की हुई तथा मौलिकता का प्रमाण पत्र संलग्न हो। कृपया रचना के साथ पर्याप्त डाक टिकिट लगा लिफाफा भी संलग्न करें। रचनाएँ और चित्र ई-मेल से भी भेजे जा सकते है।

प्राथमिकता के साथ : Chanakya फोंट / वर्ड फाइल / PDF फॉर्मेट में ही भेजें।

अनुरोध : **वे सदस्य जिनका वार्षिक / द्विवार्षिक सदस्यता शुल्क समाप्त हो रहा है, कृपया अपनी सदस्यता का नवीनीकरण करायें। सदस्यों को पत्रिका साधारण डाक से भेजी जाती है। नहीं मिलने की स्थिति में सदस्यता शुल्क के साथ 150/- का प्रतिवर्षानुसार रजिस्टर्ड डाक शुल्क अतिरिक्त भेजा जाना होगा।**

-संपादक

आलेख

बहुत प्रभावी है आयुर्वेदिक न्यूरो थैरेपी

डॉ. भंवरलाल शर्मा

आयुर्वेद सचमुच जीवन विज्ञान है और उसके ज्ञान का अथाह समन्दर है। इसे भारतीय चिकित्सा पद्धति होने का गौरव प्राप्त है। दक्ष चिकित्सकों ने सदैव इस ज्ञान और उसकी पद्धतियों को लोकप्रिय बनाने और उनमें अपनी ओर से जोड़कर स्थापित करने का प्रयास किया है। चिकित्सा के लिए निदान और उपचार की विधियां अनेक भेदों वाली हैं।

इसी क्रम में कोटा के डॉ. मनोज शर्मा ने अपना शोध जोड़ कर गजब योगदान दिया है और इसके लिये निश्चय ही वे प्रशंसा के पात्र हैं। एक महत्वपूर्ण बात यह है कि प्राप्त ज्ञान को मात्र अपने लिये नहीं रखा बल्कि गुरु शिष्य परम्परा का निर्वाह करते हुवे अब तक एक हजार से अधिक लोगों में उदारता पूर्वक बांटा है और यह पुण्यकार्य आज भी जारी है।

इसके चलते पूरे भारत में और भारत के बाहर भी बडी़ संख्या में लोग रीढ़ की हड्डी और शरीर के जोडो़ के रोगियों की सफलता पूर्वक चिकित्सा कर रहे हैं। स्वयं शर्माजी ने इन्हीं लोगों को साथ लेकर पूरे देश के अलग अलग प्रान्तों में सैकड़ों चिकित्सा शिविर आयोजित कर लाखों लोगों को स्वास्थ्य लाभ दिया है। गोवा और सौल्हापुर शिविरों में तो एशिया बुक रिकार्ड में आयुर्वेद न्यूरो थेरेपी का नाम दर्ज हुआ है। अन्तरराष्ट्रीय मेंगजीन में भी फ्रोजन सोल्डर और ए वी न को लेकर आर्टिकल प्रकाशित हुये है। अकेले गोवा में लगातार पांच केम्प होना बहुत बडी़ उपलब्धि है।

अब कन्धे, कुल्हे, घुटने और रीढ़ से जुडी़ सर्जरी आवश्यक नहीं रह गयी है। इन उपलब्धियों के चलते भारत सरकार ने स्कील डवलपमेन्ट में इसे स्थान दिया है और आयुर्वेद विद्यापीठ दिल्ली ने श्री शर्माजी को राष्ट्रीय गुरु का सम्मान दिया है।

आइये, अब जानते हैं इस पूरे रिसर्च के बारे में। डॉ. शर्मा को बचपन में सर्वाइकल की जब समस्या हुयी तो इनकी दादी ने दो पांच मिनिट में ही सामान्य मसाज देकर ठीक कर दिया था। उनके पास इस तरह के रोगी आते रहते थे और दादी सबको स्वास्थ्य लाभ प्रदान करती। यही समस्या उन्हें सीकर आयुर्वेद कालेज में पढ़ाई के दिनों फिर हुयी। स्वयं चिकित्सा ली। बहुतेरे चिकित्सकों की मदद भी जब सहायक न हुयी तो दादी याद आयी और शर्माजी उनके पास पहुंचे। अब बूढ़ी हो गयी थी वे फिर भी अपने पोते की तकलीफ को साहस पूर्वक अपने कौशल से मिनिटों में ठीक कर दिया। उन दिनों तक भी दादी के पास रोगी आते थे उनमें महिलाएं भी होती थी जिन्हें स्त्री रोगों से छुटकारा मिलता था। बस उसी दिन से प्रेरणा मिली और इस दिशा में आगे कुछ करने की चाह जगी।

दस साल से अधिक समय लगा। सतत श्रम रंग लाया और आज के स्वरुप में आयुर्वेदिक न्यूरो थेरेपी का जन्म संभव हुआ जो आज चिकित्सा जगत में अपना विशिष्ट स्थान बना पाने में सफल हो सकी।

यह थेरेपी शरीर की मेटाबोलिज्म क्रियाओं को बढ़ा कर आक्सीजन की सप्लाई द्वारा कोशिका निर्माण की प्रक्रिया को सुचारू करती है जिससे शरीर के डेमेज आर्गन पुन: अपनी कार्य क्षमता को प्राप्त कर देह को स्वस्थ बनाती है। यह सुषुम्ना नाड़ी की शक्ति को जागृत कर सप्त चक्रों की उर्जा को शरीर में प्रवाहित कर रोग से लड़ने की क्षमता को बढ़ाती है जिससे शरीर रोग मुक्त हो जाता है। यह कोशिका स्तर पर अपना काम करती है। इस थेरेपी में पूरे नर्वस सिस्टम और शरीर के प्रत्येक जोड़ के लिये अलग अलग थेरेपी है। शोल्डर, एल्बो, कार्पल, हिप जोइन्ट, घुटने, टखने सबके लिये अलग – अलग छोटी लेकिन असरदार तकनीक है। पेट के लिये भी है जो सब रोगों में उपयोगी है। महिलाओं की श्र्वष्वस्र की समस्या को समूल नष्ट करने की थेरेपी है। एन्क्लोजिग स्पोण्डिलाइटिस, पक्षाघात डिप्रेशन, अनिद्रा, अर्पित, माइग्रेन, वोकल कार्ड साइनोसाइटिस सबके लिये।

हम कह सकते हैं कि आयुर्वेदिक न्यूरो थेरेपी अब पूरे शरीर के लिये है। लोगों को अकारण सर्जरी से बचाती है। असाध्य रोगों तक से मुक्ति दिला कर जीवन से हार चुके लोगों में पुन: आस्था पैदा करती है। अत: कहा जा सकता है कि डॉ. मनोज शर्मा की यह साधना आज चिकित्सा जगत के लिये बहुत महत्वपूर्ण योगदान है। इस सफलता के पीछे उनकी दादी से प्राप्त प्रेरणा के साथ ही प्रतिपल उनकी धर्म पत्नी डॉ. वेणु शर्मा का भरपूर सहयोग मिला है।

आयुर्वेदिक न्यूरो थेरेपी के जनक डॉ. मनोज शर्मा वर्तमान में कोटा में भारत के पहले आयुर्वेदिक न्यूरो हास्पिटल के निदेशक है जहां बड़ी संख्या में विदेशों तक से रोगी स्वास्थ्य लाभ हेतु आते हैं और आयुर्वेद की जयकार करते लौटतें हैं। विगत दस सालों से तो मैं उनके साथ रहा हूँ। हर सच्चाई का गवाह हूँ।

गुरु शिष्य परम्परा के प्रशिक्षण के प्रथम बेच में और राजस्थान का पहला विद्यार्थी होने की प्रसन्नता मुझे आज भी है यह इसलिये भी कि राजकीय सेवा से निवृत होने के बाद मैं इसमें प्रवृत हुआ हूँ। अभी पिछले दिनों ही लाइफ टाइम एचिवमेन्ट अवार्ड मुझे मिला है। एक समर्थ गुरु का शिष्य होकर मैं गौरवान्वित हूँ। ईश्वर से प्रार्थना है। यह आयुर्वेदिक न्यूरो थेरेपी सारे संसार के लिये कल्याणकारी हो।

लेखक – वरिष्ठ आयुर्वेद चिकित्सक रहे हैं।
सम्पर्क : पोस्ट : पहुंना जिला चितौड़गढ़ (राजस्थान)
पिन : 312206 मोबाइल : 9928311023

■

आलेख

वैदिक सूक्त और औषध प्रयोग

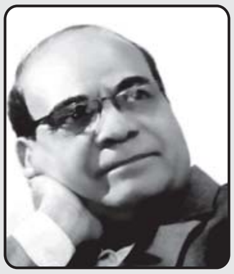

मुरलीधर चांदनीवाला

ओषधियों से बातचीत के रोचक संदर्भ वैदिक सूक्तों में हैं। मनुष्य शरीर है, तो उसकी रक्षा के लिये असंख्य ओषधियाँ भी इसी पृथ्वी पर हैं। मनुष्य ने रोग हर लेने वाली ओषधियों को छूकर, सूंघ कर और चखकर देखा, वह उनके चमत्कारिक नतीजों पर पहुँचा और धीरे-धीरे उसने विशाल ओषधि-विज्ञान को मनुष्य की सेवा के लिये सहेज लिया। ऋग्वेद के दशम मंडल के सूक्त (10:97) का जो ऋषि है, वह भिषक् भी है। भिषकाथर्वण ऋषि को देखिये यहाँ, वह ओषधियों के सम्मुख किस कृतज्ञ भाव से खड़ा है। वह ओषधियों को बार-बार 'माँ' और 'देवी' कहकर सम्बोधित कर रहा है। वह ओषधियों से ऐसे बातें कर रहा हैं, जैसे वे सुनने के लिये ही बैठी हों। हिन्दी साहित्य के छायावाद का स्मरण आता है। ओषधियों का मानवीकरण काल्पनिक नहीं, वह ऋषि के लिये तथ्य पर आधारित है। वेदों में और बाद के उपनिषदादिग्रंथों में '**ओषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिः**' में बार-बार प्रार्थना की गई है कि 'वनस्पतियों मे शान्ति हो, ओषधियों में शान्ति हो।' यह शान्ति प्राणीजगत की शान्ति का मूल माना गया। एक जगह 'माध्वीर्न सन्त्वोषधीः' कहकर ओषधियों के मधुर होने की कामना भी मिलती है। यहाँ इस सूक्त में ओषधियाँ आपस में संवाद करती हुई मालूम होती हैं, वे रुग्ण व्यक्ति से भी बात करती हैं, रोग से भी बात करती हैं। ओषधियों को समर्पित यह आदिम कविता है, जो हमें उस अरण्य में ले चलती हैं, जहाँ नाना प्रकार के गुण-धर्मों से लबालब भरी हुई असंख्य ओषधियाँ लहलहा रही हैं। ये ओषधियाँ किस तरह मनुष्य के जीवन की रक्षा के लिये आईं, और किस तरह वे संजीवनी सिद्ध हुईं, इसके विवरण यह सूक्त देता है। ओषधियों को निवेदित यह सूक्त हमें उनके प्रति कृतज्ञ होने का अवसर प्रदान करता है।

ऋग्वेद का दशम मंडल (सूक्त-97) पठनीय है जिसके ऋषि भिषगाथर्वणः लगते हैं।

या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा।
मनै नु बभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च।।
(10:97:1)

हे मातृस्वरूपा ओषधियो !
तुम तीनों युगों में उत्पन्न होती हो
प्राणी मात्र की जीवन रक्षा के लिये।
मैंने तुम्हारी शक्तियों पर विचार किया,
तुम्हारे पास एक सौ सात प्रकार के तेज हैं।।1।।

हे अम्ब ! तुम्हारे तेज शताधिक हैं,
और तुम्हारे प्रभाव के हैं सहस्रों प्रकार।
हे शत-शत शक्तियों वाली ओषधियो !
तुम मेरे शरीर को रोगमुक्त करो।।2।।

हे ओषधियो ! तुम विकसित होओ,
पुष्पित होओ, फलित होओ।
जैसे समर में अश्व होते हैं विजयी,
तुम सब रोगों पर विजय प्राप्त करो।।3।।

हे ओषधियो ! तुम मातृतुल्या हो,
मैं तुम्हें देवी ही कहता हूँ।
तुम मेरी इन्द्रियों को, मेरे देह-वस्त्र को,
मेरी आत्मा को उत्कर्ष दो।।4।।

हे ओषधियो ! तुम इस अस्थिर शरीर में ही हो,
हमें स्वस्थ रखने के लिये ही तुम यहाँ हो।
तुम इन्द्रियों को जगाये रखती हो,
हमारी चित्तवृत्ति को शान्ति दो।।5।।

हे ओषधियो ! तुम हमारे साथ सुसंगत हो,
जैसे कोई राजा समितियों के साथ।
जो तुम्हें जानता है, वह भिषक् है,
वही है रोग के कारण का संहारक।।6।।

मैं वह ओषधि प्राप्त करता हूँ,
जो इन्द्रियों में फिर नयी चेतना जगा दे,
जो उत्साह की ऊर्जा से भर दे।
मैं उन सब ओषधियों को प्राप्त करता हूँ,
जो जीवन-शक्ति का विस्तार कर दे।।7।।

जैसे गायें गोष्ठ से बाहर निकलती हैं,
वैसे ही ओषधियों के गुण-धर्म भी।
हे ओषधियो ! तुम आओ,
अपना रोग-मारक शस्त्र उठाकर आओ।।8।।

यह भूमि सबकी जन्मदात्री है, अन्नदात्री है,
किन्तु हे मातृस्वरूपा ओषधियो !
तुम हमारे रोगों को बाहर करने वाली हो।
तुम पुरुष की नाड़ियों में पहुँचती हो,
रोग को जड़ से उखाड़ फेंकती हो।।9।।

तुम अंदर तक प्रवेश कर
आक्रमण करती हो रोगाणुओं पर।
जैसे चार चुरा ले जाता हैं गोधन,
तुम चुरा ले जाती हो रोगों को।
तुम शरीर के सब दोषों को च्युत करती हो।।10।।

रोगी के भीतर ऊर्जा संचरित करते हुए
मैं ओषधियों को हाथ में धारण करता हूँ।
जैसे व्याध के सामने आया हुआ नष्ट होता है,
तुम्हारे सामने आये रोग की आत्मा नष्ट हो।।11।।

तुम जिस-जिस अंग-अंग में,
जिस-जिस पर्व-पर्व में गति करती हो,
वहाँ-वहाँ से रोग को वैसे ही बाधित करती हो,
जैसे राजा राष्ट्र के उपद्रवों को।।12।।

हे रोग ! तू पित्त विकारों के साथ
इस शरीर से दूर हो जा।
हे रोग ! तू कफजनित विकारों के साथ
इस शरीर से दूर हो जा।
हे रोग ! तू वातजनित विकारों के साथ
इस शरीर से दूर हो जा।
तू प्रबल पीड़ा के साथ अदृश्य हो जा।।13।।

हे ओषधियो ! तुम एक-दूसरी की रक्षा करो,
एक-दूसरी के साथ मिलकर द्विगुणित होओ।
हे ओषधियो !
तुम सब परस्पर मिलकर
मेरे इन वचनों की भी रक्षा करो।।14।।

जो ओषधियाँ फल वाली हैं
या बिना फल वाली हैं,
जो औषधियाँ फूल वाली हैं
या बिना फूल वाली हैं,
जो ओषधियाँ बृहस्पति का प्रसाद हैं,
वे ओषधियाँ हमें कष्ट से मुक्त करे।।15।।

हे ओषधियो ! अग्निजनित रोगों से मुक्त करो,
हे ओषधियो ! जलजनित रोगों से मुक्त करो,
हे ओषधियो ! वायुजनित रोगों से मुक्त करो।
हमें देवकोप से उत्पन्न रोगों से मुक्त करो।।16।।

वृष्टि-जल के साथ नीचे उतरती हुई
ओषधियाँ आपस में बात करती हैं कि
हम जिस जीव को मिल जाती हैं,
वह किसी रोग से नहीं मरता।।17।।

जो ओषधियाँ सोमराज्ञी है, शक्तिदायिनी हैं,
जो सब प्रकार से हमारी रक्षिका हैं,
उनमें हे सोम ! तुम सबसे उत्तम हो।
हमारी कामना पूरी कर हृदय को शान्ति दो।।18।।

जो ओषधियाँ सोमराज्ञी हैं,
पृथ्वी के गुण-धर्म से सुसमृद्ध हैं,
जो भिषक् से प्रेरित हैं,
वे रुग्ण शरीर में आरोग्य का संचार करें।।19।।

हे ओषधियो ! तुम्हें खोदने वाला हिंसित न हो,
जिसके लिये तुम्हें खोदता हूँ, वह हिंसित न हो।
हमारे द्विपद-चतुष्पद सब रोगों से मुक्त रहें।।20।।

जो ओषधियाँ यह स्तुति सुन रही हैं,
और जो दूर प्रदेशों में ही सुलभ हैं,
वे रुग्ण शरीर में आरोग्य का संचार करें।।21।।

ओषधियाँ राजा सोम के साथ
संवाद करती हुई कहती हैं-
हे राजन ! जो भिषक् हमें पा लेता है,
हम उसके साथ मिलकर
रोगी को पूर्णत: रोगमुक्त करें।।22।।

हे ओषधियो ! तुम उत्तम हो,
सब वनस्पतियाँ तुम्हारी अनुगामिनी हैं।
जो रोग हमें अपने अधीन रखना चाहता है,
वह पदाक्रांत हो, हमारे अध:शायी हो।।23।।

(रचनाकार ने ऋग्वेद का 10 खंडों में काव्यानुवाद किया है।)

सम्पर्क : 7, प्रियदर्शिनीनगर, रतलाम (मध्यप्रदेश) 457001
मोबाइल नंबर 9424869460

जीवन की गुणवत्ता सुधारती हैं जड़ी बूटियाँ

वैद्य शोभालाल औदिच्य

भारतीय आयुष्य संस्कृति मूल रूप में आयुर्वेद को जीवन में ढालने की अवधारणा है। आयुर्वेद भारत की प्राचीनतम चिकित्सा पद्धति है जिसका उद्देश्य केवल रोगों का उपचार करना नहीं है, बल्कि समग्र रूप से स्वास्थ्य की रक्षा करना है। यह पद्धति न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को ध्यान में रखती है, बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य को भी महत्वपूर्ण मानती है। आयुर्वेद का मूल सिद्धांत है कि प्रत्येक व्यक्ति अद्वितीय है और इसलिए प्रत्येक रोगी का उपचार भी व्यक्तिगत होना चाहिए। आयुर्वेद केवल रोगों का उपचार नहीं करता, बल्कि रोगी की प्रकृति, दोषों के संतुलन और जीवनशैली के आधार पर समग्र रूप से शरीर और मन का उपचार करता है। **महर्षि सुश्रुत और चरक** जैसे आयुर्वेद के महान आचार्यों ने अपने ग्रंथों में जीवन उपयोगी जड़ी-बूटियों का वर्णन किया है, जिनका उपयोग सदियों से रोगों के उपचार में किया जा रहा है। इन जड़ी-बूटियों का प्रमुख उद्देश्य शरीर के दोषों को संतुलित करना, रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाना, और जीवन की गुणवत्ता को सुधारना है। अब हम उन प्रमुख जड़ी-बूटियों का वर्णन करेंगे, जो आयुर्वेद में विशेष महत्व रखती हैं। इनमें से प्रत्येक जड़ी-बूटी का उपयोग करने के तरीके, इसके लाभ, और आचार्यों के मत के आधार पर इसके गुणों का विस्तृत वर्णन करेंगे :

1. गिलोय (Tinospora Cordifolia) गुण और फायदे: गिलोय, जिसे 'अमृता' भी कहा जाता है, एक प्रभावी आयुर्वेदिक जड़ी-बूटी है। यह शरीर की रोग-प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने के लिए प्रसिद्ध है। गिलोय का उपयोग बुखार, सर्दी-जुकाम, डेंगू और मलेरिया जैसी बीमारियों में किया जाता है। यह यकृत को डिटॉक्सीफाई करता है और पाचन क्रिया को सुधारता है। गिलोय का नियमित सेवन शरीर को ताकत और ऊर्जा प्रदान करता है। उपयोग की विधि: गिलोय का काढ़ा, पाउडर या टैबलेट के रूप में सेवन किया जा सकता है। सामान्यत: इसे एक से तीन ग्राम की मात्रा में लिया जाता है।

आचार्य चरक का मत है:

'गुडुच्या: कषायस्तिक्त: कटुस्तथारसा:।
कफवातहर: प्रोक्त: पचनो दीपनश्च स:॥'

(चरक संहिता, सूत्रस्थान)

महर्षि चरक ने गिलोय के तिक्त (कड़वे) और कटु (तीखे) रसों के गुण का वर्णन किया है, जो कफ और वात दोष को हरते हैं और पाचन को सुधारते हैं।

2. अश्वगंधा (Withania Somnifera) गुण और फायदे: अश्वगंधा को आयुर्वेद में 'रसायन' के रूप में जाना जाता है, जो शरीर को शक्ति और ऊर्जा प्रदान करती है। यह तनाव, चिंता, और थकान को कम करने में सहायक है। अश्वगंधा शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करती है और शारीरिक एवं मानसिक संतुलन को बनाए रखने में मदद करती है। यह पुरुषों के यौन स्वास्थ्य को सुधारने और महिलाओं में हार्मोनल संतुलन बनाए रखने के लिए भी उपयोगी है। इसके उपयोग की विधि: अश्वगंधा का सेवन पाउडर, कैप्सूल, या जड़ के रूप में किया जा सकता है। इसे दूध या शहद के साथ लिया जा सकता है।

आचार्य सुश्रुत का मत है :

'बल्यं वृष्यमृष्यमीह बलं बलवतामपि।
धात्वा: शरीरं हर्षं च स्नेहपुष्टि विवर्धनम्॥'

(सुश्रुत संहिता, सूत्रस्थान)

महर्षि सुश्रुत के अनुसार अश्वगंधा शरीर में बल और वृष्य (यौन शक्ति) को बढ़ाने वाली औषधि है। यह धातुओं की पुष्टिवर्धक और स्नेहवर्धक गुणों से युक्त है।

3. गोखरू (Tribulus Terrestris) गुण और फायदे : गोखरू एक आयुर्वेदिक जड़ी-बूटी है जो मूत्र विकारों, गुर्दे की समस्याओं, और यौन स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी है। यह मूत्र संबंधी समस्याओं को ठीक करता है और शारीरिक शक्ति को बढ़ाने में मदद करता है। यह वात और कफ दोषों को संतुलित करता है। उपयोग की विधि: गोखरू का सेवन पाउडर या काढ़े के रूप में किया जा सकता है। इसे पानी या दूध के साथ लिया जा सकता है।

आचार्य चरक का मत है:

गोक्षुरं वातहरं कषायं शीतलं लघु।
मूत्रकृच्छ्रशूलहरं वृष्यं शीतलं लघु॥

(चरक संहिता, सूत्रस्थान)

महर्षि चरक के अनुसार, गोखरू वातहर (वात दोष को हरने वाला), शीतल (ठंडा), और मूत्र संबंधी विकारों को ठीक करने वाला है। यह वृष्य (यौन शक्ति को बढ़ाने वाला) भी है।

4. ब्राह्मी (Bacopa Monnieri) गुण और फायदे : ब्राह्मी एक प्रसिद्ध मस्तिष्क टॉनिक है जो मस्तिष्क की कार्यक्षमता को बढ़ाने, स्मरण शक्ति

को सुधारने, और मानसिक शांति प्रदान करने के लिए उपयोगी है। यह छात्रों और मानसिक श्रम करने वालों के लिए विशेष रूप से लाभकारी है। ब्राह्मी मानसिक तनाव और चिंता को कम करने में भी सहायक है। उपयोग की विधि: ब्राह्मी का सेवन पाउडर, कैप्सूल, या ताजे पत्तों के रस के रूप में किया जा सकता है। इसे शहद या गर्म पानी के साथ लिया जा सकता है।

आचार्य चरक का मत है :

'स्मृतिमेधाबुद्धिकरं सवृद्धि रसायनम्।
सर्वज्वरहरं प्रोक्तं तद्दोषविषापहम्॥'

(चरक संहिता, सूत्रस्थान)

महर्षि चरक के अनुसार, ब्राह्मी स्मरण शक्ति, बुद्धि, और मानसिक शक्ति को बढ़ाने वाली औषधि है। यह ज्वर और दोष-विष को हरने में सक्षम है।

5. पुनर्नवा (Boerhavia Diffusa) गुण और फायदे: पुनर्नवा एक अद्वितीय जड़ी-बूटी है जो शरीर को पुन: नव ऊर्जा प्रदान करती है। यह विशेष रूप से मूत्र संबंधी विकारों, यकृत की समस्याओं, और सूजन में उपयोगी है। यह शरीर के दोषों को संतुलित करती है और शरीर को ऊर्जा प्रदान करती है। उपयोग की विधि: पुनर्नवा का सेवन काढ़े, पाउडर, या टैबलेट के रूप में किया जा सकता है। इसे एक से तीन ग्राम की मात्रा में लिया जा सकता है।

आचार्य सुश्रुत का मत है:

'पुनर्नवा तिक्तकटुक: शीतल: कफवातनुत्।
कुष्ठगुल्महर: पथ्य: शोथमेहानिलापह: ॥'

(सुश्रुत संहिता, सूत्रस्थान)

महर्षि सुश्रुत के अनुसार, पुनर्नवा तिक्त (कड़वा) और कटुक (तीखा) है, जो कफ और वात दोष को हरता है। यह कुष्ठ, गुल्म, और सूजन को हरने में सक्षम है।

6. शतावरी (Asparagus Racemosus) गुण और फायदे: शतावरी एक महत्वपूर्ण जड़ी-बूटी है जो विशेष रूप से महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए उपयोगी है। यह गर्भधारण, स्तनपान, और मासिक धर्म के दौरान हार्मोनल संतुलन बनाए रखने में सहायक है। शतावरी शरीर के वात और पित्त दोषों को संतुलित करती है। उपयोग की विधि: शतावरी का सेवन पाउडर, कैप्सूल या जूस के रूप में किया जा सकता है। इसे दूध या शहद के साथ लिया जा सकता है।

आचार्य चरक का मत है:

'शतावरी तिक्तमधुरा स्निग्धा ह्वीनोस्तुषा।
बल्या हृद्योष्णवीर्यश्च शोणितपित्तानिलाश्रया॥'

(चरक संहिता, सूत्रस्थान)

महर्षि चरक के अनुसार, शतावरी तिक्त (कड़वा) और मधुर (मधुर) रस वाली होती है। यह शरीर को बल देने वाली, हृदय के लिए हितकारी, और पित्त तथा वात दोष को संतुलित करने वाली है।

7. आंवला (Phyllanthus Emblica) गुण और फायदे: आंवला, जिसे 'धात्री' के नाम से भी जाना जाता है, आयुर्वेद में एक अत्यंत महत्वपूर्ण औषधि है। यह विटामिन सी का समृद्ध स्रोत है और शरीर की रोग-प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में सहायक है। आंवला का सेवन त्वचा, बालों, और आंखों के स्वास्थ्य के लिए विशेष रूप से लाभकारी है। यह पाचन तंत्र को सुधारता है और लिवर की कार्यक्षमता को बढ़ाता है। आंवला का नियमित सेवन शरीर को ठंडक प्रदान करता है और रक्त शुद्धिकरण में भी मदद करता है। उपयोग की विधि है : आंवला का सेवन जूस, पाउडर, या मुरब्बे के रूप में किया जा सकता है। इसे खाली पेट लिया जा सकता है या भोजन के साथ भी सेवन किया जा सकता है।

आचार्य चरक का मत:

'आमलकं त्रिदोषघ्नं लघु शीतं रसायनम्।
चक्षुष्यं बल्यं रूच्यं च पित्तकासासृकापहम्॥'

(चरक संहिता, सूत्रस्थान) महर्षि चरक के अनुसार, आंवला त्रिदोषघ्न (तीनों दोषों को हरने वाला) है और यह लघु (हल्का), शीतल (ठंडा) और रसायन (जीवन को दीर्घायु करने वाला) गुणों से युक्त है। यह आँखों की रोशनी को बढ़ाता है, शरीर को बल देता है, और पित्त व कास (खांसी) को ठीक करता है।

8. मोरिंगा (Moringa Oleifera)

गुण और फायदे: मोरिंगा, जिसे 'सहजन' के नाम से भी जाना जाता है, आयुर्वेद में एक बहुगुणी औषधि मानी जाती है। यह शरीर के पोषण में सहायक होती है और इसे एक सुपरफूड के रूप में भी जाना जाता है। मोरिंगा में विटामिन, खनिज, और एंटीऑक्सिडेंट की प्रचुर मात्रा होती है, जो शरीर को ऊर्जा प्रदान करती है, प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करती है, और पाचन में सुधार करती है। मोरिंगा का सेवन शरीर की सूजन को कम करने और ब्लड शुगर को नियंत्रित करने में भी सहायक है। उपयोग की विधि: मोरिंगा का सेवन पत्तियों, पाउडर या कैप्सूल के रूप में किया जा सकता है। इसे सलाद, सूप, या जूस में मिलाकर भी सेवन किया जा सकता है।

आचार्य सुश्रुत का मत है :

' सहजनं वातहरं कटुकं दीपनं लघु।
विषघ्नं कफवातघ्नं पथ्यं हृत्कं बलप्रदम्॥'

(सुश्रुत संहिता, सूत्रस्थान)

महर्षि सुश्रुत के अनुसार, सहजन (मोरिंगा) वातहर (वात दोष को हरने वाला), कटुक (तीखा), और दीपन (पाचन को सुधारने वाला) गुणों से युक्त है। यह विषघ्न (विष को नष्ट करने वाला) और कफ-वात दोष को संतुलित करने वाला है। यह हृदय को बल प्रदान करने और शरीर को शक्ति देने वाला है।

कहना न होगा कि आयुर्वेद एक सर्वश्रेष्ठ चिकित्सा पद्धति है और इसकी वैज्ञानिकता तथा व्यावहारिकता ने संसार को जीवन शैली के रूप में अपनाने की प्रेरणा दी है।

लेखक - वरिष्ठ आयुर्वेदिक चिकित्सा अधिकारी
सम्पर्क : 12/799 गमेतियों की गली, ब्रह्मपोल, उदयपुर 313001
मोबाईल + 919414620938

आलेख

पान के औषधीय गुण

-डॉ. विद्यानाथ झा एवं डॉ. सुशील कुमार

पान भारतीय संस्कृति की आत्मा है। विराट हिन्दू धर्म में हम ऐसे किसी भी पर्व त्योहार की कल्पना नहीं कर सकते जिससे पान किसी न किसी रूप में न जुड़ा हो। भोजन के बाद पान खाने की बहुत पुरानी परम्परा है जिसका सीधा अर्थ हुआ कि पान के रस का पाचन पर गुणकारी असर होता है। आजकल आधुनिकता के प्रभाव में लोग पान के साथ जर्दा एवं अन्य तम्बाकू उत्पादों को खाकर उसके कारण स्वास्थ्य पर घातक प्रभावों को झेलते हैं। देश में इस कारण कैंसर सदृश बीमारी के आगोश में आने वाले लोगों की संख्या बढ़ती चली जा रही है जिससे सावधान रहने की आवश्यकता है। पान एक छाया में उगने वाली लता है जिसे अंग्रेजी में Sciophyte कहा जाता है। यह आमतौर पर जलाशयों के किनारे बाड़ या बरेजा में उगाया जाता है। पान की खेती को बराबर पानी की आवश्यकता होती है।

वनस्पति शास्त्रीय दृष्टिकोण से पान पाइपरेसी (Piperacee) कुल की लता है जिसे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर Piper betle Linn. के नाम से जाना जाता है। संस्कृत में इसे ताम्बूल. अमृतवल्ली, नागवल्ली आदि नामों से जाना जाता है। पान का बरेजा आमतौर पर नागों का आवास होता है। इस कारण पान के कृषक नागवंशी, चौरसिया या फिर भगत भी कहलाते हैं।

आमतौर पर अतिथियों का स्वागत पान से किया जाता है। पान के विषय में एक कहावत है कि जिनके पास सम्पन्नता है वे अपने अतिथि का स्वागत पान के पत्ते से और विपन्नता की स्थिति में उसकी डंटी से भी करते हैं। भावार्थ यह है कि पान की डंटी भी अपने स्थान पर गुणकारी है। छोटे बच्चों को कब्ज होने पर उनके मलद्वार में पान की डंटी डालकर फिर मलत्याग करवाया जाता है। अनैच्छिक गर्भ ठहरने पर पान की डंटी का उपयोग कर गर्भपात करवाया जाता है। शरीर के किसी भाग में घाव उभरने पर पान के पत्ते को गर्म कर उस हिस्से को सेंका जाता है। पान को सुपारी. चूना एवं कत्था में उपस्थित क्षाराभ (Alkaloid) एवं अन्य रासायनिक अवयव पान खाने वाले के शरीर में कैल्सियम आदि की आपूर्ति करते हैं वशर्ते तम्बाकू के अवयवों का उपयोग न किया गया हो। पान मुँह में होने वाले पायरिया (दुर्गंधिजन्य) सदृश रोग का शमन करता है। पान के पत्ते में विटामिन सी, थायमिन, निएसिन, राइबोफ्लैविन, कैरोटीन एवं कैल्सियम की प्रचुरता होती है। आयुर्वेद के अनुसार सूजन (Inflammation), फाइलेरिया, नपुंसकता एवं शारीरिक कमजोरी दूर करने में पान के स्पष्ट फायदे देखे गए हैं। इसके साथ दुबलेपन, घाव, मिर्गी, बुखार एवं सर्पदंश निवारण में भी यह गुणकारी है।

पान की खेती को बढ़ाने हेतु इस पर लखनऊ स्थित राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान में काफी शोध हुए हैं। उत्तर प्रदेश के महोबा में पान प्रयोग एवं प्रशिक्षण केन्द्र कार्यरत है। पान के देशावरी प्रभेद के लिए यह क्षेत्र विशेष रूप से जाना जाता है। इसी तरह पटना के निकट बिहार के इस्लामपुर (फतुहा) में पान का अनुसंधान केन्द्र स्थापित है। यहाँ पान के पत्ते से तेल निकालने की व्यवस्था की गयी है। इस्लामपुर स्थित पान अनुसंधान केन्द्र को औषधीय पौधों के लिए सेंटर ऑफ इक्सेलेंस की मान्यता देने हेतु प्रयास किए जा रहे हैं।

बिहार के मिथिला क्षेत्र में तो पान के उपयोग की विविधता दूर दराज के लोगों को भी आकर्षित करती है। मिथिला में आश्विन पूर्णिमा के अवसर पर मनाये जाने वाले कोजागरा पर्व की रात में मखान के साथ पान (यानी पान-मखान) खाना अनिवार्य होता है। श्रोत्रियों में तो बारात के आगमन पर सबसे पहले पान का पतोरा परोसा जाता है। पूजा के दौरान कलश पर पान एवं सुपारी अर्पित किए जाने की प्राचीन परंपरा है। इस क्षेत्र में पान के पारंपरिक प्रभेदो में देसी पत्ता, बरगोइ (बड़ी गिरह), छोटी गिरह प्रमुख है। जिम्मर (Lannaea coromandelica) के पेड पान के बरेजों में जीवित स्तम्भ (Living pole) का कार्य करते हैं जो इन बरेजों (groves) की शोभा में चार चाँद लगाते हैं।

सत्यनारायण भगवान की पूजा सहित अन्य पूजाओं के दौरान देवी-देवता को 'धूपदीप ताम्बूल यथाभाग नानाविधि नैवेद्यानि भगवत् श्री सत्यनारायणाय नमः पढ़कर अन्य नैवेद्यों के साथ ताम्बूल भी अर्पित किया जाता है।

पान खाने की हमारी प्राचीन परिपाटी में सुपारी, चूना एवं कत्थे

के साथ पान को पूरी तरह चबाकर निगल लिया जाता है। पान का पीक आहार नाल में जाकर अपने औषधीय गुणों से शरीर को लाभ पहुँचाता है। इसके विपरीत जर्दा-तम्बाकू के साथ पान खाने वाले इसके पीक को जहाँ चाहें वहाँ फेंक कर गन्दगी फैलाते हैं। अक्सर इस प्रवृत्ति को रोकने के लिए कार्यालयों में सीढ़ियों के कोने पर देवी देवताओं के फोटो लगा दिए जाते हैं जो उन्हें जहाँ तहाँ थूकने से रोकते हैं।

इसे एक सयोग ही माना जायेगा कि Betel quid के चार अवयवों-पान, सुपारी, कत्था एवं चूने में मात्र पान का पत्ता ही ऐसा है जो कैन्सररोधी पाया गया है।

पान में उपलब्ध जैवरसायनों में यूजीनोल (Eugenol), चैभीबीटोल (Chavibetol), चैभीभोल (Chavivol) एवं हाइड्रोक्सीचैमीकोल (Hydro&ychavicol, HC) प्रमुख है। इनमें HC प्रौस्ट्रेट, औत एवं रक्त कैंसर के नियंत्रण में कारगर पाया गया है।

पान को रक्ताल्पता (एनीमिया) एवं मधुमेह नियंत्रण में भी प्रभावी पाया गया है। यह कवक (Fungi) जन्य संक्रमणों को रोकने में भी सहायक सिद्ध हुआ है।

आयुर्वेद में कई औषधियों को शरीर के अपेक्षित भाग में पहुँचाने हेतु पान के साथ खाने के निर्देश दिए गए हैं। आधुनिक Drug delivery का सिद्धांत भी इस तथ्य पर आधारित है।

आज के वैज्ञानिक युग में नैनोटेक्नोलोजी के अन्तर्गत अनेक पौधों से प्राप्त 10 मीटर के सूक्ष्मातिसूक्ष्म कणों का प्रयोग कई रोगों की औषधियों के रूप में किया जा रहा है। पान के रस से चाँदी Ag(Silver) या फिर स्वर्ण Au (Gold) के नैनोपार्टिक्लस क्रमशः AgNP या AuNP के रूप में प्राप्त किए जा रहे हैं जो जीवाणुरोधी या फिर प्रतिआक्सीकारक गुणों से सम्पन्न होते हैं। स्टैफाइलोकॉकस औरियस (Staphylococcus aureus) एवं इस्चेरेचिया कोलाइ (Escherichia coli) एवं कुछ अन्य जीवाणुओं पर हुए एतत्सम्बंधी परीक्षणों से इस तथ्य की पुष्टि हुयी है। वैज्ञानिकों ने पान के रस से कैल्सियम आक्साइड नैनोपार्टिक्लस (CaONP) का संश्लेषण कर उससे जीवाणुरोधी एवं कैन्सररोधी औषधियों तैयार की हैं।

इसी तरह चीरफाड़ (Surgery) के दौरान होने वाले जीवाणु संक्रमण को रोकने हेतु पान के रस से जिंक आक्साइड नैनोपार्टिक्ल्स (ZnONP) बनाए गए हैं जो काफी प्रभावी सिद्ध हुए है।

संपर्क : अवकाशप्राप्त प्रधानाचार्य, ल.ना. मिथिला विश्वविद्यालय सेवा, दरभंगा शिक्षक, उत्क्रमित उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, बहुआरा, सिंहवाड़ा, दरभंगा

कला समय प्रकाशन

लेखक
दीपक पंडित

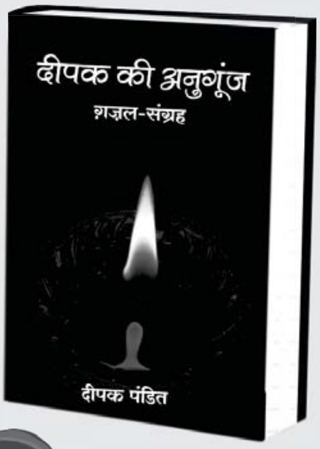

मूल्यः
रु. 250

कला समय प्रकाशन की
नई प्रकाशित कृतियाँ

लेखक
सुन्दरलाल प्रजापति

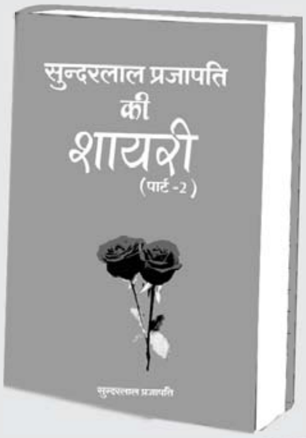

मूल्यः
रु. 100

0755-2562294, 9425678058

kalasamayprakashan@gmail.com

कार्यालय: जे-191, मंगल भवन, ई-6
महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल - 462016 (म.प्र.)

आलेख

नाभि : प्रकृति का मानव को एक अनुपम उपहार

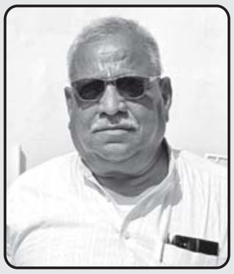

रमेश जैन

मानव शरीर के कई अंगों में नाभि का एक महत्वपूर्ण स्थान है यह पेट के मध्य में स्थित होती है। शिशु अपने जन्म तक गर्भनाल द्वारा नाभि से ही जुड़ा रहता है, तथा अपना पोषण प्राप्त करता है। नाभि सभी स्तनधारियों में पाई जाती है ,परंतु मनुष्यों में यह कुछ विशेषताएं लिए होती है। आज के चिकित्सक और वैज्ञानिक नाभि को लगभग महत्वहीन मानते हैं, परंतु भारतीय योग शास्त्र में नाभि का महत्वपूर्ण स्थान है।

नाभि का जो स्थान नियत होता है,अगर उस स्थान से किसी कारण से नाभि खिसक जाती है,तो कई प्रकार के रोग यथा पेट दर्द पेट दर्द, गैस बनना हाथ पैर दर्द करना आदि होने लगते हैं। इसलिए स्वस्थ शरीर के लिए नाभि का अपने नियत स्थान पर रहना उचित रहता है।

नाभि को सही स्थान पर सेट करने के लिए योग्य व जानकारी लोगों का सहारा लेना चाहिए। हमारी नाभि 72000 नाड़ियों को संचालित करती है। ये यह नदियां-नदियां शरीर के प्रत्येक अंग से जुड़ी रहती है तथा उनके द्वारा कई रोगों को ठीक किया जा सकता है। नाभि को सेट करने के लिए सुबह (भूखे पेट) का समय उत्तम रहता है। नाभि शरीर की आंतरिक ऊर्जा का केंद्र है इसके स्पंदन से कई रोगों का पता लगाया जा सकता है कहा जाता है कि कई प्रकार के जीवाणु नाभि में पाए जाते हैं जो बाहरी जीवाणुओं से शरीर की रक्षा करते हैं इसलिए नाभि का स्वच्छ रहना अति आवश्यक है।

सामुद्रिक शास्त्र में नाभि का आकार प्रकार के अनुसार मनुष्य का स्त्री पुरुष व्यक्तित्व जाना जा सकता है। समुद्र प्रोक्त सामद्रिक शास्त्र के अनेक पाठ प्रचलित हैं और वराहमिहिर के काल से ही उनके विशेष उद्धरण मिलते हैं। ये व्यक्ति के शुभाशुभ को बताते हैं।

नाभि को नरम बनाए रखने के लिए कुछ तेल लगाना चाहिए जो लगभग इस प्रकार हैं इन तेलों का उपयोग सुबह शाम 5 से 7 बूंद के रूप में करना चाहिए इन बूंद को नाभि में ड्रोपर की मदद से डालना चाहिए। इन तेलों को नाभि में लगाने से कई रोगों का उपचार आसानी से किया जा सकता है और उनमें आशातीत सफलता प्राप्त होती है।

1. सरसों का तेल नाभि में नियमित लगाने से पाचन तंत्र मजबूत होता है तथा फटे होठ ठीक हो जाते हैं इस तेल के उपयोग करने से जोड़ों के दर्द में

भी राहत मिलती है।

2. नाभि में खोपरे का तेल लगाने से या गाय का शुद्ध घी लगाने से प्रजनन क्षमता ठीक होती है तथा आंखों के सूखे पन से छुटकारा मिल जाता है।
3. इसी प्रकार नीम का तेल नाभि में लगाने से त्वचा संबंधी रोग मुंहासे आदि ठीक हो जाते हैं।
4. नाभि में अरंडी का तेल डालने से घुटनों के दर्द से राहत मिलती है।

नाभि से संबंधित कई मान्यताएं समाज में पाई जाती है। जैसे जिन पुरुषों की नाभि समतल और स्वस्थ होती है वह बुद्धिमान, स्पष्ट वक्ता और सौभाग्यशाली होते हैं। इसी प्रकार खड़ी नाभि वाली महिलाएं स्वभाव से निडर होती है और अपना कोई भी काम मन लगाकर करती है और जिन महिलाओं की नाभि गोल होती है, वह सभ्य, सरल और सौम्य तथा प्रभावशाली व्यक्तित्व की धनी होती है।

अत: शरीर के सही संतुलन को बनाए रखने के लिए अंग प्रत्यङ्गो से सामंजस्य एवं नाड़ियों के कार्य संचालन व नियंत्रण में नाभि की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, नाभि जब अपनी स्वाभाविक स्थिति में होती है, तो शरीर रूपी मशीन का हर अंग अपना हर कार्य ठीक ढंग से पूर्ण करता है। और जो जीवन शक्ति नस नाड़ियों में प्रवाहित होती है वह शरीर को स्वस्थ बनाकर रखती है अगर इसके विपरीत नाभि मंडल में थोड़ी सी भी विकृति पर ध्यान न देने से शरीर की प्रमुख कार्य क्षमता कम हो जाती है और रोग उत्पन्न होते हैं।

(लेखक सेवानिवृत्त शिक्षक और देशी आयुर्वेदिक उपायों के अध्येता हैं)
संपर्क : सेवानिवृत शिक्षक, जीरन जिला नीमच (मध्य प्रदेश) पिन : 458336
मोबाइल : 09406607425

ऊर्जा का स्त्रोत है देसी गाय का दही

डॉ. खुर्शीद बानो टाक

पुरुषार्थ चतुष्ट्य की प्राप्ति आरोग्य सम्पन्न शरीर के द्वारा ही सम्भव है और यह कितना आश्चर्यजनक तथ्य है कि विभिन्न प्रकार के रोगों की निवृति के लिए नितान्त आवश्यक जीवन-तत्व हम केवल पंचगव्य दूध, दही, घी, मूत्र और गोबर सेवन से अनायास ही प्राप्त कर सकते हैं। गाय के उदर को जो जीवन-तत्वों का अक्षय स्त्रोत कहा जाता है, वह कोई यूं ही कहा गया अतिरंजनापूर्ण वाक्य नहीं है, अपितु व्यावहारिक अनुभवों का यथार्थ निष्कर्ष है।

सुश्रुत संहिता में गाय के दही को स्निग्ध, मधुर, पाचन शक्ति वर्धक, बलवर्धक वातहारक, पवित्र और रुचिकारक कहा गया है।

गाय का दही अनेक भयानक रोगों को जड़ से विनष्ट कर डालने वाला माना गया है। वात जन्य बवासीर, त्रिदोष, पथरी, पीलिया, पेट दर्द, सिरदर्द, जलन जैसे महान् कष्टप्रद रोगों के लिये तो यह रामबाण औषधि है। इतना ही नहीं शहद, मक्खन पीपल, सौंठ, काली मिर्च, वच और सेंधा नमक की समान मात्रा लेकर उतनी हो मात्रा में गाय का दही मिलाकर तुरंत पिलाने से सर्प का विष भी दूर हो जाता है।

दही का मेल

आयुर्वेद के मुताबिक दही के साथ घी मिलाकर खाने से फायदा होता है। यह आँखों की ज्योति एवं शरीर का सामर्थ्य बढ़ाता है। ताकत और एनर्जी बढती है। वजन कम होता है।

पेट लम्बे समय तक भरा रहता है। भूख कम लगती है। इसके अलावा श्रेष्ठ मेल है- शहद, आंवला, गुड़-चीनी और लहसुन।

घी, दही में मौजूद कैल्शियम पैरामाइरॉइड हार्मोन के उत्पादन को कम करके वजन कम करता है।

दही के साथ गुड़ खाने से खून की कमी दूर होती है। इम्यूनिटी मजबूत होती है। गुड़ में मैग्नीशियम पोटेशियम आयरन, मिनरल्स और कैल्शियम जैसे पोषक तत्व होते हैं, तो वहीं दही को गुणों का भण्डार कहा जाता है। अत: इन दोनों को साथ खाने से सर्दी-जुकाम में लाभ होता है।

दही में चीनी मिलाकर शुभ काम के पहले खाने की सेहतमंद परंपरा है। इससे मेमोरी बढ़ती है, ध्यान लगाने की क्षमता बढ़ती है। तनाव घटता है। यूटीआई का इलाज होता है। पेट की समस्याएं दूर होती हैं और इंस्टेंट एनर्जी मिलती है।

दही के साथ शहद मिलाकर खाने से यह त्वचा को माइश्चराइज करता है। इनमें त्वचा के लिये सूदिंग प्रोपर्टी होती है। यह त्वचा को नेचुरल ग्लो प्रदान करता है। प्रीमेच्योर एजिंग के निशान को कम करता है। यह प्रोबायोटिक की गुणवत्ता बढ़ाता है। पर्याप्त एंटी-ऑक्सीडेंट है। बालों और चेहरे पर लगाने से चमक आती है।

दही में आंवला मिलाकर खाने से इज़्यूनिटी मजबूत होती है। पाचन तंत्र मजबूत होता है। गैस, अपच और कब्ज की समस्या से छुटकारा मिलता है और बालों के लिए यह विशेष कार्य करता है। दही के साथ कच्चा लहसुन मिलाकर खाने से यह आंतों को सुरक्षित रखता है। यूरिक एसिड को कंट्रोल करता है। इज़्यूनिटी को बूस्ट करता है। मर्दाना ताकत बढ़ाने के लिए उपयोगी होता है और एक-एक अंग में ताकत भर देता है।

दही के साथ बेमेल हैं ये चीजें

दही के साथ कभी भी खीर का सेवन नहीं करना चाहिए। दही भले ही दूध से बना होता है किन्तु कभी भी दही और दूध का सेवन एक साथ नहीं करना चाहिए। दही के साथ पनीर खाने से बचना चाहिए। दही के साथ खरबूजा खाने से भी बचें। गर्म भोजन के साथ दही नहीं खाना चाहिए। दही खाने से पाचन शक्ति अच्छी होती है। लेकिन उपरोक्त आहारों को विरुद्ध आहार कहा गया है। अत: उपरोक्त पांच चीजों के साथ दही का सेवन नहीं करें।

33/101 Varun path mansarovar opposite dipshikha college
jaipur Rajasthan 302020

आलेख

आंगन आंगन औषधि, रसोई औषधालय

डॉ. प्रिया सूफी

भारतीय जीवन की अपनी प्रणालियां हैं। देश, काल और स्थितियों के अनुरूप यहां खान – पान और विहार तय है। कई सदियां और ऋतुएं यहां एक साथ चलती रहती है। भूमि उर्वरा है और जो भी उगाती है, प्राय: उपयोगी होता है। अन्न ही नहीं, तृण तक।

एक पुरातन कथा है: एक आयुर्वेदाचार्य ने एक दिन अपने शिष्यों को बुला कर कहा कि तुम सब की शिक्षा सम्पूर्ण हुई, अब तुम्हारी परीक्षा का समय है। जाओ तुम सभी चारों दिशाओं में गमन करो और कोई ऐसी वनस्पति लेकर आओ, जिसमें कोई भी औषधीय गुण न हों। सभी शिष्य निश्चित समय में वापिस लौटने के लिए चारों दिशाओं में चले। तय अवधि के बाद जब सभी वापिस लौटे तो सभी के पास कोई न कोई वनस्पति थी और बताने के लिए कोई न कोई कहानी। परन्तु एक शिष्य अभी भी नहीं लौटा था। निश्चित समयावधि से 20 दिन बाद वह शिष्य आहत पस्त सी हालत में लौटा और गुरुदेव के चरणों में गिर गया। उसके पास कोई वनस्पति नहीं थी। वह बड़ी ही दीन वाणी में बोला: गुरुदेव मैं कोई वनस्पति नहीं ला पाया क्योंकि मुझे ऐसी कोई वनस्पति मिली ही नहीं जिसमें कोई न कोई औषधीय गुण न हों। संभवत: मुझ में ही कोई दोष है जो आपकी दी शिक्षा को सही प्रकार से ग्रहण नहीं कर पाया। उसकी ऐसी हालत देख कर अन्य सभी शिष्य प्रसन्न थे कि वे गुरुदेव की परीक्षा में सफल रहे हैं। परन्तु गुरुदेव ने उस शिष्य को ज़मीन से उठा कर सीने से लगा लिया और बोले: 'केवल तुमने ही मेरी शिक्षाओं को सही प्रकार से ग्रहण किया है। निस्संदेह इस पृथ्वी पर ऐसी कोई वनस्पति नहीं है जो किसी न किसी औषधीय गुण से युक्त न हो।'

कहने को यह एक कथा मात्र है। परन्तु अगर गहराई से देखा जाए तो यह बात कितनी सच्ची,कितनी गहरी है कि हम जिसे घास फूस बेकार वनस्पति मान कर कोई तवज्जो नहीं देते, वे भी किसी न किसी औषधीय गुण से युक्त होती है।

दरअसल परमात्मा ने हमारे आसपास, हमारे घर आंगन में, हमारी पाकशाला में बहुत सी औषधियां हमारी सुविधा के लिए उपलब्ध की हैं। परन्तु अपनी अज्ञानतावश हम न तो इन्हें समझ पाते हैं, और न ही इनका लाभ के पाते हैं। चलिए आज अपनी पाकशाला, घर की शाक वाटिका और गमले इत्यादि में उगने वाली शाक, सब्जी, पत्ते और जड़ी बूटी का अध्ययन करते हैं। संभवत: इनके पास कोई औषधीय गुण हो।

तुरई

इसका लेटिन नाम – Luffa acutangula Roxb. है। हिंदी में इसे तरोई, तोरई अथवा तुरई भी कहते हैं। बंगाली में घोषा लता, झिंगा, पंजाबी में तोरी, गुजराती में तुरया, घिसोडां, तेलगु में बीर, तमिल में मिर्कु आदि नामों से पुकारा जाता है। तोरई लगभग सभी प्रांतों में रोपी जाती है। बारिश में इसकी लता खूब फैलती है। इसके पत्ते नेनुआ के समान होते हैं और फल छ: से बारह इंच लंबे, आधार की तरफ संकुचित एवम् धारीदार होते हैं।

गुण व प्रयोग

तुरई में बहुत से पोषक तत्व पाए जाते हैं, जिनमें विटामिन ए, विटामिन सी, आयरन, मैग्नीशियम, पोटैशियम, और सेलेनियम जैसे पोषक तत्व भरपूर मात्रा में होते हैं। इसमें विटामिन ए आंखों की रोशनी के लिए अच्छा माना जाता है। तुरई में विटामिन सी और प्रतिउपचायक (एंटीऑक्सीडेंट) भी होते हैं, जो प्रतिरक्षा तंत्र को मज़बूत बनाते हैं।

तुरई में पानी की मात्रा ज़्यादा होती है। साथ ही, इसमें रेशों (फ़ाइबर) भी अच्छी मात्रा में होता है, जिससे पेट लंबे समय तक भरा रहता है। इससे वज़न कम करने में भी मदद मिलती है।

तुरई में विषाक्त अपशिष्ट और नहीं पचे हुए भोजन कणों से खून को शुद्ध करने की क्षमता होती है। इससे यकृत के स्वास्थ्य और पित्त कार्य को बढ़ाने में मदद मिलती है। पित्त यकृत का एक तरल स्राव होता है, जो वसा को तोड़ने में मदद करता है। यह पीलिया और यकृत में होने वाले अन्य संक्रमणों का भी इलाज करता है।

मरिच अथवा मिर्च

भाव प्रकाश निघण्टु में मिर्च के नाम और गुण इस प्रकार व्याख्यायित किए गए हैं :

मरिचं वेल्लजं कृष्णमूषणम् धर्मपत्तनम्।।
मरिच कटुकम् तीक्ष्णम् दीपनम् कफवातजित्।
उष्णम् पित्तकरम् रुक्षम् श्वासशूलकृमीन्हरेत्।।
तदार्द्रम् मधुरम् पाके नात्युष्णम् कटुकम् गुरु।
किंचित्तीक्षणगुणम् श्लेष्मप्रसेकि स्यादपित्तलम्।।

मिर्च का लेटिन नाम - Piper nigrum, Linn. है। जबकि संस्कृत में इसे मरिच, वेल्लज, कृष्ण, ऊषण और धर्मपत्तन कहते हैं। गुजराती में मरि, मरितीखा, तेलगु में मरिचमु, शव्यमु, पंजाबी में मरच, मिरच, मराठी में मिरे, काली मिरी, सिंधी में गूल मिरीएं, तमिल में मोलह, शेव्वियम्, मलयालम में लइ, कुरु, मुलक, कुरु मिलगु इत्यादि नामों से पुकारा जाता है।

दक्षिण कोंकण, आसाम, मलाबार, मलाया इसका उत्पत्ति स्थान माना जाता है। दक्षिण भारत के उष्ण और आर्द्र भागों में त्रिवांकुर, मलाबार आदि खादर तथा गीली जमीन पर यह अधिकता से उत्पन्न होती है। कच्छार, सिलहट, दार्जलिंग, सहारनपुर और देहरादून के पास भी इसकी खेती की जाती है। इसके पत्ते 5 से 7 इंच तक लंबे तथा 2 से 5 इंच तक चौड़े गोलाकार नुकीले तथा पान के पत्तों जैसे होते हैं। वर्षा ऋतु में इसकी लता को पान की बेल के समान छोटे - छोटे टुकड़ों में बड़े - बड़े वृक्षों की जड़ में गाड़ देते हैं। ये लता रूप में वृक्ष का सहारा ले ऊपर की ओर बढ़ जाती है। इसके फल गुच्छों में लगते हैं। कच्ची अवस्था में फल हरे रंग के होते हैं और उनमें चरपराहट कम होती है। पकने के बाद इनका रंग नारंगी लाल हो जाता है जिन्हें तोड़ कर सुखा लिया जाता है। सूखने पर इसके फल काले रंग के हो जाते हैं। पूर्वी मरिच की अपेक्षा दक्षिणी मरिच अधिक गुणदायक होती है। दक्षिणी मरिच ऊपर से भूरी और भीतर से हरियाली युक्त सफेद होती है। यह अधिक तीक्ष्ण होती है। जबकि पूर्वी मरिच ऊपर से अधिक काली और भीतर से सफेद होती है।अधिक पके फलों को जब वे पीले हो जाते हैं, तब तोड़ कर पानी में फुला कर छिलके दूर कर के सुखा लेते हैं। इसी को सफेद मरिच कहते हैं।

गुण और प्रयोग

काली मरिच का भोजन में प्रयोग करने से भी आपको बहुत लाभ मिलता है। उदाहरण के लिए, ठंड के दिनों में बनाए जाने वाले सभी पकवानों में काली मिर्च का उपयोग किया जाता है ताकि ठंड और गले की बीमारियों से रक्षा हो सके। काली मरिच नपुंसकता, रजोरोध यानी मासिक धर्म के न आने, चर्म रोग, बुखार तथा कुष्ठ रोग आदि में लाभकारी है। आँखों के लिए यह विशेष हितकारी होती है। जोड़ों का दर्द, गठिया, लकवा एवं खुजली आदि में काली मरिच में पकाए तेल की मालिश करने से बहुत लाभ होता है। यह वात और कफ को नष्ट करती है और कफ तथा वायु को निकालती है। यह भूख बढ़ाती है, भोजन को पचाती है, लीवर को स्वस्थ बनाती है और दर्द तथा पेट के कीड़ों को खत्म करती है। यह पेशाब बढ़ाती है और दमे को नष्ट करती है। तीखा और गरम होने के कारण यह मुँह में लार पैदा करती है और शरीर के समस्त स्रोतों से मलों को बाहर निकाल कर स्रोतों को शुद्ध करती है। इसे प्रमाथी द्रव्यों में प्रधान माना गया है।

पुदीना

बहुत कम लोगों को ही पता है कि पुदीना ऐसी जड़ी बूटी है जो औषधि के रुप में काम करती है। इसे बागों में ,घरों में, गमलों में कहीं भी उगाया जा सकता है। हिमालय के पहाड़ों में इसका वन्य स्वरूप भी पाया जाता है। जिसे पहाड़ी पुदीना कहा जाता है।

लेटिन में इसे Mentha spicata Linn. कहा जाता है। जबकि संस्कृत में पूतिहा, रोचिनी, पोदीनक आदि नामों से पुकारा जाता है। गुजराती में फूदीनो, तेलगु, तमिल और बंगाली में पुदीना, नेपाली में बावरी, पंजाबी में पूदना कहा जाता है।

गुण और प्रयोग

आयुर्वेद के अनुसार, पुदीना (dried mint) कफ और वात दोष को कम करता है, भूख बढ़ाता है। आप पुदीना का प्रयोग मल-मूत्र संबंधित बीमारियां और शारीरिक कमजोरी दूर करने के लिए भी कर सकते हैं। यह दस्त, पेचिश, बुखार, पेट के रोग, लीवर आदि विकार को ठीक करने के लिए भी उपयोग में लाया जाता है।

पुदीना ज्यादातर चटनी के रूप में प्रयुक्त होता है। इसके लिए पुदीने की पत्तियों को पहले साफ पानी से धोकर फिर इसमें आवश्यकता अनुसार नमक, हरी मिर्च, नींबू आदि सामग्री को मिलाकर सिलबट्टे पर या ग्राइंडर में पीसा जाता है।

विशेषज्ञों के अनुसार पुदीने का उपयोग करने से पाचन तंत्र बेहतर होता है और यह पेट संबंधी कई छोटे-मोटे रोगों को दूर करने में कारगर है। सर्दियों में पाचन से जुड़ी समस्या होने पर पुदीने के पाउडर का प्रयोग किया जाता है।

सौंफ

सौंफ (fennel seeds) का उपयोग प्राचीन काल से मुंह को शुद्ध (Mouth Freshner) करने और घरेलू औषधि के रूप में होता आ रहा है। इसका पौधा लगभग एक मीटर ऊंचा तथा सुगन्धित होता है। इसके पत्तों का प्रयोग सब्जी के रूप में भी किया जाता है। भूमध्यसागरीय इलाके में सौंफ जैसा ही एक पौधा पाया जाता है जिसे एनीसीड (aniseed) कहते हैं। इसका उपयोग इटालवी भोजन में किया जाता है।

सौंफ को लेटिन में Foeniculum vulgare Mill. कहते हैं। बंगाली में मौरी, कन्नड़ में वड़ी सोपु, सब्बसिगे, तेलगु में सोपु, पेद्दजिलकुर्रा, गुजराती में वरीयाली, वलीआरी, तमिल में सोहिकिरे, शोम्बु, पंजाबी में सोंफ आदि नामों से पुकारा जाता है।

इसका क्षुप लंबा, पत्ते कई भागों में विभक्त सोये के पत्तों के समान, फूल छत्राकर, किंचित पीले रंग के और फल 6 से 7 मि. मि. चौड़े, आयताकार प्राय: अखंडित एवम् डंठल युक्त होते हैं। नए बीज हरे

रंग के और पुराने होने पर पीलापन युक्त हो जाते हैं।

गुण और प्रयोग

यह सुगंधि, दीपन, पाचन, वातानुलोमन, दाहप्रशमन एवम् मूत्रविरजनीय है। इसका उपयोग विशेष रूप से मसाले ले रूप में एवम् सुगंधि के लिए किया जाता है।

सौंफ़ और सौंफ़ के बीज दोनों में कैलोरी कम होती है लेकिन ये कई महत्वपूर्ण पोषक तत्व प्रदान करते हैं।

ताजा सौंफ़ बल्ब विटामिन सी का एक अच्छा स्रोत है, एक पानी में घुलनशील विटामिन जो प्रतिरक्षा स्वास्थ्य, ऊतक की मरम्मत और कोलेजन संश्लेषण के लिए महत्वपूर्ण है। विटामिन सी आपके शरीर में एक शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट के रूप में भी कार्य करता है, जो मुक्त कणों (फ्री रेडिकल्स) नामक अस्थिर अणुओं के कारण होने वाली कोशिकीय क्षति से बचाता है।

बल्ब और बीज दोनों में खनिज मैंगनीज होता है, जो एंजाइम सक्रियण, चयापचय, सेलुलर संरक्षण, हड्डी के विकास, रक्त शर्करा विनियमन और घाव भरने के लिए महत्वपूर्ण है।

मैंगनीज के अलावा, सौंफ़ और इसके बीजों में हड्डियों के स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण अन्य खनिज भी होते हैं, जिनमें पोटेशियम, मैग्नीशियम और कैल्शियम शामिल हैं।

नींबू

नींबू एक चमकीला पीला खट्टा फल है। इसका विशिष्ट खट्टा स्वाद और ताज़ा खुशबू है क्योंकि यह साइट्रिक एसिड से भरपूर है। यह फूल वाले पौधे रूटेसी परिवार से आता है और इसका वैज्ञानिक नाम Citrus aurantifolia (Christm.) Swingle, Syn-Citrus medica Linn. var. acida Hook.f.) है। संस्कृत में इसे वृहत् जम्बीर, निम्बुक कहते हैं। कन्नड़ में बीजपूर, तमिल में चापलम, बंगाली में लेबू, मराठी में लिम्बू, मणिपुरी में चम्प्रा आदि नामों से पुकारा जाता है।

नींबू का उपयोग पेट के कीड़ों को खत्म करने के लिए, पेट दर्द से आराम पाने के लिए, भूख बढ़ाने के लिए, पित्त और कफज विकारों को ठीक करने के लिए तो कर ही सकते हैं।

नींबू वास्तव में कहां से आया, यह ज्ञात नहीं है। लेकिन लगभग 2,000 साल पहले इसके महत्व के दस्तावेजी सबूत मौजूद हैं। नींबू का पेड़ उपोष्णकटिबंधीय और उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगता है और 10-20 फीट लंबा हो सकता है। ज़्यादातर नींबू भूमध्यसागरीय देशों के साथ-साथ चीन, भारत, मैक्सिको, अर्जेंटीना और ब्राज़ील में उगाए जाते हैं। हिमालय की उष्ण घाटियों में यह वन्य अवस्था में भी पाया जाता है।

इसके वृक्ष छोटे, 5 से 10 फीट ऊंचे, कंटकित झाड़ीदार होते हैं। पत्ते थोड़े से पक्ष युक्त होते हैं। फूल छोटे, आधा इंच व्यास में, एक साथ 3 से 10 की संख्या में पत्रकोण में आते हैं। इसका फल चिकना, छिलका पतला, हरा और पकने पर कुछ पीत, सुगंधि खटास युक्त, अंदर की कली छोटी तथा चमकीली रहती है।

गुण और प्रयोग

नींबू में लगभग 35 मिलीग्राम विटामिन सी होता है, जो आपके दैनिक आहार में आवश्यक विटामिन सी की मात्रा का आधा से भी ज़्यादा है। विटामिन सी एक एंटीऑक्सीडेंट है, जो कोशिकाओं को नुकसान से बचाने में मदद करता है। विटामिन सी आपके शरीर को आपकी त्वचा के लिए कोलेजन बनाने में भी मदद करता है, आपके शरीर को आयरन को अवशोषित करने में मदद करता है, और आपकी प्रतिरक्षा प्रणाली का समर्थन करता है। खट्टे फल विटामिन सी के कुछ सबसे अच्छे खाद्य स्रोत हैं।

नींबू में भी उच्च स्तर का आहारीय फाइबर होता है, लेकिन आपको जूस से फाइबर नहीं मिलता।

नींबू में पाया जाने वाला पेक्टिन फाइबर एक बार निगलने के बाद फैल जाता है, जिससे आपको जल्दी और लंबे समय तक भरा हुआ महसूस होता है।

नींबू में मौजूद विटामिन सी कोलेजन बनाने में मदद करता है, जो एक प्रोटीन है जो आपकी त्वचा को सहारा देता है। नींबू में मौजूद विटामिन सी, फोलिक एसिड, विटामिन बी और खनिज आपके मुंहासे, तैलीय त्वचा, ब्लैकहेड्स और रूसी को ठीक करने में मदद कर सकते हैं।

विटामिन सी एक शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट भी है। एंटीऑक्सीडेंट ऑक्सीडेटिव तनाव के कारण होने वाली कोशिका क्षति को रोकने में मदद करते हैं, जिससे त्वचा का स्वास्थ्य बेहतर हो सकता है।

नींबू के रस के कई उपयोग हैं, पाककला से लेकर औषधीय तक। नींबू का उपयोग पूरी दुनिया में मिठाइयों, पेय पदार्थों, सॉस, डिप्स और मांस और मछली के व्यंजनों के लिए गार्निश के रूप में किया जाता है। नींबू का रस एक प्राकृतिक क्लीनर और दाग हटाने वाला है। नींबू का तेल इत्र, साबुन और त्वचा क्रीम के लिए सुगंध प्रदान करता है।

यह सभी पौधे, जड़ी- बूटी, लताएं, शाक हमारे घर आंगन में आसानी से उपलब्ध हैं। इन्हें अपनी शाक - वाटिका में उगाया जा सकता है। इनके गुण स्वयं सिद्ध हैं। बस थोड़ी से कोशिश थोड़ी सी मेहनत से हम न केवल अपने पर्यावरण का संरक्षण कर सकते हैं बल्कि इसके साथ साथ पुरातन आयुर्वेदिक पद्धतियों का उपयोग कर अपनी व परिवार की सेहत भी सुधार सकते हैं। अस्तु।

(लेखिका हिंदी और पंजाबी में नियमित लिखती हैं। अष्टछाप कवि नंददास की काव्यकला पर अद्वितीय शोध प्रबंध लिखा।)

सम्पर्क - गली न. 10, मकान न. 243, कमालपुर, होशियारपुर (पंजाब)

■

आलेख

निरोगी बनाते हैं, तांबे के बर्तन

– मनोज कुमार ताम्रकार

दैनिक उपयोग से अलग होते जा रहे तांबे के बर्तनों में कई गुण होते हैं। भारतीय चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद के अनुसार नियमित रूप से तांबे के बर्तन में रखा पानी पीने से शरीर चुस्त-दुरूस्त रहता है। कब्ज, एसिडिटी (अम्ल, पित्त), आफरा, चर्मरोग, जोड़ों का दर्द आदि शिकायतों से सहज ही मुक्ति मिल जाती है। सबेरे बिस्तर से उठते ही कम से कम एक लीटर पानी पीना स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक फायदेमंद होता है। आयुर्वेद की मानें तो ताम्र धातु से निर्मित पात्र सर्वश्रेष्ठ होते हैं। तांबे के अभाव में मिट्टी के पात्र हितकर होते हैं।

पेट की तकलीफ :-

पेट की बीमारियों से बचने के लिये तांबे के बर्तन में रखा पानी ही पीना चाहिये। यदि अपच, भूख नहीं लगना, कब्ज का रहना, अल्सर इत्यादि शिकायतें हैं, तो तांबे के बर्तन में रखा पानी पीना आज से ही शुरू कर दें। इस प्रयोग से कील-मुंहासों की शिकायतें भी दूर होती है। चेहरे की चमक बढ़ती है। तांबा खाद्य पदार्थों को जहरीला बनाने वाले विषाणुओं को मारने की क्षमता रखता है। तांबा कोशिकाओं की झिल्ली और एंजाइम्स में हस्तक्षेप करता है। इससे रोगाणुओं के लिये जीवित रह पाना संभव नहीं हो पाता है।

एक शोध रिपोर्ट के अनुसार ब्रिटेनकी नार्थम्बिया यूनीवर्सिटी के माइक्रोबायोलाजिस्ट रॉबरीड ने भारत यात्रा के दौरान तांबे के बर्तन में रखे पानी की प्रशंसा सुनी। वापस यूनिवर्सिटी लौटकर उन्होंने इस तथ्य का परीक्षण किया। उन्होंने मिट्टी और तांबे के बर्तनों में ई-कोली रोगाणुओं वाला पानी भर दिया। छह: घण्टे बाद पानी में नाम मात्र के रोगाणु पाये गये। रॉब ने सोसायटी फॉर जनरल माइक्रोबायोलॉजी की एडिनबरा में हुई बैठक में बताया कि रोगाणुओं का सफाया करने में तांबे (कॉपर) की भूमिका काफी महत्त्वपूर्ण होती है।

ब्रिटेन के वैज्ञानिकों का कहना है कि स्टेनलेस स्टील के धरातल वाले बर्तनों की अपेक्षा तांबे के धरातल से सुसज्जित रसोईघर हानिकारक जीवाणुओं से अधिक सुरक्षित होते हैं। उन्होंने रसोईघरों में स्टेनलेस वाले बर्तनों की जगह तांबे के धरातल वाले बर्तन रखने का सुझाव देते हुए कहा कि तांबे के धरातल पर ई-कोली जैसे खतरनाक जीवाणु नहीं पनप सकते। परीक्षणों से यह भी साबित हुआ कि सामान्य तापमान में तांबा सिर्फ चार घंटे में ई-कोली जैसे हानिकारक जीवाणुओं को मारता है।

पानी पीना भी एक कला है।

- प्यास लगने पर ही पानी पीएं।
- पानी का कोई विकल्प नहीं है। अत: प्यास लगने पर केवल पानी ही पीएं। कोल्ड ड्रिंक्स से प्यारा नहीं बुझती है।
- पानी को घूँट घूँट धीरे-धीरे पीएं।
- पानी को एक सांस में मुँह में न उड़ेलें या गटागट ना पीएं।
- पानी शरीर के तापक्रम का ही पीएं। फ्रीज का पानी यथासंभव थोड़ा गरम होने के बाद पीएं।
- भोजन के तुरंत पहले व तुरंत बाद पानी नहीं पीएं। आवश्यकता होने पर आवश्यकता की पूर्ति जितना ही पीएं।
- भोजन के साथ व तुरंत बाद में पानी पीने से आमाशय में पाचक रस क्षीण हो जाते हैं व भोजन का पाचन सही नहीं होता।
- घड़े का पानी सर्वोत्तम है। घड़े में पानी गाढ़े कपड़े से छान कर प्रतिदिन भरें।
- पानी स्वच्छ व हल्का होना चाहिए। भारी पानी में साबुन से झाग नहीं बनते। यही इसकी पहचान हैं
- शरीर को चलायमान रखने की प्रत्येक क्रिया में पानी अति आवश्यक है। पाचन, अवशोषण, निष्कासन रक्त संचालन आदि सब क्रियाएं पानी के माध्यम से होती है। अत: पानी पीने में कभी कंजूसी नहीं करें।
- पानी की इच्छा होते ही पानी पीएं। प्यास को रोकें नहीं। इसे प्राथमिकता दें।
- पानी बैठकर ही पीना चाहिए। खड़े-खड़े नहीं पीएं।
- पेशाब करने के पहले पानी पीएं पेशाब करने के बाद नहीं।

निरामय जीवन से साभार

संस्कृति-पर्व 7 प्रतिष्ठापूर्ण उत्सव की छाया- छवियाँ

दिनांक : 23-24 सितम्बर 2024

शहीद भवन भोपाल में आयोजित समारोह की प्रमुख झलकियाँ

सहयोग : मध्यप्रदेश शासन संस्कृति संचालनालय

संस्कृति-पर्व-7

कला समय

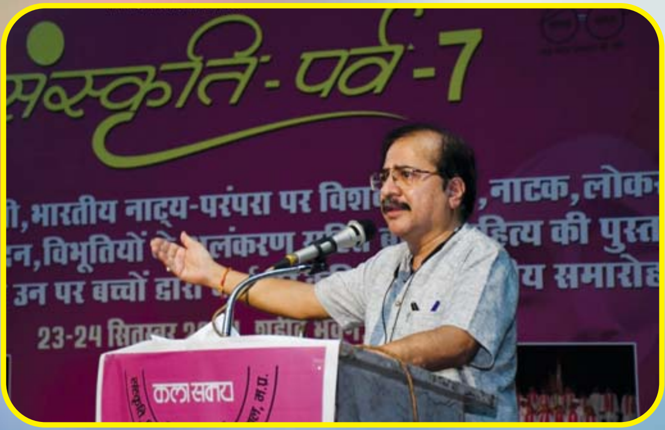
संस्कृति-पर्व-7

संस्कृति पर्व-7

लोकार्पण

संस्कृति-पर्व-7
लोकार्पण और उन पर बच्चों द्वारा चर्चा पर केन्द्रित दो दिवसीय समारोह।
23-24 सितम्बर 2024, शहीद भवन, भोपाल

संस्कृति-पर्व-7

कला समय

कला समय
संस्कृति पर्व-7

कला समय

आलेख

स्वास्थ्य साधना का पहला सोपान अपना घर

डॉ. शोभा सिंह

एक लंबे अरसे बाद नानी के गांव जाना हुआ कितनी ही बार वो बुलातीं लेकिन सुबह से संजा तक का समय घर परिवार नौकरी शहर ने इस तरह अपने कब्जे में कर लिया कि छूटकर भी छूटना नहीं हो पाता। उनसे बात करते समय नैनो की पाल उमड़-उमड़ पड़ती मन की पर्ची में बार-बार गांव जाना है लिखकर रख लिया जाता लेकिन अन्य जिम्मेदारियों की व्यस्त परिस्थितियों में यह नन्ही पर्ची हर बार पीछे छूट जाती। उनसे बात करते मैं अक्सर बचपन याद करती। हम स्मृतियों को खोजने और पानी के लिए बार-बार बचपन में लौटते हैं उस समय में जाकर कितना बहुमूल्य खजाना तिजोरी में आता है। वो आँगन की नीम से सुबह की हवा में सेहत का संदेश पाते हम..फूलों का मुस्कुराना और तारों का झिलमिल झील देखती अबोध आँखें। कथा, किस्से कहानी उसी आंगन में सुनते नींद की गोदी पायी।

कई अन्जानी वनस्पतियों से परिचय दादी ने कराया। तुलसी गेंदा, टगर, गुलाब, मोगरा, जवाकुसुम रंगबिरंगे फूलों वाले पौधे आँगन में और रसोई के पछीते लगी थी उनकी छोटी सी बगिया जिसे आजकल 'किचन गार्डन' पुकारा जाता है। दादी अपने लगाए पौधों को भी हम बच्चों जितना ही दुलार करतीं थीं। उन पौधों में दादी के स्पर्श की आत्मीयता पसरी रहती थी। उमंग की लकीर की तरह बहने वाली नदी में इतना नेह जल बहता था कि पोई साग, लौकी और कद्दू,लौकी की बेलें आशीर्वाद की तरह फैलती हुई पड़ोस के छाजन तक चली जाती थीं। हरसिंगार आलाप की तरह उड़-उड़ कर सड़क पर जा बैठता था।

उनकी रसोई सचमुच रसपूरित औषधालय ही थी जहाँ ऋतु, पर्व परंपरा के अनुरूप षटरस व्यंजन बनते कुटुंब की उदरपूर्ति करते और बहुविध निरोग रखने के साधन भी मसालों के रूप में सहेजे जाते थे। वो लोहे की कढाई में बनी मैथी, पालक, चरौटे, बथुए, आफू, सरसों, अमाड़ी की भाजी का स्वाद भुलाए नहीं भूलता।

भण्डारे में रखी माट मटकियों और डिब्बों में अनाज, दालें, साजा नमक, गुड़, हल्दी, मिर्ची, धनिया, सोंठ, अजवाइन, जीरा, राई, लौंग ढेरों मसाले सिर्फ भोजन को स्वाद ही नहीं देते थे रोग व्याधियों का उपचार भी करते थे। भारतीय मसालों को स्वाद और सेहत का भण्डार माना जाता है प्राचीन आयुर्वेद के ग्रंथ, संहिताएँ इनके चमत्कारिक गुणों का वर्णन करते हैं तो अनेक आधुनिक शोध इनमें उपलब्ध तत्वों का महत्व निरुपित करते हैं। दादी को पुस्तकीय ज्ञान नहीं मिला था उन्हे यह अनमोल जानकारियां अपनी पुरनियों, पुरखों से वंश परंपरा से मिला था। भारतीय रसोई में भोजन उदरपूर्ति का साधन मात्र नही इसका व्यापक महत्व है।

अनेक चिकित्सक और वैज्ञानिक विभिन्न स्वास्थ्य समस्याओं को रोकने और राहत देने में भारतीय मसालों के उपयोग का समर्थन करते हैं उनके विचारों से हमें पोषक तत्वों को सिर्फ खाना ही आवश्यक नहीं है, बल्कि पोषक तत्वों का सही जगह पर पहुंचना भी आवश्यक है। जैसा कि हम जानते हैं, पोषक तत्वों से हमारी प्रतिरक्षा प्रणाली मजबूत होती है और यह तभी संभव है जब शरीर पोषक तत्वों को सही तरीके से अवशोषित करता है। आहार-विहार के नियम निषेध पालन किए जाए तो रोग व्याधि भला कैसे पास फटक सकते हैं?

सभी मसाले प्राकृतिक पौधे के उत्पाद हैं जो बीज, फल, जड़, छाल या अन्य भागों से प्राप्त होते हैं जिनका उपयोग मुख्य रूप से भोजन को स्वादिष्ट बनाने, रंगने या संरक्षित करने के लिए किया जाता है। मसाले आम आदमी के जीवन में रसोई से लेकर घरों में औषधीय उपयोग तक में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। चूंकि भारत में जलवायु विविधताओं से भरपूर है, इसलिए इसके प्रत्येक राज्य में कोई न कोई मसाला पैदा होता है। भारत को 'मसालों की भूमि' के रूप में भी जाना जाता है।

प्रकृति और प्रतिरोधक क्षमता:

वर्तमान समय में मनुष्य रोग प्रतिरोधक क्षमता को लेकर चिंतित है। प्रकृति ने हमें भोजन और औषधि का भंडार दिया, लेकिन हम आज उस उपहार का उपयोग नहीं कर सके। वास्तव में, भोजन ही

एकमात्र औषधि है। भारतीय भोजन पारंपरिक रूप से मसालों से भरपूर रहा है। ऐसा कोई भोजन नहीं है जिसमें मसालों का उपयोग न किया जाता हो। मसालों का प्रयोग भारतीय उपमहाद्वीप में अनादि काल से होता आ रहा है और मसालों के महत्व तथा इसके औषधीय गुणों के कारण यह आज भी प्रासंगिक है।

कई रोगों से शरीर की सुरक्षा करने के साथ-साथ मसाले आपके भोजन को भी सुरक्षित रखने में सहायक होते हैं। लौंग, दालचीनी, जीरा और अजवायन जैसे मसालों में जीवाणुरोधी और एंटीफंगल गुण होते हैं जो बैक्टीरिया (बैसिलस सबटिलिस, फेस्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस) रोगजनकों (स्टैफिलोकोकस ऑरियस, विब्रियो पैराओमायोलिटिकस और कवक) और फफूंदी आदि से भोजन को सुरक्षित रखते हुए, उन्हें लंबे समय तक उपयोग के योग्य बनाए रखते हैं। भोजन को पकाते समय इन मसालों के प्रयोग से आप पके हुए भोजन को भी लंबे समय तक संक्रमण रहित और संरक्षित बनाए रख सकते हैं।

केरल, पंजाब, गुजरात, मणिपुर, मिजोरम और उत्तर प्रदेश जैसे राज्य मसालों की खेती के केंद्र माने जाते हैं। मसाले ज्वरनाशक उद्देश्यों के लिए उपयोग किए जाने वाले आयुर्वेदिक चूर्ण आदि के मुख्य घटक हैं। मसाले खाद्य उद्योग, सौंदर्य प्रसाधन और दवा उद्योगों में फल-फूल रहे हैं। विटामिन और पोषक तत्वों की अंधी दौड़ में हमने फ्रोजन फलों को प्राथमिकता दी, जबकि सच यह है कि मौसमी फल और सब्जियां मौसमी बदलावों में हमेशा मददगार रही हैं।

प्रेरक रहे परिजनः

नानी को चौके में काम करते माँ ने देखा और सीखा जब उनकी बेटी देखती है माँ ने दूध में जामण देकर कैंसे दही जमाया, किस साग में जीरे का छौंक लगाया है किसमें मैथी, अजवाइन का किस दाल में हींग तड़का लगाएं किसमें सूखी मिर्च अमचूर डालें कढी, रायते में क्या-क्या मसाले डाले, मौंसमी शाक वनस्पतियों को कैसे सिद्ध किया। किस व्रत त्योहार में क्या भोग बने सब सुनिश्चित होता था। शीतल माई को केसरिया भात, दही, पुआ चढेगा तो कान्हा जी को माखन मिसरी पंजीरी। पितृपक्ष में खीर पूरी बनेंगी तो तेजादशम को बाटी बाफला छाछ अमलबानी कब देनी वे जानती थीं। माँ और दादी ने भोजन के तमाम तत्वों की विशेषताएं बिना किसी ट्रेनिंग के हस्तांतरित कर दी थीं सहज सिखावनी से ये पाककला संततियों की चेतना के सॉफ्टवेयर में बिठा दी जाती हैं। दादी कहती थीं कि बैंगन वात बढ़ाता है इसलिए मैंथीदाना डालें। कौन सा अनाज किसके साथ खाना चाहिए किस ऋतु में बाजरा, किसमें मक्का ज्वार और कौन सी दाल किसके साथ खाना उचित है वो भलीभांति जानतीं थीं।

यह सब विज्ञान ही तो है। रसोईघर का प्राचीन ज्ञान विज्ञान। जिसकी वैज्ञानिक डॉक्टर हमारी नानी दादी हुआ करती थीं। दादी को पता था कि रसोई ही स्वास्थ्य का मूल है। स्वाद के वशीभूत हम बच्चों के अधिक खा लेने पर हमारे दुखते पेट, वात, गैस के लिए झट अजवाइन कालानमक की फक्की दे देतीं। जीरे को उबालकर पानीं पिलातीं। भीगते, खेलते, नदी, पोखर में नहाते जुखाम खांसी पकड़ता तो सौंठ गुड़ तुलसी लौंग कालीमिर्च का जादूयी काढा बना देतीं सर्दी की मजाल कि बच्चों को जकड़े पकड़े। भोजन पकाना नेम नियम से क्योंकि वह गृहस्वामिनी थीं। परिवार के कल्याण के लिए संकल्पित। दादी माँ को कैसे पता था कि रसोई ही स्वास्थ्य का मूल है? चरक, सुश्रुत मुनिगणों की विद्या उस गृहथायन ने कब पढी? उनकी रसोई तैयार करना पूजाभाव सा पावन अनुष्ठान था सचमुच जब अन्नं ब्रह्म देवता का भाव चला जाता है तो पदार्थ भी गुण बदल लेते हैं। भोजन पकाना दैवीय दक्षता है, कला है, साधना है। तेल घी, मसालों का, ताप का, शाक, भाजी, अन्न, फल, दूध, दही का मिजाज वसुधा की कोई निपुण बेटी ही समझ सकती है।

भोजन संस्कृति के सहस्त्रों वर्षों की यात्रा में इन गृहथायनों के जीवन में विपदाओं, आपदाओं, बीमारियों, महामारियों, चुनौतियों के अनेक पड़ाव आए हैं लेकिन धरती की पुत्रियों ने आत्म बल आस्था और विश्वास के सहारे रोग पीड़ा की काली अंधेरी गुफाओं से मनुष्यता को बाहर निकाला है। मृत्यु से सामना भी किया है। देवी देवताओं को मान मनौती भी रसोई से भेंट की और आस्था के मोती अपने आंचल में बाँधे रखे।

लेखिका- वरिष्ठ साहित्यकार हैं।
संपर्क : साधना सदन राधा कॉलोनी आनंद डेयरी के पास, गोदरेज शोरूम गली, गुना, जिला गुना(म.प्र.) 473001
मो. 9981524344

कला समयः बैंक खाता विवरण

1.	**खाता का नाम**	:	कला समय
2.	**खाता संख्या**	:	09321011000775 (चालू खाता)
3.	**बैंक शाखा**	:	पंजाब नैशनल बैंक की शाखा अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.) 462016
4.	**आईएफएस कोड**	:	PUNB0093210

प्रबंध संपादक

आपका बहुमूल्य आर्थिक सहयोग पत्रिका के लिए जीवनदायी संजीवनी होगी।

आलेख

हमारे संस्कार में है आयु चिन्तन

प्रो. टीकमणि पटवारी

दादी, नानी और मां किसी भी परिवार की धुरि है, परिवार के सभी सदस्य उसकी परिधि पर विराजमान है, जिनका हर तरह से ख्याल रखती घर की स्त्री जानती है कि जी है तो जहान है, अतः स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मन के निर्माण हेतु अपने ज्ञान, अपनी सेवा एवं अपने कौशल से रसोई घर में स्वास्थ्य की आधारशिला बनाती है। उत्तम स्वास्थ्य हेतु आयुर्वेद में जो प्रावधान किए गए हैं वे प्रकृति, पेड़- पौधे, कंद मूल, साग भाजी का समाकलन है। दादी नानी आयुर्वेद को पूर्णतः तो नहीं किंतु उसके एक बड़े हिस्से को अपनी रसोई और नुस्खे के माध्यम से उपयोग करती है। उनका पारंपरिक ज्ञान स्वस्थ जीवन का महत्वपूर्ण आधार है। दादी नानी द्वारा जितने भी पर्व त्यौहार मनाये जाते हैं अधिकांश ऋतुओं पर आधारित होते हैं। पर्व त्योहारों की पूजन में प्रयोग की जाने वाली प्राकृतिक वस्तुएं फूल, फल, पत्ती, घास, कांस हो या पूजा में भगवान को समर्पित भोग और प्रसाद सभी उस समय के वातावरण को स्वच्छ बनाने, प्रकृति को धन्यवाद देने तथा उस मौसम के मानव जीवन पर होने वाले लाभ तथा दुष्प्रभाव का असर समाप्त करने, ऋतु परिवर्तन से होने वाले संक्रमण से बचाने इत्यादि के निमित्त प्रयोग किए जाते हैं। उदाहरण स्वरूप गुरु पूर्णिमा (अखाड़ी) से प्रारंभ चातुर्मास के त्योहारों में ऋतु फल का महत्व है। हरछठ में महुआ का प्रयोग, जन्माष्टमी में पंजीरी (धनिया बीज) का प्रसाद, सौंठ के लड्डू, माखन का प्रयोग इत्यादि रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं, हमें रोगों से लड़ने की ताकत देते हैं। पर्व त्यौहार पूजा की बात इसलिए कर रही हूं कि हमारे भारतीय समाज में पर्व और पूजा जीवन शैली का हिस्सा है।

बचाव का पहले ध्यान रखें:

दादी नानी का कहना है कि बीमार होने के बाद दवा खाने से अच्छा है पहले ही बचाव कर लिया जाए। प्रसाद एवं पर्व पर बनने वाले भोजन में भी वे तत्व शामिल होते हैं जो हमारे लिए दवा का ही कार्य करते हैं। भोजन में मसाले का प्रयोग लौंग, दालचीनी, काली मिर्च, सौंठ, हल्दी अन्य सभी मसाले गुणों की खान है। नवरात्रि में जिस मढ़ी में जावरा बोये जाते हैं उस परिवार कुटुंब के लोग 9 दिन तक घर में बधार (छौंक) नहीं लगाते। सभी दिनों में बिना तेल का सात्विक भोजन ऋतु परिवर्तन के समय स्वास्थ्य की दृष्टि से हितकर है। हरितालिका तीज में नारियल,

ककड़ी के साथ चना की भिगोई हुई दाल प्रसाद रूप में ग्रहण करते हैं जो प्रोटीन का स्रोत है। पूजन के प्रसाद में ऋतु फल का प्रयोग अनिवार्य है, दादी नानी भले ही यह शब्दावली नहीं जानते कि फल विटामिन का स्रोत है किंतु पूजन में अर्पित ऋतु फल का प्रसाद सभी को ग्रहण करने की हिदायत देती है। व्रत में शकरकंद जैसी चीज केवल ऊर्जा का स्रोत नहीं है बल्कि शरीर में पोषक तत्वों की कमी को दूर करता है।

दादी नानी की रसोई की बात ही निराली होती है वर्तमान में मल्टीग्रेन आटा खरीद कर रोटी बनाने का चलन फिर वापस आ गया है। पहले घर में ही तुअर, मूंग, उड़द, बरबटी, मसूर इत्यादि दाल घट्टी/ चकिया में दरी जाती थी उसे छानकर दाल उपयोग में लाई जाती थी। छानने के बाद जो दरदरा आटा जैसा बचता था उसे गेहूं। मक्का/ज्वार के आटे में मिलाकर पिसवाया जाता था जिसे बिर्रा/बेर्रा / बेड़ला कहा जाता है। दादी उसकी मोटी रोटी चूल्हे पर बनाकर अंगार में सेककर उसे पर ढेर सारा मक्खन या घी लगाकर दही- मही में खाने के लिए देती। यह मोटी रोटी कार्बोहाइड्रेट का बहुत बड़ा स्रोत है, भगवान कृष्ण ने तो माखन खाने के लिए चोरी भी की अर्थात माखन में कितने गुण हैं आप सोच सकते हैं। सभी प्रकार की दालों का मिश्रण केवटी की दाल बनाई जाती थी, जो प्रोटीन की कमी नहीं होने देती।। हरी सब्जियां खेत बाड़ी में स्वयं जैविक रूप से उगाती। घर के आंगन में किसी भी लकड़ी के सहारे गिलकी, लौकी, कद्दू सेमी तोरई की बेला ऊपर चढ़कर घर के कवेलु पर फैलकर घर की छत को हरियाली प्रदान करने के साथ बारिश में सब्जियों का बड़ा स्रोत है। जब हरी सब्जी उपलब्ध न हो तब बड़ी या बरी, बेसन के गट्टे या फिर सिलबट्टे पर पिसी कोई भी चटनी स्वाद के साथ सेहत भरी है। दादी नानी के हाथों का बना अचार, मुरब्बा किण्वन की प्रक्रिया के माध्यम से

गुड बैक्टीरिया का स्रोत है। प्रत्येक मौसम के विभिन्न प्रकार की भाजियों का प्रयोग दादी करती हैं। भाजी के भजिए, भाजी में फंगोरे, कितने ही रूप में खाए जाने वाली भाजी विटामिन का स्रोत है। दादी सभी भोजन तलकर नहीं बनाती, भूनकर, भाप में भफाकर, उबलते पानी में पकाकर बनाती है, जो सेहतमंद है।

साप्ताहिक उपवास लाभदायक:

दादी के अनुसार साप्ताहिक उपवास भले ही धार्मिक रूप से रखा जाता हो किंतु वह कहती है. 'एक दिन तो पेट की चक्की को आराम दो, एक दिन अनाज मत खाओ, फल खाओ, खूब पानी पियो, खाने में सेंधा नमक का उपयोग करो। दादी जानती है सादा नमक से कहीं अधिक गुणकारी है सेंधव नमक। दादी को भोजन के बाद पान खाना है। पान में चूना लगाकर खाती दादी को कभी कैल्शियम की कमी नहीं हुई। भोजन के सभी छह तत्व दादी नानी की पकाई रसोई में रहते थे, तभी तो हमने कभी अस्पताल का मुंह नहीं देखा, जाए वो जिसने दादी की सीख नहीं मानी।' दादी के हाथों बनी पेज, दलिया, भात का मांड़ सभी पेट को निरोगी रखने में कारगर उपाय थे।

नुस्खे: हमारे प्रभावी मंत्र:

यह बात अलग है कि वर्तमान समय में जीवन शैली, प्राकृतिक वातावरण में बहुत परिवर्तन हुए हैं किंतु दादी नानी के नुस्खे आज भी हमारे स्वास्थ्य हेतु रक्षा कवच है। उनकी प्रत्येक हिदायत के पीछे वैज्ञानिक कारण है, भले ही वे इसे धर्म और विश्वास से जोड़ती हैं किंतु वे सब स्वस्थ जीवन शैली की पैरोंकार हैं। चातुर्मास में भोज्य रूप में ग्रहण की जाने वाली सामग्री या उसके निषेधता दादी के अनुसार में प्राकृतिक प्रकोप से बचाते हैं। दादी कहती है। बाहर से आओं तो हाथ-पैर धोकर घर में प्रवेश करो, यदि कोई बीमार है तो उसे घरेलू उपाय से ठीक करने के साथ हिदायत देती कि बीमार व्यक्ति बाहर न निकले ताकि संक्रमण न फैले। उदाहरण स्वरूप यदि बुखार के साथ माता (चेचक, मीजल्स) दिख गई तब नीम की पत्ती पानी में डूबा कर दरवाजे के पास रखती है, नीम के पत्तों में शीतलता है, रोगाणुओं को नष्ट करने की क्षमता है, औषधीय गुण है। दादी के अनुसार प्रत्येक घर में तुलसी का का बिरवा लगाना और उसकी पूजा करना चाहिए । तुलसी की पूजा धार्मिक रूप से करने के साथ इस रूप में भी की जाती है कि वह गुणों की खान है। तुलसी का आयुर्वेदिक महत्व जग जाहिर है

नियम और निषेध:

दादी के अनुसार भोजन बैठकर आराम से करो, चबाकर करो, रात में क्या नहीं खाना है, दिन में क्या खाना है, सभी के नियम और निषेधता है। दादी के हाथों से बना अदरक, दालचीनी, तुलसी, इलायची, काली मिर्च का काढ़ा आज की चाय का बहुत बढ़िया विकल्प है। घर में यदि किसी को बुखार या सर्दी खांसी हो जाए पिपली (लेंडी पीपर) को तुलसी के बीजों के साथ तवे पर भून कर शहद में मिलाकर चाटने देती जिससे खांसी ठीक होती थी। लहसुन की कलियों को सरसों के तेल में तवे पर सेककर उसमें जीरा, अजवाइन और काला नमक मिलाकर गर्म-गर्म चबाने को कहती और उसके बाद पानी नहीं पीने देती। दादी और नानियों के नुस्खे बहुत कारगर होते हैं, दादी नानी द्वारा बताए सेहत के खजाने की महत्ता को समझें और स्वयं को स्वस्थ रखें और खुशहाल जीवन जियें। सच में खजाना है दादी-नानी की रसोई।

लेखिका- ने हिंदी के आंचलिक साहित्य पर शोध किया है
संपर्क: श्री नीलकंठ पटवारी गीता नगर, पंचशील कॉलोनी छिन्दवाड़ा (मप्र)

कला समय

इस विशेषांक के अतिथि संपादक
(मंदसौर म.प्र.) मो. 9424546019

आगामी अंक
अक्टूबर-नवम्बर 2024

लोकमाता अहिल्याबाई होल्कर 300वाँ जन्म जयंती वर्ष विशेषांक

अतिथि संपादक : कैलाशचन्द्र घनश्याम पाण्डेय
(राष्ट्रपति सम्मान प्राप्त) वरिष्ठ साहित्यकार, इतिहासकार एवं पुरातत्वविद्

इस प्रतिष्ठापूर्ण विशेषांक हेतु मौलिक आलेख, दुर्लभ छाया चित्र, विशेष पाण्डुलिपियाँ सादर आमंत्रित हैं।
सामग्री प्राप्ति की अंतिम तिथि 30 अक्टूबर 2024 है।
- संपादक

आलेख

रसोई में उपलब्ध स्वाद और स्वास्थ्य

डॉ रूपाली सारये

घर में बीमारी के दौरान दादी मां की सोच और रसोई में उपलब्ध घरेलू उपायों का गहरा रिश्ता है। यह पारंपरिक ज्ञान और लक्षण पर आधारित है, जिसमें स्वास्थ्य, स्वाद, और मनोविज्ञान के माध्यम से अवसाद और उपचार का ध्यान रखा जाता है। आओ, इसे थोड़ा विस्तार से समझें:

1. रसोई घर के और साधारण स्वादिष्ट बूटियाँ:

हल्दी (Turmeric): हल्दी में एंटीसेप्टिक और एंटी-इंफ्लेमेट्री गुण होते हैं। यह चोट, कटाव, सूजन, और सर्दी-जुकाम जैसी समस्याओं के लिए प्रयोग किया जाता है। हल्दी दूध वाला, जिसे 'गोल्डन मिल्क' भी कहा जाता है, स्वास्थ्य के लिए बहुत अच्छा माना जाता है।

सेंधव नमक (सेंधा नमक): पाचन को सहायक और सूक्ष्मजीवों को शरीर से निकालने में सहायक। व्रत और उपवास के दौरान इसका उपयोग किया जाता है।

धनिया (धनिया): धनिया के बीज पाचन तंत्र को सुधारते हैं और शरीर की गर्मी को कम करने में मदद करते हैं। धनिया का पानी बुखार और पाचन तंत्र में लाभकारी होता है।

काली मिर्च (काली मिर्च): यह एक एंटीऑक्सीडेंट है और प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करती है। इसका उपयोग सर्दी-जुकाम, खांसी और बुखार में किया जाता है।

दालचीनी (दालचीनी): दालचीनी का उपयोग मधुमेह, पाचन तंत्र और विषाक्तता में किया जाता है। यह शरीर की ऊर्जा को बनाए रखने में सहायक है।

लोंग (Long Pepper): यह लोंग, खांसी और गले के इलाज में उपयोगी है। इसे अदरक और शहद के साथ भी लिया जाता है।

सूखा अदरक (सूखा अदरक): सूखा अदरक जिसे सौंठ कहा जाता है, पाचन संबंधी समस्याएं, उपज-जुकाम और जोड़ों के दर्द में फायदेमंद है।

अदरक (अदरक): अदरक का रस और नजला-जुकाम और खांसी में राहत देता है। अदरक की चाय भी बहुत प्रसिद्ध है।

2. व्रत और उपवास:

उपवास (उपवास): शरीर को डिटॉक्सिफाई करने और पाचन तंत्र को आराम देने का एक प्राचीन तरीका है। उपवास के दौरान सेंधव नमक, फल, और पोषक आहार का सेवन किया जाता है, जिससे शरीर को आवश्यक पोषण मिलता है।

व्रत के खाद्य पदार्थ: व्रत में पकाये जाने वाली चीजें जैसे साबूदाना, फल, मूँगफली, और व्रत के विशेष खाद्य पदार्थ शरीर को ऊर्जा देते हैं और पाचन को आसान बनाते हैं।

3. सीज़न के अनुसार:

वॉल्स का सेवन शरीर को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता है और वॉलर्स से वॉलनट में मदद मिलती है। जैसे कि बारिश के मौसम में पकौड़े, समुद्र में मक्का या बाज़ार के भजिये।

मोटी रोटी: मोटी रोटी, विशेष रूप से मोटे अनाज की, जैसे बाजरा, मक्का, ज्वार, आदि, स्वास्थ्य के लिए सबसे अच्छी मानी जाती है। ये रोटियां पाचन को सुधारती हैं और शरीर को लंबे समय तक ऊर्जा प्रदान करती हैं।

4. दादी माँ की सोच:

दादी माँ की सोच, पारंपरिक ज्ञान और नैतिकता पर आधारित है, जो दीक्षा से चली आ रही है। यह सोच प्राकृतिक और सरल उपायों के माध्यम से शरीर को स्वस्थ रखने पर ज़ोर देती है। उनके विचार में स्वास्थ्य को बनाए रखने का तरीका यह है कि शरीर को आहार और जीवनशैली के माध्यम से समर्थित बनाया जाए, ताकि शरीर स्वाभाविक रूप से विकसित हो सके।

दादी मां के ये उपाय और सोच, स्वास्थ्य और पोषण के पारंपरिक सिद्धांतों पर आधारित हैं, दांतों की रुकावट और उपचार के लिए प्राकृतिक, सहज और बहुमत उपायों का उपयोग किया जाता है। घरेलू उपायों के लिए घरेलू उपायों की एक पुरानी परंपरा जारी है। यहां कुछ सामान्य सुपरमार्केट के लिए कुछ घरेलू उपाय दिए गए हैं:

1. ठंडा और ठंडा

अदरक और शहद : अदरक का रस और शहद पूरी तरह से ग्लूकोज-जुकाम में लेने से मिलती है राहत।

हल्दी दूध वाला : गर्म दूध में हल्दी मिलाकर पीने से तरल-जुकाम में आराम मिलता है।

तुलसी और अदरक की चाय : तुलसी के पत्ते, अदरक और छोटी सा काली मिर्च की चाय।

2. गला सताहते

गरारे करना : गर्म पानी में नमक मिलाकर गरारे करने से गले की खराश में राहत मिलती है।

मुलेठी चौबना : मुलेठी की जड़ चबाने से गले की सूजन और दर्द में आराम मिलता है।

3. पाचन क्रिया

हींग और पानी : हींग को समिति मात्रा में पीने से गैस और पेट दर्द से राहत मिलती है।

जीरा के लाभ : जीरा के लाभ की मात्रा एक समान होती है, भोजन से पाचन शक्ति कमजोर होती है।

4. बुखार

धनिया का पानी : धनिया के बीज को पानी में भिगोकर पियें। इससे शरीर का तापमान कम होता है।

काली मिर्च और तुलसी : काली मिर्च के साथ तुलसी के सेवन से बुखार कम करने में मदद मिलती है।

5. सिरदर्द

पुदीने का तेल: पुदीने का तेल के इस्तेमाल से सिरदर्द में राहत मिलती है।

पैनकेक पेस्ट : पैनकेक को पीसकर पानी के साथ पेस्ट और आभूषण पर सजावट।

6. त्वचा का हाल

एलोवेरा जेल : एलोवेरा का जेल त्वचा पर जलन और खुजली से राहत देता है।

नीम का पेस्ट : नीम के पेस्ट पीसकर त्वचा पर लगाने से मुंहासे और दाग-धब्बे कम होते हैं।

7. घाव और कटाव

हल्दी और नारियल का तेल : हल्दी और नारियल का तेल सभी घावों पर लगाने से संक्रमण नहीं होता है और घाव जल्दी भरता है।

शहद : शहद को सीधे घाव पर लगाने से घाव जल्दी ठीक हो जाता है।

इन उपायों के इस्तेमाल में समय ध्यान दें कि अगर समस्या गंभीर है या लंबे समय तक बनी हुई है, तो डॉक्टर की सलाह लेना जरूरी है।

लेखिका- सहायक प्राध्यापक हिंदी
सम्पर्क: तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अध्ययनशाला,
देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर
टी-19,402, ट्रेजर टाउन, गड़बड़ी पुलिया के पास,बिजलपुर, इंदौर 452001

धन्वन्तरि ध्यान

ॐ शंखं चक्रं जलौकां दधदमृतघटं चारुदोर्भिश्चतुर्मिः।
सूक्ष्मस्वच्छातिहृयांशुकपरिविलसन्मौलिमंभोजनेत्रम्॥
कालाम्भोदोज्ज्वलांगं कटितटविलसच्चारूपीतांबराढ्यम।
वन्दे धन्वंतरिं तं निखिलगदवनप्रौढदावाग्निलीलम॥

धन्वन्तरि ध्यान : जिन्होंने संसार के हित में अपने हाथों में निनाद के लिए शंख, व्याधियों के पाश छेदन के लिए चक्र, दूषित रुधिर शोषण के लिए जलौक और चिरायुष्य के लिए अमृत कलश धारण किया है, इन चारों से जिनकी भुजाएं सुचारु लगती हैं, जिन्होंने अपने दिव्य तन पर अति महीन और उज्ज्वल अंशुक धारण किया है और जो सिर तक उड़ान भरकर विलास की प्रतीति देता है, जिनके नेत्र कमल के समान हैं, जिनके अंग काले मेघ से समान चमक लिए हैं, पीतांबर जिनके कमर के तट तक झूलता और छादित रहता है, ऐसे भगवान धन्वन्तरि की वंदना करता हूँ जो मानवता के समस्त रोगों को अपनी प्रौढ़ अग्नि से समाप्त करने की लीला करते हैं।

आलेख

'आयुर्वेद में शास्त्रीय संगीत के उपचारिक प्रयोग: एक विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण'

शैरिल शर्मा

आयुर्वेद और शास्त्रीय संगीत, भारतीय संस्कृति के दो महत्वपूर्ण आयाम हैं, जो न केवल कलात्मक और सांस्कृतिक मूल्य रखते हैं, बल्कि चिकित्सा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी गहन योगदान देते हैं। आयुर्वेद, जो प्राचीन भारतीय चिकित्सा प्रणाली है, शरीर, मन और आत्मा के त्रिदोष (वात, पित्त, कफ) के संतुलन पर आधारित है। इसी तरह, भारतीय शास्त्रीय संगीत का दर्शन भी मानव मस्तिष्क और शरीर पर गहरे प्रभाव डालने की क्षमता रखता है। यह आलेख आयुर्वेद में शास्त्रीय संगीत के उपचारिक प्रयोगों का एक विश्लेषणात्मक अन्वेषण प्रस्तुत करता है।

आयुर्वेद का सिद्धांत और संगीत चिकित्सा का आधार

आयुर्वेद का उद्देश्य केवल बीमारी का उपचार करना नहीं है, बल्कि स्वस्थ जीवन शैली को बढ़ावा देना है। यह पंचमहाभूत (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश) और त्रिदोष के संतुलन को बनाए रखने पर बल देता है। आयुर्वेद में मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य को समान रूप से महत्व दिया गया है, और इसी संदर्भ में संगीत चिकित्सा का उपयोग होता है।

शास्त्रीय संगीत में रागों का विशेष स्थान है, जो विशिष्ट ध्वनि तरंगों और स्वरों के संयोजन से निर्मित होते हैं। आयुर्वेद के अनुसार, संगीत के ये स्वर और तरंगे शरीर के दोषों को प्रभावित कर सकते हैं, जिससे मानसिक और शारीरिक संतुलन में सुधार हो सकता है। उदाहरण के लिए, कुछ रागों का उपयोग मानसिक शांति के लिए किया जाता है, जबकि कुछ का उपयोग शारीरिक विकारों के निवारण के लिए।

मानसिक स्वास्थ्य पर शास्त्रीय संगीत के प्रभाव: एक विश्लेषण

मानव मस्तिष्क की संरचना और उसकी कार्यप्रणाली अत्यधिक जटिल है। मस्तिष्क के विभिन्न हिस्से, जैसे हिप्पोकैम्पस और अमिगडाला, संगीत के प्रभाव में आकर बदलते हैं। शोध से पता चलता है कि शास्त्रीय संगीत, विशेष रूप से धीमे और मधुर राग, जैसे राग भैरवी और राग दरबारी कान्हड़ा, न्यूरोट्रांसमीटर डोपामाइन और सेरोटोनिन के स्तर को बढ़ाते हैं, जो तनाव और अवसाद के प्रबंधन में सहायक होते हैं। आयुर्वेद में, मनोविकारों को सत्त्व, रजस और तमस गुणों के असंतुलन से जोड़ा जाता है, और शास्त्रीय संगीत का सत्व गुणों को बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान माना जाता है।

शारीरिक विकारों में शास्त्रीय संगीत का योगदान

शास्त्रीय संगीत का प्रभाव केवल मानसिक स्वास्थ्य तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका उपयोग शारीरिक विकारों के उपचार में भी किया जाता है। उदाहरण के लिए, राग तिलंग और राग हंसध्वनि का उपयोग उच्च रक्तचाप और हृदय रोगों के प्रबंधन में किया जाता है। आयुर्वेदिक सिद्धांतों के अनुसार, रक्तचाप का सीधा संबंध पित्त दोष से होता है, और इन रागों की शांत ध्वनि तरंगें पित्त दोष को शांत करने में सहायक होती हैं।

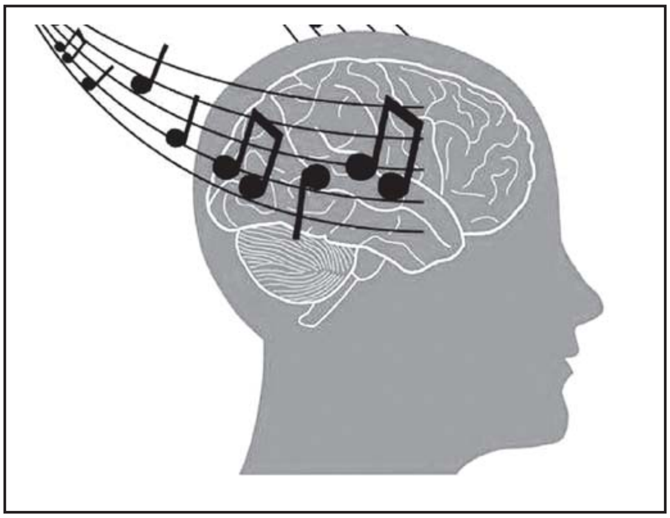

राग भूपाली और राग यमन, जो मन और मस्तिष्क को शांत करने के लिए जाने जाते हैं, का उपयोग पाचन संबंधी समस्याओं में भी किया जाता है। आयुर्वेद के अनुसार, पाचन प्रक्रिया का संबंध जठराग्नि और वात दोष से है, और जब मन शांत होता है, तो जठराग्नि भी सुचारू रूप से कार्य करती है।

दर्द प्रबंधन में संगीत का उपयोग: एक गहन दृष्टिकोण

आयुर्वेद में, दर्द को वात दोष की विकृति माना जाता है। राग पूरिया धनश्री और राग जयजयवंती जैसे रागों की ध्वनि तरंगें तंत्रिका तंत्र पर सीधा प्रभाव डालती हैं, जिससे मस्तिष्क के दर्द संबंधी केंद्रों की सक्रियता कम हो जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि शरीर दर्द को कम महसूस करने लगता है। वर्तमान शोध भी इस बात की पुष्टि करते हैं

कि संगीत सुनने से एंडोर्फिन का स्तर बढ़ता है, जो प्राकृतिक दर्द निवारक के रूप में कार्य करता है।

संगीत चिकित्सा का वैज्ञानिक आधार: एक आधुनिक दृष्टिकोण

आधुनिक विज्ञान ने संगीत के मनोदैहिक प्रभावों को प्रमाणित करने के लिए कई अध्ययन किए हैं। अनुसंधानों से पता चला है कि शास्त्रीय संगीत मस्तिष्क की न्यूरोप्लास्टीसिटी को प्रभावित कर सकता है, जो कि नई न्यूरल कनेक्शन बनाने की क्षमता है। इससे व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक स्थिति में सुधार होता है और मानसिक विकारों के उपचार में सहायता मिलती है। यह भी पाया गया है कि संगीत का उपयोग प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करने में किया जा सकता है, जो शरीर को बीमारियों से लड़ने की क्षमता को बढ़ाता है।

निष्कर्ष: एक एकीकृत दृष्टिकोण

आयुर्वेद और शास्त्रीय संगीत का संयोजन एक समग्र चिकित्सा पद्धति के रूप में उभरता है। यह दृष्टिकोण न केवल प्राचीन भारतीय ज्ञान पर आधारित है, बल्कि आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधानों द्वारा भी समर्थित है। शास्त्रीय संगीत का आयुर्वेदिक चिकित्सा में उपयोग त्रिदोष के संतुलन और शारीरिक, मानसिक, और आत्मिक स्वास्थ्य को बनाए रखने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

संपर्क -1035 शिवाजीनगर, महामाया मंदिर
के पास, पिलखुवा 245304 (जिला हापुड़)
मो. 8057159554, sherilsharma97@gmail.com

कला समय

कला, संस्कृति, साहित्य एवं समसामयिक द्वैमासिक पत्रिका

के सदस्य बने

मैं .... कला समय पत्रिका का .... एक वर्ष : 300/- रूपये, दो वर्ष : 600/- रूपये, चार वर्ष : 1000/- रूपये, आजीवन : 10000/- रूपये का सदस्य बनना चाहता/चाहती हूँ। पत्रिका का साधारण डाक शुल्क एवं रजिस्टर्ड शुल्क रूपये 150/- प्रतिवर्ष सहित कुल रूपये .... ऑनलाइन/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर .... दिनांक .... संलग्न है।

नाम : ....

पता : ....

....

पिन : .... मो.: ....

हस्ताक्षर

सदस्यता सहयोग राशि:

वार्षिक	:	300 (व्यक्तिगत)	350 (संस्थागत)
द्वैवार्षिक	:	600 (व्यक्तिगत)	700 (संस्थागत)
चार वर्ष	:	1000 (व्यक्तिगत)	1200 (संस्थागत)
आजीवन	:	10,000 (व्यक्तिगत)	12000 (संस्थागत)

(15 वर्ष के लिए)

(कृपया सदस्यता शुल्क- ऑनलाईन/ड्राफ्ट/मनीआर्डर द्वारा 'कला समय' के नाम पर उक्त पते पर भेजें)

विशेष : 'कला समय' की प्रतियाँ साधारण डाक/रजिस्टर्ड बुक-पोस्ट से भेजी जाती हैं यदि कोई महानुभाव रजिस्टर्ड पोस्ट से पत्रिका मंगवाना चाहते हैं तो कृपया वार्षिक डाक खर्च 150/- अतिरिक्त भेजने का कष्ट करें।

कार्यालय सम्पर्क :
संपादकीय एवं सदस्यता सहयोग
जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर,
अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)- 462016
फोन : 0755-2562294, मो.-94256 78058
ई-मेल : kalasamaymagazine@gmail.com
वेबसाइट : **www.kalasamaymagazine.com**

ऑनलाइन सदस्यता सहयोग सुविधा :
'कला समय' का बैंक खाता विवरण
पंजाब नैशनल बैंक की शाखा अरेरा कॉलोनी भोपाल, म.प्र. **(IFSC : PUNB0093210)** के नाम देय, खाता संख्या **A/No. 09321011000775** में ऑनलाइन राशि जमा कराने के बाद रसीद की फोटोकॉपी अपने पूर्ण पते के साथ हमें भेज दें।

- कृपया सदस्यता शुल्क 'कला समय' के नाम भेजें।
- सदस्यता शुल्क प्राप्त होने के बाद अगले अंक से पत्रिका भेजना प्रारम्भ की जावेगी।
- सदस्यता शुल्क निम्न पते पर भेजे:- जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कालोनी, भोपाल (म.प्र.) 462016

-प्रबंध संपादक

संतुलित जीवन शैली सिखाता है आयुर्वेद

डॉ. घुंघरू परमार

आयुर्वेद दुनिया की सबसे प्राचीन चिकित्सा प्रणालियों में से एक माना जाता है। आयुर्वेद की एक लंबी परंपरा है जिसकी उत्पत्ति लगभग 5000 वर्ष पूर्व हुई थी। यह उपचार प्रणाली आत्मा, शरीर और मस्तिष्क में एक संतुलित जीवन-शैली को निर्मित करने हेतु आहार और विचार का अभ्यास करने के लिए प्रोत्साहित करती है।

परंपरा के अनुसार आयुर्वेद के आदि आचार्य जहाँ एक ओर आचार्य अश्विनी कुमार माने जाते हैं, वही भगवान धन्वंतरि को आयुर्वेद का जनक कहा जाता है।

आयुर्वेद की शुरुआत भारत में लगभग 3000 वर्ष पूर्व हुई थी। वर्तमान में भारत की एक बड़ी आबादी में इस प्रणाली का उपयोग आधुनिक चिकित्सा के साथ मिलकर होता है।

आयुर्वेद को 'अथर्ववेद' का ही उपवेद माना जाता है। सबसे पुराना साहित्य 'ऋग्वेद' में भी औषधि प्रयोजनों के लिए जड़ी-बूटियों के उपयोग का उल्लेख मिलता है। आयुर्वेद को सामान्यत: जीवन का विज्ञान ही माना जाता है। यह चिकित्सा पद्धति दीर्घायु बनाने वाली चिकित्सा पद्धति भी मानी जाती है।

'चरक संहिता' भारत का सबसे प्राचीन और प्रामाणिक आयुर्वेद ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में हमारे देश भारत के भौगोलिक, आर्थिक और सामाजिक स्थितियों के बारे में भी पर्याप्त जानकारी मिलती है। 'चरक संहिता' की रचना दूसरी शताब्दी से भी पूर्व हुई थी। भारतीय चिकित्सा विज्ञान में जो तीन बड़े नाम हैं, वह हैं- चरक, सुश्रुत और वाग्भट्ट। चरक संहिता सुश्रुत संहिता तथा वाग्भट का अष्टांग संग्रह आज भी भारतीय चिकित्सा विज्ञान के मानक ग्रंथ हैं।

चरक-संहिता में अनेक बीमारियों के वर्णन के साथ उनके उपचार के बारे में भी बताया गया है। लगभग 300 ईसा पूर्व चरक संहिता में आयुर्वेद की आठ शाखाओं का विस्तार से वर्णन किया गया है।

आयुर्वेद में चैतन्य की स्थिति को ही 'आयु' कहा जाता है। भारतीय आयुर्वेद में मुख्य रूप से तीन प्रकार के दोष होते हैं- वात, पित्त और कफ। इन दोषों को मानव शरीर और मन में पाई जाने वाली जैविक ऊर्जा के रूप में वर्णित किया जाता है। यह दोष पाँच मूल तत्वों- पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश के संयोजन का प्रतिनिधित्व करता है। वात वायु और आकाश का, पित्त अग्नि और जल का, तथा कफ, पृथ्वी और जल से जुड़ा है। यह मानव शरीर और मन को नियंत्रित करता है।

आयुर्वेदिक चिकित्सा में अश्वगंधा को आयुर्वेदिक जड़ी बूटियों का राजा माना जाता है तो तुलसी को आयुर्वेद में औषधि की रानी माना जाता है। क्योंकि यह लगभग सौ से भी अधिक बीमारियों का निराकरण है। संतुलित आहार, सही दिनचर्या का पालन, व्यायाम और प्राकृतिक जड़ी-बूटियां ही आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति का इलाज है।

प्राचीन भारतीय चिकित्सा प्रणाली यानी आयुर्वेद के बारे में प्रकृति आधारित चिकित्सा पद्धतियों पर नालंदा विश्वविद्यालय में काफी कुछ सिखलाया जाता था। 427 ईस्वी में नालंदा विश्वविद्यालय की स्थापना हुई थी। जहाँ देश- विदेश से हजारों छात्र शिक्षा ग्रहण करने आते थे। इसकी स्थापना गुप्त वंश के शासक ने की थी। यहाँ बहु-विषयक शैक्षणिक पाठ्यक्रम की व्यवस्था थी। जहाँ उच्च शिक्षा के अंर्तगत बौद्ध धर्म, चिकित्सा पद्धति, खगोलीय विज्ञान, गणितीय और सांस्कृतिक तथा धार्मिक परम्पराएं विकसित हुईं।

नालंदा विश्वविद्यालय के बारे में ऐसी किवदंती है कि एक बार बख्तियार खिलजी बहुत ज्यादा बीमार पड़ गया था। उसका उपचार किसी भी प्रकार से संभव नहीं हो पा रहा था। उस समय नालंदा विश्वविद्यालय के आयुर्वेद विभाग के प्रमुख आचार्य राहुल श्रीभद्र जी थे। आचार्य राहुल को बुलवाया गया। खिलजी अपना इलाज किसी भी प्रकार से आयुर्वेद आचार्य से करवाने को तैयार नहीं था। लेकिन आचार्य राहुल ने किसी प्रकार कुरान के पन्नों पर अदृश्य लेप लगाकर उन्हें पढ़ने दिया, और वह

ठीक हो गया। खिलजी आयुर्वेद के इस शक्ति और ज्ञान को बर्दाश्त नहीं कर सका। उसने क्रोध में आयुर्वेद चिकित्सा को ही मिटा देना चाहा,और नालंदा विश्वविद्यालय में आग लगवा दी। तब जो अवशेष बचा, उससे वर्तमान में भी आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति उतनी ही समृद्ध है।

बिहार के कई जिले में आयुर्वेदिक चिकित्सा विद्यालय खोले गए। कई तो ठीक-ठाक चल रहे हैं लेकिन कई विश्वविद्यालय सुविधा और संसाधनों की कमी के कारण, ध्यान नहीं देने से बंद हो गए हैं। सरकार और लोगों को भी इस प्राचीन पद्धति पर ध्यान देने की आवश्यकता है। ताकि यह समृद्ध परंपरा एक बार फिर से लोगों को स्वस्थ जीवन शैली की ओर अग्रसर करें।

आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली में बंगाल का भी विशेष योगदान है। औपनिवेशिक भारत में आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति अत्यधिक ही प्रभावित हुई थी। विद्वान लोग हतोत्साहित होने के बावजूद भी उम्मीद नहीं छोड़ रहे थे। उन्होंने पारंपरिक आयुर्वेद ज्ञान के प्रचार-प्रसार के लिए बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। उन्होंने इस विरासत को आगे बढ़ाने के लिए राज्य में जगह-जगह आयुर्वेदिक कॉलेज और औषधालय की स्थापना की। इस पुनर्जागरण के अग्रदूत कविराजा गंगाधर रे और कविराजा गंगा प्रसाद सेन थे।

18वीं और 19वीं शताब्दी में आयुर्वेदिक ग्रन्थों को मुस्लिम शासकों द्वारा नष्ट कर दिया गया था। कई ग्रंथ संरक्षण के अभाव में भी नष्ट हो चुके थे तो कई प्रकाशन के अभाव में। यह बहुत बड़ी चुनौती थी बंगाल के लिए। 1835 में अंग्रेजी शिक्षा अधिनियम की स्थापना के बाद आयुर्वेद के लिए अत्यंत ही मुश्किल समय था। आयुर्वेद की शिक्षा को गुरु-शिष्य विद्यालय-परंपरा के रूप में बंगाल के कुछ विद्वानों ने जारी रखा। उन्होंने अपने निवास-स्थल पर ही इच्छुक छात्रों के लिए शिक्षण सुविधाओं की व्यवस्था की जिसे 'तोल' या 'चतुष्पथी' भी कहा जाता था।

कविराज गंगाधर रे के शिष्यों में प्रमुख थे- गयादास सेन, हरन चंद्र चक्रवर्ती, द्वारकानाथ सेन, श्री चरण सेन, गंगा प्रसाद सेन, इत्यादि। इन लोगों ने भारत में ही आयुर्वेदिक उपचार का अभ्यास किया। और आयुर्वेद प्राचीन पद्धति को समृद्ध किया। पुन: इन शिष्य-विद्वानों द्वारा नए शिष्य परंपरा को बढ़ावा दिया गया और कितने ही विद्वानों,राजाओं द्वारा इस प्राचीन-पद्धति को हरेक प्रकार से समृद्ध किया गया। जिनके पास जमीन या अन्य संसाधन थे उन्होंने जमीन और संसाधन देकर मदद किया। कुछ विद्वानों ने इस चिकित्सा प्रणाली की डिग्री ग्रहण कर आजीवन आयुर्वेद को समर्पित कर कितने ही लाइलाज मरीज का इलाज किया।

वर्तमान समय में इस आयुर्वेद पद्धति को सरकार द्वारा प्रोत्साहन, जागरूकता और संसाधन की आवश्यकता है ताकि मनुष्य प्रकृति के पास पुन: लौटे और एक स्वस्थ जीवन- शैली परंपरा को अपनाकर स्वयं और आगामी पीढ़ी के लिए एक विरासत तैयार करे।

(लेखिका ने गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के साहित्य पर शोध किया है)

Siddha town, Flat no- Au-110, Beraberi, Narayanpur,
Gopalpur.Rajarhat. Kolkata-700136
Mob:7004981616
ghunghru.parmar01@gmail.com

■

जनजातीय वैद्य

जनजातीय चिकित्सा को सम्पूर्ण स्वास्थ्य देखभाल हेतु आवश्यक ज्ञान, कौशल और सम्बंधित क्रियाओं के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। बीमारी/रोगों के निवारण और उपचारात्मक पहलुओं में इसकी भूमिका होने से समुदाय की भलाई को बढ़ावा मिलता है जिससे इसे पहचान भी प्राप्त होती है एवं स्वीकार भी किया जाता है। एक विस्तृत दृष्टिकोण होने के साथ इसमें शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा आत्मिक कल्याण का सम्मिश्रण है। इसका प्रयोग विश्वव्यापी हो चुका है एवं आज की परिष्कृत पाश्चात्य चिकित्सा प्रणाली के होते हुए भी यह विश्वभर के सुद्दूर अंचलों में फल-फूल रही है। जनजातीय समुदायों द्वारा इस्तेमाल की जाने वाली विविध प्रणालियों का परिणाम न केवल सकारात्मक बल्कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सार्थक भी है। यह जनजातीय उपचारक एक स्वतंत्र प्रणाली का प्रतिनिधित्व करते हैं तथा इनको समुदायों से समर्थन प्राप्त होता है। इन उपचारकों की रोग निवारण प्रणाली पर जनजातीय स्वास्थ्य एवं बीमारियों से सम्बंधित सभी सामान्य रीति-रिवाज, परंपराएँ, महत्व, मान्यताएँ और प्रथाओं का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। पारम्परिक जनजातीय औषधीय चिकित्सक अपने समाज में पारम्परिक वैद्यों के रूप में जाने जाते हैं तथा वे किसी भी आयुर्विज्ञान विभाग जैसे - आयुर्वेद, एलोपैथी या होम्योपैथी से सम्बंधित नहीं हैं।

इन जनजातीय औषधि की मुख्य सामग्री पौधों से प्राप्त होती है। प्रकृति में उपलब्ध विविध प्रकार के औषधीय पौधे एवं जड़ी-बूटियों को उपचारको द्वारा संग्रहित किया जाता है। भारत में पारम्परिक उपचार प्रणाली की विविधता देखने को मिलती है। कई सदियों में जनजातीय समुदायों ने अपनी ही एक प्रणाली विकसित कर ली है। जो देशज सिद्धांतों एवं धारणाओं पर आधारित इनका यह पारम्परिक ज्ञान मौखिक रूप से पीढ़ी दर पीढ़ी सौंपा जाता है। इस उपचार हेतु सभी सामग्री प्रकृति से प्राप्त होती हैं जिसमें जड़ी-बूटी, बीज, जड़, एवं छाल के अलावा चूर्ण के रूप में विभिन्न प्रकार के खनिज, धातु एवं अन्य प्राकृतिक पदार्थ प्रयोग में लाये जाते हैं। इन वस्तुओं का संग्रह उपचारक स्वयं ही करते हैं। संग्रह हेतु विभिन्न नुस्खों सहित संकलन समय संबंधित वर्जनाऐं और पाबंदी भी प्रचलित हैं। मान्यतानुसार अगर एक जडी-बूटी का संकलन समय अनुरूप नहीं किया जाता है तो उस जड़ी-बूटी की विशेषता नष्ट हो जाती है। इन जड़ी-बूटियों को ओखली एवं मुसल के माध्यम से तैयार किया जाता है। रोग अनुसार औषधि का प्रयोग खिलाकर या मलहम के रूप में किया जाता है इसके आलावा रोग को दूर रखने हेतु जड़ी-बूटी का कुछ अंश घर के बाहर या भीतर भी रखा जाता है।

स्त्रोतः इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मानव संग्रहालय, भोपाल

संगीत-चिकित्सा

डॉ. राजेन्द्र कृष्ण अग्रवाल 'रजक'

संगीत-चिकित्सा का आजकल बहुत तेज़ी से प्रचार-प्रसार होने लगा है। यद्यपि संगीत की शक्ति से अनभिज्ञ लोग आज भी इसके महत्त्व को नकारते हुए मिल जाएंगे। इसीलिए संगीत-चिकित्सा के संबंध में जानने से पहले संगीत के बारे में भी कुछ बातें जान लेनी आवश्यक हैं।

संगीत कला कोई मनोरंजन का साधन मात्र नहीं है। जो लोग इस कला को केवल कला के लिए ही समझते हैं, वे भी बड़ी भारी भूल करते हैं। संगीत स्वर, लय और ताल पर आधारित ऐसी अद्भुत कला है जिसका उपयोग जीवन के किसी भी पक्ष को सजाने और संवारने के लिए किया जा सकता है। संगीत एक अथाह समुद्र की भांति है जिसके गर्भ में रत्न ही रत्न भरे पड़े हैं। समुद्र-मंथन की कथा भला किसने नहीं सुनी होगी? देव और दानवों के सम्मिलित प्रयास से जब उसका मंथन किया गया तो उसके मंथन से विविध निधियों की प्राप्ति तो हुई किंतु भारी मात्रा में विष भी निकला। उस भयानक विष को तो भूतभावन भगवान् भोलेनाथ ने अपने कंठ में धारण कर महान् परमार्थ का कार्य कर दिया किंतु आज तो भारतवर्ष जैसी आध्यात्मिक भूमि पर संगीत का जिस तरह दुरुपयोग हो रहा है, उसके विषय में किसी से भी कुछ कहने और सुनने की आवश्यकता ही नहीं है। सब भलीभांति परिचित हैं। मेरा कहने का आशय है कि संगीत भी एक अथाह समुद्र की भांति ही है जिसके मंथन से हम अमृत और विष दोनों ही प्राप्त कर सकते हैं। आज संगीत से अमृत-पान की अपेक्षा हम विष-पान अधिक कर रहे हैं। संगीत केवल धर्म और अध्यात्म, ज्ञान और ध्यान तक ही सीमित नहीं है। यह एक विज्ञान भी है और गणित भी। इसके विस्तृत क्षेत्र को पहचाननें वाले किसी संगीतज्ञ ने ग्रह की खोज की तो किसी ने इसके सप्त-स्वरों के आधार पर ज्योतिष-शास्त्र की भांति ही भविष्यफल बताने की विधि बतला दी। रमन इफेक्ट की खोज करने वाले वैज्ञानिक भारत-रत्न से सम्मानित सी.वी. रमन भी एक महान् संगीतकार थे। उन्होंने संगीत-ग्रंथों की रचना कर भारतीय शास्त्रीय संगीत की अप्रतिम सेवा भी की और वायलिन वादक तो वे थे ही। गति के तीन नियम बताने वाले वैज्ञानिक न्यूटन और सापेक्षता का सिद्धांत बताने वाले जर्मन भौतिकविद् अल्बर्ट आइंस्टाइन भी बहुत कुशल वायलिन वादक थे। इन विभूतियों के इतने बड़े वैज्ञानिक बनने के पीछे संगीत का कितना बड़ा योगदान था, इसको जानने की हमने कभी आवश्यकता ही नहीं समझी।

अपने देश में भी विगत सदी के महान् संगीतज्ञ ग्वारिया बाबा सोना (गोल्ड) बनाना जानते थे, पर उन्होंने किसी को भी यह विद्या कभी नहीं दी। केवल दीन-दुखी को सोना देकर उनकी मदद कर दिया करते थे। वह साक्षात् भगवान् बाल कृष्ण उनके साथ गेंद खेलते थे। दत्तात्रेय वीणा के आविष्कारक स्वामी डी.आर. पार्वतीकर (वीणा महाराज) भी विगत सदी के महान् संगीतज्ञ तो थे ही, गणितज्ञ इतने बड़े थे कि उन्होंने 92416 रागों की उत्पत्ति की विधि ही नहीं समझाई बल्कि उनके नाम से ही परिचय तक को जान लेने की युक्ति भी बतला दी। यही नहीं, उन्होंने श्रीमद्भागवत और श्रीमद्भगवद्गीता का काव्यानुवाद तक किया। ऐसे संगीत-योगी आज भी बराबर पैदा तो हो रहे हैं किंतु बहुत कम। और जो हो रहे हैं, उनको जानने और पहचानने की न हमको आवश्यकता है और न इच्छा-शक्ति।

मैं कहना चाहता हूँ कि जिस संगीत में इतनी ताकत है कि हम उसे सुनते समय भले ही कुछ देर के लिए ही सही, अपनी सुध-बुध तक बिसरा बैठते हैं; क्या वह संगीत रोगियों के रोगों के निदान के लिए उपादेय नहीं हो सकता? क्या वह रोगी की शल्य-क्रिया के समय उसकी पीड़ा को कमतर करने का कार्य नहीं कर सकता? क्या वह भूत-प्रेत आदि को भगाने में सहायक नहीं हो सकता? क्या वह कृषक की खेती को कीटों द्वारा नष्ट होने से बचाने में मदद नहीं कर सकता? क्या गाय-भैंस आदि दुधारू पशुओं से दुग्ध-दोहन के समय आसानी से और अधिक मात्रा में दूध प्राप्त करने के लिए मदद नहीं कर सकता? सरगुंजा स्टेट (छत्तीसगढ़) के सन् 1917 से 1947 तक महाराजा रहे श्री रामानुजशरण सिंह ने लगभग डेढ़ हज़ार शेर, चीतों और बाघों का शिकार कर गिनीज़ बुक ऑफ़ वर्ल्ड रिकॉर्ड्स में ऐसे ही नाम दर्ज़ नहीं करा लिया। सच पूछो तो उसमें भी संगीत का परोक्ष रूप से बहुत बड़ा हाथ था। पर कौन सोचे? छत्तीसगढ़ के इस आदिवासी इलाके के अनपढ़ वाद्य-वादक अपने ही द्वारा निर्मित ऐसे-ऐसे वाद्य-यंत्र बनाकर बजाते थे कि बड़े-से-बड़े हिंसक पशु उनकी ध्वनि सुनकर मुग्ध हो खिचे चले आते थे। हमने अकबरी दरबार के सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ संगीत-सम्राट तानसेन और बैजू बावरा आदि के किस्से तो सुन ही रखे हैं कि दीपक राग गाकर दीप प्रज्वलित कर देना और मेघ मल्हार राग गाकर पानी बरसवा देना अथवा गायन की शक्ति से ही हरिण को बुला लेना और उसके गले में माला डाल

देना और फिर चले जाने के बाद पुन: गाकर बुला लेना और गले से माला को उतार लेना आदि किस्सों की भरमार है। ग्वालियर के गूंगे-बहरे सावंत और बूला बंधुओं का राजदंड के भय से दरबार में गा देना, तानसेन के ही वंशज हस्सू-हद्दू खां द्वारा दुबारा न गाई जा सकने वाली कड़क बिजली की तान को अपनी प्रशंसा सुन अनभिज्ञतावश गाकर तड़प-तड़पकर अपनी जान गंवा देना और हद्दू खां की तान सुनकर घुड़साल में सांकलों से बंधे घोड़ों का उनको तोड़कर घुड़साल से भाग जाना जैसे सच्चे किस्से संगीत में भरे पड़े हैं। मीरा की मल्हार राग गाकर स्वामी श्री हरिदास जी के शिष्य बैजू बावरा द्वारा अपने ही शिष्य गोपाल लाल की मृत्यु और दाह संस्कार के भी काफ़ी दिनों बाद उसकी पत्नी प्रभा की ज़िद पर हिंदू विधि के अनुसार क्रिया करने के लिए झेलम के तट पर उसकी ही पुत्री मीरा द्वारा राग मीरा की मल्हार का गायन कराकर पुन: हड्डियों का तैरकर तट पर आ जाना जैसे अविश्वसनीय चमत्कारों से चूंकि हम अनभिज्ञ होते हैं, यही कारण है कि संगीत के प्रति आज के अधिसंख्य भारतीयों का नज़रिया ही वह नहीं बन सका है जो होना चाहिए।

अब मैं मूल बात पर आता हूँ कि जब यह सब संभव हो सकता है तो फिर रोग-निवारण में संगीत की महत्ता पर हमारा इतना कम ध्यान क्यों है? हमारे ही देश में एक ऐसा भी समय था जब गर्भवती नारी को, उसकी अच्छी संतान हो और वह सहज ही बच्चे को जन्म दे सके, इस उद्देश्य से संगीत सुनाया जाता था। परिणाम सामने होता था। आज गर्भवती नारी बॉलीवुड के अश्लील गीतों और उनके कानफोड़ तेज़ संगीत को उसके दुष्परिणामों से बेखबर हो सुन रही है। सोचिए, उसके पेट में पल रहे बच्चे पर उसका कितना भयावह प्रभाव होगा? जन्म से ही उसके स्नायुओं पर पड़ा दुष्प्रभाव जीवनभर उसे भिन्न-भिन्न रोगों से ग्रसित रख सकता है। उसकी श्रवण-शक्ति कमज़ोर हो सकती है। उसका रक्त संचरण (ब्लड प्रेशर) प्रभावित रह सकता है। वह अविकसित मस्तिष्क की पीड़ा झेलने को भी बाध्य हो सकता है। जन्म से ही गूंगा और बहरा भी हो सकता है। क्या कभी इस विषय पर हम गंभीरता से सोचते हैं?

बाल्यावस्था से ही नाद-साधना में रत रहने और धर्म तथा अध्यात्म की ओर भारी रुझान होने के कारण युवावस्था आते-आते मेरा भी संगीत-चिकित्सा की ओर झुकाव होने लगा। अपने छात्र-छात्राओं की कोई शारीरिक अथवा मानसिक समस्या हो अथवा उनके परिवारीजन की, वह बेझिझक मेरे पास आकर अपनी समस्या रखने लगे और मैं शनै: शनै: इस दिशा में उन्नति की ओर अग्रसर होता रहा। स्नातक स्तर तक आते ही मैंने विज्ञान और जीव-विज्ञान जैसे विषय अपने प्राचार्य के सुझाव पर छोड़ दिए और कला संकाय का छात्र बन गया। संगीत-चिकित्सा से संबंधित ज्ञान को पूर्णता प्रदान करने के लिए मैंने संगीत और समाज-शास्त्र, संगीत और मनोविज्ञान एवं संगीत और दर्शन-शास्त्र आदि विषयों की पुस्तकें भी पढ़ीं। कभी न पढ़े विषय समाज-शास्त्र में तो एम.ए. भी कर लिया। यही नहीं, मैंने अंक-ज्योतिष, हस्तरेखा विज्ञान, स्वर-विज्ञान आदि की भी अनेकानेक पुस्तकों का अध्ययन किया। इस सबका लाभ यह हुआ कि मुझे रोगी के रोग की तह तक पहुंचने में काफ़ी सहायता मिली। अस्तु।

संगीत-चिकित्सा में इतनाभर जानने से कोई विशेष लाभ नहीं होता कि कौन-सा राग किस रोग में लाभदायक होता है बल्कि उसके साथ अन्य भी बहुत सारी बातें जाननी आवश्यक होती हैं। मैं यहां इसीलिए उन सब बातों का उल्लेख नहीं कर रहा जो आमतौर पर आसानी से पढ़ने को भी मिल जाएंगी। मैं सिर्फ़ और सिर्फ़ अपने अनुभवों और अनुभवों के आधार पर बनी मान्यताओं को ही साझा कर रहा हूँ -

- संगीत-चिकित्सक यदि धार्मिक और आध्यात्मिक होगा तो रोगी को अधिक लाभदायी सिद्ध होगा।
- संगीत-चिकित्सा के लिए शुल्क लेने वाले की चिकित्सा संभवतया रोगी के लिए लाभकारी नहीं होगी।
- चिकित्सक को संगीत के अतिरिक्त विविध विषयों का भी अच्छा ज्ञान होना चाहिए।
- उसकी गायन और चतुर्विध वाद्य वादन में भी निपुणता होनी चाहिए।
- चिकित्सा देने के लिए सहृदयता होनी अति आवश्यक है। इसके अभाव में वह सही चिकित्सा नहीं कर सकता।
- चिकित्सक में, यदि रोगी मानसिक बीमारी से ग्रसित है, तो रोगी द्वारा की गई अभद्रता को भी सहन करने की क्षमता होनी चाहिए।
- एक जैसे रोग से ग्रसित अलग-अलग रोगियों पर एक ही प्रकार से की गई चिकित्सा कारगर होगी ही, ऐसी भ्रांत धारणा रखकर चिकित्सक सही चिकित्सा नहीं कर सकता।
- किसी असाध्य रोगी को संगीत सिखाया ही नहीं जा सकता, ऐसी भ्रांत धारणा भी चिकित्सक की नहीं होनी चाहिए।
- जन्मजात मूक (गूंगे) और बधिर (बहरे) व्यक्ति को गायन भी सिखाया जा सकता है।
- दोनों हाथों और दोनों पैरों से रहित रोगी को गायन तो क्या, वादन भी सिखाया जा सकता है। बस, सोच का दायरा बड़ा होना चाहिए।
- पथरी (स्टोन) को भी मंजीरे जैसे वाद्य की टंकोर से तोड़ा जा सकता है। इस ओर अभी और अध्ययन की आवश्यकता है।
- शंख और शंखोदक चिकित्सा से जन्मजात गूंगे को भी न केवल बोलना बल्कि गायन भी सिखाया जा सकता है। यही नहीं, चेहरे के किसी ओर हुई लकवे जैसी बीमारी से भी उबारा जा सकता है।
- शरीर में किसी अन्य आत्मा के आवेशित हो जाने से पीड़ित रोगी को भी उससे मुक्त किया जा सकता है।

लेखक- संगीतज्ञ/कवि/लेखक/संपादक हैं।
सम्पर्क: 94 'संगीत सदन' महाविद्या कॉलोनी, द्वितीय चरण, मथुरा- 281003 (उ.प्र.) मोबा. 9897247880/8851402815

■

आलेख

भारतीय संगीत और चिकित्सा

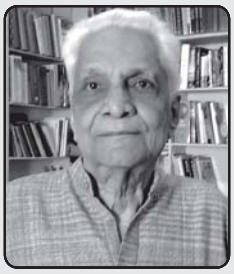

डॉ.लक्ष्मी नारायण गर्ग

भारतीय संगीत की यह विशेषता रही है कि उसमें स्वर और उनसे सम्बन्धित श्रुतियों को भी रस एवं भाव से जोड़ा गया है। उसी के अनुसार उनका नामकरण किया गया है। इन श्रुतियों का जाने-अनजाने में सफल प्रयोग हमारे फिल्मी गीतों में हुआ है। इसीलिए उनके द्वारा कथानक प्रभावशाली हो उठता है जबकि भारत की दरबारी परम्परा में राग के रस और भाव को तिलांजलि देकर उसे चमत्कारप्रधान बनाने का प्रयास अधिक किया गया है। ऐसे दरबारी संगीतकारों ने 'आह' की जगह 'वाह' को अधिक महत्त्व दिया है। भाव को गौण करके उन्होंने पूरा ध्यान गणित पर केन्द्रित कर दिया है। यही कारण है कि जनता बार-बार शास्त्रीय संगीत को सुनना अधिक पसन्द नहीं करती। लोकधुन की सरल और सीधी पंक्ति उन्हें पूरी रात विभोर करने में सक्षम होती है जबकि शास्त्रीय संगीत के कार्यक्रम में वे चाय, आइसक्रीम, मूँगफली या पॉपकोर्न खाना अधिक पसन्द करते हैं। कुछ उठकर चले जाते हैं और कुछ सभ्यतावश अनमने से होकर अन्त तक बैठे रहते हैं। संगीत-चिकित्सा की दृष्टि से हमें अपने प्राचीन संगीत पर ध्यान केन्द्रित करना होगा जो जड़ और चेतन दोनों को प्रभावित करने में समर्थ था।

घरानों की होड़ ने भी भारतीय संगीत के स्वरूप को स्थिर नहीं होने दिया। हर प्रवर्तक ने उसमें कुछ चमत्कारिक चीजें जोड़ने की कोशिश की है। वह अतिमन्द्र सप्तक, अतितार सप्तक, तरह-तरह के गमक, ताल और लय की क्लिष्टता, संगतकारों के साथ लड़न्त-भिड़न्त, सम पर पटक खाकर गिरने की कला, शब्द के अर्थ की अवहेलना, रंजकता का ध्यान न रखना जैसी बातों में ही अटका रह गया। यही कारण है कि उनका प्रदर्शन 'अपनी-अपनी ढपली और अपना-अपना राग' तक सिमट कर रह गया है।

एक राग जितने कलाकारों द्वारा प्रस्तुत किया जाएगा; वह अलग-अलग स्वरूप में प्रकट होगा। इसीलिए उस राग के प्रभाव को संगीत-चिकित्सा की दृष्टि से एक ही प्रभाव उत्पन्न करने वाला नहीं माना जा सकता, जबकि पाश्चात्य जगत में किसी संगीत रचयिता द्वारा निर्मित रचना को कभी भी कोई संगीतकार प्रस्तुत करें तो उसमें किंचित्मात्र परिवर्तन दिखाई नहीं देगा। इस दृष्टि से संगीत-चिकित्सा के क्षेत्र में पाश्चात्य संगीत अधिक प्रभावशाली सिद्ध हुआ है और भारत में अभी उसका श्रीगणेश भी नहीं हुआ। इस पिछड़ेपन को दूर करने के लिए हमें अपने बँधे-बँधाये संगीत को आधार बनाना होगा या फिर वाद्य यन्त्रों के माध्यम से स्वर और श्रुतियों का सीधा-सीधा मार्मिक प्रयोग करना पड़ेगा, जिसमें न किसी कलाकार के चमत्कारों का दर्शन होगा और न उसमें घराने की कोई किल्लत होगी। संगीत-चिकित्सा में काल्पनिक संगीत के लिए कोई स्थान नहीं है क्योंकि उसके भाव और रस क्षण-क्षण में बदलते रहते हैं। इसी दृष्टि से रवीन्द्रनाथ टैगोर ने 'रवीन्द्र संगीत' में कोई परिवर्तन स्वीकार नहीं किया था।

भारतीय संगीत की श्रुतिस्वर-व्यवस्था जितनी प्रभावशाली है उतनी पाश्चात्य संगीत की नहीं। भारतीय संगीत में स्वरों और श्रुतियों की स्थिति सूक्ष्म और वैज्ञानिक है जबकि पाश्चात्य संगीतज्ञों ने मोटे तौर पर षड्ज-पंचम भाव (साइकिल ऑफ फिफ्थ) से समान दूरी पर विभाजन करके अपने की-बोर्ड तथा स्थिर सारिका वाले वाद्ययन्त्रों का निर्माण कर लिया है। इस व्यवस्था ने संगीत द्वारा उत्पन्न रस को भी भंग किया है। श्रुति और स्वर में भाव को प्रकट करने की क्षमता अत्यन्त सीमित है। इसलिए उनसे केवल उत्सुकता और आश्चर्यजनक भाव की ही सृष्टि हो सकती है। जब एक से अधिक स्वरों का प्रयोग किया जायेगा तो उनसे भाव उद्बोधन की प्रक्रिया भी बढ़ती जाएगी, लेकिन वह भी सीमित होगी। जब स्वरों के साथ कुछ निरर्थक शब्द जोड़ दिए जायेंगे तो उनसे भाव-प्रकाशन की क्रिया कुछ और बढ़ जायेगी, लेकिन अगर उनके साथ सार्थक शब्द जोड़ दिए जाएँ तो भाव-प्रकाशन भली प्रकार होने लगेगा, लेकिन यह भी पूर्णता की स्थिति नहीं है; वह स्थिति तभी आयेगी जब उसे ताल और लय का सहयोग मिल जाए। स्वर बात नहीं कर सकते; शब्द रंजक नहीं हो सकते और ताल दोनों में ही असमर्थ रहती है, लेकिन अपनी नाद-शक्ति के प्रहार से वह स्वर और शब्द दोनों को सशक्त करके उनमें प्राण फूंक देती है। इसीलिए स्वर, शब्द और ताल मिलकर गीत को सार्थकता प्रदान करते हैं। नाट्य भी इन्हीं के आश्रित रहता है। यदि सिनेमा में नेपथ्य-संगीत (Background Music) न हो तो कितनी भी सशक्त कथा या अभिनय हो; फिर भी उससे उत्पन्न होने वाला रस प्रभावशाली नहीं होगा। इसीलिए भारत के संगीत शब्द के अन्तर्गत गायन, वादन और नर्तन इन तीनों कलाओं का अन्तर्भाव है। अलग अस्तित्व होते हुए भी वे परस्पर एक-दूसरे के पूरक हैं। संगीत-चिकित्सा में इन तीनों ही कलाओं पर विचार किया जाना चाहिए। तीनों ही अपने-अपने दायरे में रस की

अभिव्यंजना करते हैं और जब मिलते हैं तो श्रोता और दर्शक को अलौकिक रस प्रदान करने में सक्षम होते हैं। इसीलिए वह उन्हें बार-बार सुनना-देखना चाहता है। चिकित्सकीय प्रयोग में इनमें से किसी एक, दो या तीनों को प्रयोग में लाया जा सकता है। यहाँ स्वरों का वात, पित्त और कफ से सम्बन्ध बताया जा रहा है ताकि शरीर में उसकी विषमता जानकर रोग के इलाज़ में उसका अनुकूल प्रयोग किया जा सके। संगीत-चिकित्सा के लिए स्वरों का आयुर्वेदिक सम्बन्ध जानना आवश्यक है और उसी के आधार पर रोगों का इलाज़ किया जा सकता है। यहाँ ऐसे सातों स्वरों का विवरण प्रस्तुत है-

षड्ज (सा)

इसका स्वभाव ठण्डा है। यह स्वर पित्तप्रधान रोगों को दूर करता है।

रिषभ (रे)

इसकी प्रकृति शीतल तथा शुष्क है। यह स्वर कफ एवं पित्तप्रधान रोगों को दूर करता है।

गान्धार (ग)

इसका स्वभाव ठण्डा है। यह स्वर वात एवं पित्तप्रधान रोगों को दूर करता है।

मध्यम (म)

इसका स्वभाव शुष्क और प्रकृति चंचल है। इस स्वर से वात और कफप्रधान रोग दूर होते हैं।

पंचम (प)

इसकी प्रकृति गर्म एवं उत्साहपूर्ण है। यह कफप्रधान रोगों को दूर करता है।

धैवत (ध)

यह प्रसन्नता और उदासीन प्रकृति का द्योतक है। यह स्वर पित्तप्रधान रोगों का शमन करता है।

निषाद (नि)

यह सप्तक का अन्तिम स्वर है। इसका स्वभाव ठण्डा-शुष्क है तथा इसकी प्रकृति उत्साहवर्धक व आह्लादकारी है। इसके द्वारा वायुप्रधान रोगों को दूर किया जा सकता है।

उपर्युक्त स्वरों को कण्ठ-ध्वनि या किसी वाद्य द्वारा उसके निश्चित श्रुतिस्थान पर शुद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए। सप्तक के ये सभी स्वर शुद्ध हैं। इनके पाँच विकृत स्वरूप अर्थात् कोमल रिषभ, कोमल गान्धार, तीव्र मध्यम, कोमल धैवत और कोमल निषाद का इनके प्रभाव से कोई सम्बन्ध नहीं है। चिकित्सा की दृष्टि से उपर्युक्त शुद्ध स्वरों को प्रयुक्त करते समय उनकी प्रसारित ध्वनि की सीमा, तीव्रता (Volume) एवं घनत्व का ध्यान रखना चाहिए। आधार स्वर षड्ज का गुंजन किसी अन्य वाद्य द्वारा बराबर बना रहना चाहिए; तभी षड्ज से से तथाकथित स्वर अपने अस्तित्व का बोध कराकर अनुकूल प्रभाव उत्पन्न कर सकेगा। जिन चिकित्सकों को संगीत का अच्छा ज्ञान हो वे स्वर-चिकित्सा के साथ 22 श्रुतियों में से स्वर से सम्बन्धित अनुकूल श्रुतियों का कणस्वरूप प्रयोग कर सकते हैं। वर्तमान रागों का प्रयोग तभी किया जा सकता है जबकि उन्हें केवल आलाप के रूप में प्रस्तुत किया जाए और उनके प्रभाव का ठोस अध्ययन कर लिया जाए। यदि रोगी को केवल आनन्दित करना हो तो उसकी रुचि के अनुसार उसके इच्छित कलाकार का शास्त्रीय, उपशास्त्रीय या फिल्म संगीत सुनवाया जा सकता है; मानसिक चिकित्सा की दृष्टि से यह अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा।

स्वर से सम्बन्धित शास्त्रों में बताया गया है- **'प्राप्ते स्वरबले शुद्धे सर्वमेव शुभं फलम्';** अर्थात् शुद्ध स्वर-बल के प्राप्त होने पर ही शुभ फल प्राप्त होता है।

लेखक - अधिष्ठाता: 'संगीत' मासिक, हाथरस

जब हम अच्छा खाने, अच्छा पहनने और अच्छा दिखने में खर्च करते हैं
तो अच्छा पढ़ने-लिखने और सोचने-समझने की खुराक में खर्च क्यों न करें!

कला समय

प्रबंध संपादक

सम्पर्क- जे-191, मंगल भवन, महावीर नगर, ई-6, अरेरा कॉलोनी, भोपाल- 462016 फोन : 0755-2562294, मो.-94256 78058

ई-मेल : kalasamaymagazine@gmail.com / bhanwarlalshrivas@gmail.com

आलेख

चिकित्सा की अन्य प्रणालियाँ

- डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग

आयुर्वेद एक सम्पूर्ण चिकित्सा प्रणाली है, लेकिन आधुनिक युग में कुछ नई प्रणालियाँ भी विकसित हुई हैं। अत: एक संगीत-चिकित्सक को संक्षेप में उनकी जानकारी होना भी आवश्यक है। कुछ मुख्य प्रणालियाँ इस प्रकार हैं-

आयुर्वेद चिकित्सा

आयुर्वेद-पद्धति त्रिकालदर्शी ऋषियों की एक अनुपम देन है जो विश्व की सबसे प्राचीन चिकित्सा पद्धति है। अथर्ववेद में इसका विस्तृत उल्लेख किया गया है। इसमें मनुष्य की नाड़ी, रंग-रूप, आकृति, उम्र, व्यवहार, उठने-बैठने और चलने का तरीका, वातावरण, मानसिक स्थिति और देश-काल के आधार पर औषध एवं शल्य-क्रिया का निर्णय करके चिकित्सा की जाती है। मनुष्य के अतिरिक्त पशु-पक्षियों एवं पेड़-पौधों के लाभार्थ भी इसमें उल्लेख मिलता है।

योग चिकित्सा

इसके अन्तर्गत मुख्य रूप से रोगी के बलाबल के अनुसार विभिन्न प्रकार के आसन, क्रियाएँ, मुद्राएँ, बन्ध और प्राणायाम बताए जाते हैं। योग, महर्षियों द्वारा प्रदत्त भारत की प्राचीन विद्या है। जंगल में रहने वाला एकाकी योगी योग की गोपनीय चिकित्सा पद्धति को अपनाकर स्वयं को स्वस्थ रखता है जो जन साधारण में प्रचलित नहीं होती।

होमियोपैथी

इस पद्धति के आविष्कारक व संस्थापक जर्मनी के एक ऐलोपैथिक चिकित्सक डॉ. सेम्युअल हैनीमैन थे। जिनका जन्म सन् 1755 में हुआ था। जब एम.डी. करके उन्होंने चिकित्सा शुरू कर दी तो ऐलोपैथी पर उनकी निष्ठा नहीं जमी। वे देखते थे कि इससे रोग दब जाता है, रोग दूर नहीं होता। उनके गम्भीर चिन्तन ने **'समः समं शमयति'** सिद्धान्त का आविष्कार किया जिसे अँग्रेजी में Similia Similibus Curantur कहते हैं; अर्थात् स्वस्थ शरीर में जो औषधि रोग के जिन लक्षणों को उत्पन्न करती है; वही औषधि उस रोग और उसके लक्षणों को दूर कर देगी। इस आधार पर हैनीमैन ने 15 वर्ष तक अपने शरीर पर 60 भिन्न-भिन्न औषधियों की परीक्षा की और 'शक्तिकरण' (पोटेन्साइज़ेशन) पद्धति के द्वारा भिन्न-भिन्न रोगों के लिए औषधियों का निर्माण किया।

इलैक्ट्रो-होमियोपैथी

इलैक्ट्रो-होमियोपैथी (मैरी कैंसर क्योर) होमियोपैथी जैसी चिकित्सा का ही एक दूसरा रूप है; जिसका आविष्कार 19वीं शताब्दी में काउंट सीज़र मैटी (1809-1896) द्वारा किया गया। इस पद्धति में ऐसे पेड़-पौधों के सार तत्त्व को चुनकर औषधियों का निर्माण किया गया है।

ऐलोपैथी

यह चिकित्सा-पद्धति आज सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त है। इसमें शरीर के रोग को जानकर उसकी विरोधी अवस्था को शरीर में उत्पन्न करकें रोग को दूर किया जाता है।

एक्यूपंक्चर (सूचीवेध चिकित्सा)

एक्यूपंक्चर चिकित्सा को चीन की देन माना जाता है, जिसका इतिहास तीन हज़ार वर्ष पुराना है। इसके अन्तर्गत शरीर की दो विपरीत अवस्थाओं (येंग तथा यिग) पर स्वास्थ्य निर्भर करता है; जिन्हें ठण्डी और गर्म अवस्था कहते हैं।

एक्यूप्रेशर (दाब चिकित्सा)

इस पद्धति को भी चीन की पारम्परिक चिकित्सा पद्धति माना जाता है इसमें शरीर के उन अवयवों पर दबाव दिया जाता है, जहाँ से नाड़ी-संस्थान का प्रारम्भ या अन्त हो। ऐसे केन्द्र विशेष रूप से हाथ के पंजे, पैर के तलवे और रीढ़ की हड्डी पर होते हैं।

यूनानी चिकित्सा

यूनानी मान्यता के अनुसार सभी रोगों का जन्म समुद्र से हुआ है और मनुष्य का शरीर सात भागों में बँटा हुआ है, जिन्हें 'उमूर-ए-तबय्याह' कहते हैं। इन हिस्सों में परिवर्तन होने से ही रोग उत्पन्न होता है। इसलिए यूनानी पद्धति में उन्हीं के संतुलन और शुद्धिकरण से चिकित्सा की जाती है।

मैग्नेट चिकित्सा (चुम्बक चिकित्सा)

मैग्नेट-चिकित्सा को काफी पुराना माना जाता है लेकिन 21वीं शताब्दी के प्रारम्भ में यह प्रणाली अधिक लोकप्रिय हुई, जिसका प्रचार सम्पूर्ण विश्व में तेज़ी से फैल गया।

रत्न और काष्ठ चिकित्सा

रत्न और काष्ठ (लकड़ी) का स्रोत पृथ्वी है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जब शरीर पर रत्न धारण किए जाते हैं तो प्रकाश के माध्यम से उनकी ऊर्जा शरीर में पहुँचकर लाभ-हानि करती है। इसी प्रकार विभिन्न वृक्षों के काष्ठ अर्थात् उसकी लकड़ी के टुकड़े या छाल को रात्रि में एक कटोरी जल के अन्दर डालकर रख दिया जाता है तथा

प्रात:काल खाली पेट उस जल को कपड़े से छानकर पी लिया जाता है।

क्रोमोपैथी (सप्तरश्मि चिकित्सा)

यह चिकित्सा सूर्य की सात रश्मियों से की जाती है। सूर्य पृथ्वी से 15 लाख गुना बड़ा तथा नौ करोड़ मील दूर है। वैज्ञानिक अनुमान के अनुसार हमारे सौरमंडल का यह प्रचंड ग्रह अभी कम से कम तीस करोड़ वर्षों तक पृथ्वी के चराचर जगत को प्रकाश, उष्णता और जीवन प्रदान करता रहेगा। सूर्य को प्रत्यक्ष भगवान की उपमा दी गई है। वैदिक साहित्य और मन्त्र साहित्य में इसकी महिमा, प्रभाव और इसकी रश्मियों से लाभान्वित होने की प्रक्रिया विस्तार से दी गई है। सूर्य से सूक्ष्मतर अल्ट्रावायलेट (ltra Violet) तथा इन्फ्रारैड (Infrared) किरणें निकलती हैं।

मन्त्र चिकित्सा

भारत में यह प्रणाली आदिकाल से चली आ रही है। यह ध्वनि-चिकित्सा के अन्तर्गत आती है; जिसमें शब्द, स्वर और छन्द (ताल-लय) का प्रयोग किया जाता है। इस पद्धति से रोग-निवृत्ति के साथ अभिमन्त्रित जल के छींटों द्वारा मृत व्यक्ति को पुन: जीवित किया जा सकता है।

आध्यात्मिक चिकित्सा

यह सूक्ष्म शक्तियों से युक्त चिकित्सा पद्धति है जो पूर्वी देशों में हज़ारों साल से प्रचलित है। अब पाश्चात्य देश भी इसे मानने लगे हैं। इसे चेतन शक्ति या प्राण-शक्ति के रूप में भी जाना जाता है, क्योंकि इस पद्धति के अन्तर्गत दूरस्थ देश में बैठकर भी चिकित्सा की जा सकती है।

मानसिक चिकित्सा

मानसिक चिकित्सा में रोगी के अचेतन मन की ग्रन्थियों, भावनाओं तथा आघातों को लम्बी बातचीत के द्वारा जानकर उसे सत्परामर्श देकर अथवा संघर्षमय जीवन का सामना करने की हिम्मत देकर रोग को दूर किया जाता है।

हिप्नो चिकित्सा (सम्मोहन चिकित्सा)

इसमें चिकित्सक द्वारा अपनी ऊर्जा शक्ति के माध्यम से रोगी को अपने आदेशानुसार भिन्न-भिन्न स्थितियों का अनुभव कराया जाता है। इसे रोगी चैतन्य होते हुए भी अर्द्ध चेतनावस्था में ग्रहण करता है; जिसे 'हिप्नोटिक स्टेट' या 'अर्द्धनिद्रा' कह सकते हैं।

अरोमा चिकित्सा (गन्ध चिकित्सा)

इसमें विभिन्न फल-फूल और जड़ी-बूटियों की गन्ध के माध्यम से रोग दूर किया जाता है। गन्धयुक्त वस्तु को सूँघा जाता है, शरीर पर धारण किया जाता है और उनसे सम्बन्धित तेल की मालिश होती है। इसमें शुद्ध वस्तु की गन्ध ही कारगर सिद्ध होती है।

रेकी (ऊर्जा चिकित्सा)

इसमें चिकित्सक रोगी के ऊपर हाथ रखकर ऊर्जा प्रवाहित करता है तथा दूर से भी अपने हाथों का संचालन करके रोगी तक ऊर्जा पहुँचाकर उसका रोग दूर करने की चेष्टा करता है। इससे रोगी का आभामण्डल प्रभावित होकर उसे रोगमुक्त करता है।

प्राणिक चिकित्सा

इसमें चिकित्सक अपनी हथेलियों में स्थित ऊर्जा द्वारा रोगी के रोगग्रस्त स्थानों के अवरुद्ध केन्द्रों को गति प्रदान करता है; साथ ही अपने अन्दर ऊर्जा के प्रभाव को ग्रहण करता रहता है।

साइकिक सर्जरी

इसका आविष्कार फिलीपीन्स में टोनी अगपौआ नामक व्यक्ति ने मनीला में किया था, लेकिन सन् 1967 में अमेरिका में उसे धोखेबाज़ सिद्ध कर दिया गया; फिर भी मनीला में इस पद्धति का विकास होता रहा।

प्राकृतिक चिकित्सा (नेचुरोपैथी)

इसमें मिट्टी, पानी, एनीमा, ठण्डा व गर्म सेक, व्यायाम, धूप-सेवन, मालिश एवं सन्तुलित आहार द्वारा रोगी को ठीक किया जाता है।

रंग-चिकित्सा

इसमें विभिन्न रंगों की बोतलों (शीशियों) में शुद्ध जल भरकर उन्हें धूप में रख दिया जाता है और रोग तथा रोगी की आवश्यकतानुसार औषधि की भाँति केवल जल पिलाकर रोग को समाप्त किया जाता है।

डाउसिंग

इस पद्धति में दूर से अज्ञात वस्तुओं को जानकर चिकित्सा की जाती है; जिसे 'टैलीपैथी' भी कह सकते हैं। इसे अन्तर्ज्ञान या पूर्वज्ञान भी कहा जाता है।

टोटका चिकित्सा

इसके अन्तर्गत पशु-पक्षियों को उनका प्रिय भोजन देकर तृप्त किया जाता है, ताकि वे रोगी से सम्बद्ध बुरे परमाणुओं को दूर करने में सहायक हों और उसके प्रति प्रीति का भाव बनाए रखें।

यज्ञ चिकित्सा

यह भारत की सबसे प्राचीन प्रणाली है; जिसमें भौतिक कार्यों की सिद्धि, रोगोन्मूलन, आसुरी शक्तियों का विनाश, वातावरण की शुद्धि और इच्छित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए यज्ञ (हवन) किया जाता है।

झाड़-फूंक चिकित्सा

इसके अन्तर्गत मोरपंख, विभिन्न वृक्षों के पत्तों, डंठलों और लोकप्रचलित उपादानों द्वारा उनके स्पर्श से चिकित्सा की जाती है। मुँह से फूंक मारना, भभूति देना इत्यादि विविध प्रकार की पद्धतियाँ प्रचलित हैं।

अलेक्ज़ैन्डर पद्धति

इस पद्धति में कोई औषधि नहीं लेनी पड़ती; बल्कि बुद्धिमान व्यक्ति अपने रहन-सहन, व्यायाम, खान-पान और गलत आदतों को छोड़कर स्वयं चिकित्सा कर सकता है। चिकित्सक भी रोगी की जीवन-पद्धति जानकर उसे यथोचित निर्देश और उपदेश देकर रोग-मुक्त करते हैं।

मूत्र चिकित्सा

इस पद्धति में मूत्र का पान और उसकी मालिश करके शरीर को शुद्ध बनाया जाता है जिसका उल्लेख प्राचीन आयुर्वेदिक ग्रन्थों में भी मिलता है। निष्कासित होने वाले मूत्र में कुछ ऐसे औषधीय तत्त्व पाए जाते हैं जो रोग समाप्त करने में सहायक सिद्ध होते हैं। भारत में मूत्र-चिकित्सा के कुछ अस्पताल आज भी कार्यरत हैं।

प्रकाश चिकित्सा

भारत के अतिरिक्त रूस, अमेरिका इत्यादि देशों में प्रकाश चिकित्सा को अपनाया जा रहा है।

सुजोक थेरेपी

सुजोक एक कोरियन शब्द है 'सु' का अर्थ हाथ एवं 'जोक' का अर्थ पैर इनकी बनावट में काफी समानता है। अत: उनमें स्थित शरीर के सदृश्य केन्द्रों पर दबाव देकर रोग का निदान किया जाता है।

पंचकर्म चिकित्सा

यह चिकित्सा आयुर्वेद का एक विशिष्ट अंग है, जो अब अधिक प्रचार में आने लगी है। वमन, रेचन, नस्य, निरुह तथा अनुवासन इन पाँच कर्मों को पंचकर्म कहते हैं जो शरीर-शोधन की उत्तमोत्तम प्रक्रिया है।

फूड थैरेपी (आहार चिकित्सा)

यह प्रणाली प्राकृतिक चिकित्सा के अन्तर्गत मानी जा सकती है, परन्तु इसमें कुछ भिन्नता है, क्योंकि इसमें केवल उसी आहार पर बल दिया जाता है जिससे सम्बन्धित तत्त्व की कमी होने पर शरीर रोगग्रस्त होता है। सुबह से रात्रि तक व्यक्ति को चिकित्सक द्वारा सुझाए गए भोजन को यथोचित परिमाण में निश्चित समय पर सेवन करना पड़ता है। रोगी को अन्य कोई औषधि नहीं दी जाती। सामयिक और उपलब्ध फ्ल, सब्जी, मसाले, अन्न तथा दुग्ध के प्रयोग से ही चिकित्सा की जाती है।

चैलेशन थेरेपी

इस पद्धति में इंजैक्शन द्वारा शरीर में ऐसे तत्त्व पहुँचा दिए जाते हैं जो रक्त-संचार को सुदृढ़ बनाते हैं और मनुष्य को हार्ट अटैक जैसे रोगों तक से बचाते हैं।

बायोकैमिक चिकित्सा

इस पद्धति का आविष्कार ऑल्डनवर्ग (जर्मनी) के डॉ. शुस्लर ने किया था। उन्होंने देखा कि शरीर में खनिज लवण की कमी से रोग उत्पन्न होते हैं; अत: उस कमी की पूर्ति कर दी जाए तो रोगी स्वस्थ हो जाएगा।

स्वप्न चिकित्सा

'ड्रीम एण्ड देयर इंटरप्रेटेशन मेड ईज़ी' के लेखक डॉ. फ्रांसिस परमैनेजीज़ के अनुसार स्वप्न केवल भावनात्मक और मानसिक विकृति ही नहीं होते, बल्कि उनमें मनुष्य के रोगों को हरने की क्षमता भी होती है। वे आत्मतत्व के ऐसे प्रतिनिधि होते हैं जिनकी संकेत-प्रक्रिया को समझ लिया जाए तो रोग ही नहीं, बल्कि भौतिक बाधाओं से मुक्त होने में भी सहायता मिलती है।

ई-एम डी आर

इस चिकित्सा पद्धति का पूरा नाम है 'आई मूवमैन्ट डीसेन्सी एण्ड रिप्रोसेसिंग'। जब हमें कोई आघात लगता है; जैसे किसी प्रियजन की मृत्यु, बलात्कार, खून-खराबा या आगजनी जैसी दुर्घटनाएँ तो उससे मस्तिष्क को एक बड़ा सदमा पहुँचता है जो लम्बे समय तक स्थायी बना रहता है। निस्सारित संस्कारों को शिथिल कर रोगी को स्वस्थ किया जाता है।

स्वरविज्ञान चिकित्सा

यह यौगिक चिकित्सा का एक अंग है जिसमें दाँई या बाँई नासिका द्वारा संचालित साँस (स्वर) को बदलकर रोग की निवृत्ति की जाती है। बाँई नाक (चन्द्र नाड़ी) से चलने वाला स्वर शीतप्रधान होता है और दाँई नाक (सूर्य नाड़ी) से चलने वाला स्वर गरम प्रकृति का होता है। रोग की आवश्यकता के अनुसार ठण्डी या गरम चिकित्सा इस स्वर परिवर्तन के द्वारा ही की जाती है।

ऐनीमल या पैट थेरेपी (पशु चिकित्सा)

इसमें प्राय: पालतू पशुओं के माध्यम से चिकित्सा की जाती है, क्योंकि उनमें विभिन्न रोगों को हरने की शक्ति होती है।

कल्प चिकित्सा

कल्प, भी चिकित्सा का एक अंग है। जब असाध्य रोग को दूर करने के लिए किसी एक वस्तु का ही सेवन किया जाता है।

शॉक थेरेपी (स्पन्दन चिकित्सा)

यह ऐलोपैथी का एक अंग है जो प्राय: मनोचिकित्सकों द्वारा अपनाया जाता है। जब कोई मानसिक या पागल रोगी औषधियों द्वारा ठीक नहीं होता तो उसे विद्युत-झटके देकर ठीक करने का प्रयास किया जाता है।

बैच फ्लॉवर रैमेडीज़ (पुष्प चिकित्सा)

जब किसी को फूलों का गुलदस्ता भेंट किया जाता है तो उसका मन प्रफुल्लित हो जाता है। शादी का अवसर हो, प्यार जताने की स्थिति हो, जन्मदिन हो या रोगी से मिलने की स्थिति हो तो फूल एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

कार्डिएक कोहिअरेन्स (हृदय सम्बन्धी चिकित्सा)

लगभग 40 हज़ार न्यूरोन्स मस्तिष्क तथा हृदय से सम्बन्धित होते हैं जो इन दोनों के बीच तादात्म्य स्थापित रखने के लिए उत्तरदायी होते हैं। इस पद्धति में हृदयगत स्पन्दन-प्रणाली का अध्ययन करके मनुष्य को स्वस्थ बनाया जाता है।

पास्ट लाइफ थेरेपी (भूतकालिक चिकित्सा)

इस पद्धति में मनुष्य के वर्तमानकालीन रोग को भूतकालीन प्रभावों का परिणाम माना जाता है जो उसके अवचेतन में बने रहते हैं और समय-समय पर उत्थित होकर मनुष्य को उद्वेलित करते हुए रोगग्रस्त कर देते हैं। हिप्नोटिक पद्धति से ऐसे रोगों को दूर किया जा सकता है।

म्यूज़िक थेरेपी

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद अस्पताल में रोगियों की आह और कराह को शान्त करने और मानसिक आघात से उन्हें उबारने के लिए विश्व के अनेक अस्पतालों में वॉइलिन वादक पहुँचकर उन्हें संगीत सुनाया करते थे। संगीत-चिकित्सा का श्रीगणेश मुख्य रूप से इसी के बाद बढ़ता गया। सन् 1944 में अमेरिका की मिसीगन स्टेट यूनिवर्सिटी ने सबसे पहले म्यूज़िक थेरेपी (संगीत-चिकित्सा) का डिग्री कोर्स शुरू किया। सन् 1998 में वहाँ 'अमेरिकन म्यूज़िक थेरेपी एसोसियेशन' की स्थापना हुई।

वास्तु और फेंग्सुई चिकित्सा

भवन-निर्माण की कला को 'वास्तु' कहते हैं और चीन में इसे 'फेंग्सुई' के नाम से जाना जाता है। वास्तु-शास्त्र या वास्तु-कला का प्रयोग अच्छे स्वास्थ्य और गृहस्थ की सुख-समृद्धि के लिए किया जाता है। इसे चिकित्सा-प्रणाली तो नहीं कह सकते, लेकिन इससे मनुष्य के रहन-सहन और उसकी भावनाओं पर असर जरूर पड़ता है। वास्तु-विज्ञान प्रधान रूप से पंच तत्वों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश) पर आधारित है। इसमें सबसे ज्यादा महत्व भू-गर्भीय ऊर्जा को दिया जाता है

मुद्रा चिकित्सा

यह योग के अन्तर्गत आती है। आसनों तथा कुछ क्रियाओं को भी मुद्रा कहते हैं, लेकिन मुद्रा अलग शास्त्र है जो योग से भिन्न है। हाथ की पाँचों उँगलियाँ पंच तत्व का प्रतीक हैं जिनसे चुम्बकीय तरंगें प्रवाहित होती रहती हैं। इनके विभिन्न प्रयोग और दाब से तत्वविशेष को प्रवाहित करके रोग को दूर किया जा सकता है।

भूत चिकित्सा

प्रेतात्माओं द्वारा ग्रसित व्यक्ति को ओझाओं द्वारा थाली या घण्टा आदि बजाकर ठीक किया जाता है; उसी को भूत-चिकित्सा कहते हैं। यद्यपि यह मनोरोग का एक प्रकार होता है; फिर भी जो लोग झाड़-फूँक में विश्वास करते हैं, वे इसी की शरण में जाते हैं।

मर्म चिकित्सा

आयुर्वेद के आधार पर मानव शरीर में 107 मर्म स्थल बताए गए हैं जिनमें आघात लगने से जीव की मृत्यु भी हो सकती है। इन मर्म स्थलों के दाब तथा मर्दन आदि से रोगों को दूर किया जा सकता है। नाड़ियो में स्थित मर्म स्थलों का ज्ञाता ही इसके द्वारा चिकित्सा कर सकता है।

जलौका चिकित्सा

जलौका अर्थात् जोंक को अंग्रेजी में लीच (Leech) कहते हैं जो शरीर की नाड़ियों में बहने वाले दूषित रक्त को चूस लेती हैं। इससे मनुष्य के स्नायु सम्बन्धी रोग आसानी से ठीक हो जाते हैं। इस प्रणाली का प्रचार विदेशों में ज्यादा है जहाँ लाखों जलौकाओं को काँच के बर्तन में सुरक्षित रखा जाता है।

पृथ्वी पर ऐसा कोई पदार्थ नहीं जिसमें किसी प्रकार का औषधीय गुण न हो; उन्हें जानने-पहचानने में मनुष्येतर प्राणियों में विशेष ज्ञान पाया गया है। अतः स्वास्थ्य लाभ के लिए उनका अनुसरण किया जा सकता है। कभी-कभी जहाँ दवा काम नहीं करती, वहाँ दुआ से भी व्यक्ति नीरोग हो जाता है।

लेखक - अधिष्ठाता: 'संगीत' मासिक, हाथरस

कला समय प्रकाशन

• सुरूचिपूर्ण फोर कलर प्रिंटिंग •आकर्षक गेटअप •नयनाभिराम पेपरबैक में...

- कला समय प्रकाशन द्वारा कला, साहित्य और संस्कृति पर केन्द्रित उत्कृष्ट पुस्तकों का प्रकाशन किया जाता है। हम प्रकाशन के लिए अच्छी पुस्तकों की पांडुलिपियाँ आंमत्रित करते है। चयनित पांडुलिपियों का प्रकाशन लेखक और प्रकाशक की परस्पर सहमति से तय शर्तों के अनुसार किया जायेगा।
- जिन रचनाकारों को अपनी मौलिक अनुदित, संपादित रचनाओं को पुस्तक रूप में प्रकाशन करवाना है। वे कम्प्यूटर पर साफ- साफ अक्षरों में कागज की एक ओर टाइप की हुई पांडुलिपि की सॉफ्ट कॉपी के साथ कला समय प्रकाशन, भोपाल से संपर्क करें।
- पुस्तक के लोकार्पण और साहित्यिक मंच पर संवाद, चर्चा आदि की व्यवस्था है।
- प्रकाशित पुस्तक की समीक्षा सुविधा भी उपलब्ध है।

आप स्वयं पधारे या सम्पर्क करें...

0755-2562294, 9425678058 kalasamayprakashan@gmail.com

कार्यालय: जे-191, मंगल भवन, ई-6 महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल - 462016 (म.प्र.)

आलेख

ओंकार ध्वनि का महत्त्व

- डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग

गीता के 10वें अध्याय के 25वें श्लोक में भगवान ने अपनी विभूतियों की चर्चा करते हुए कहा है–

'महर्षीणां भृगुरहं गिरामस्म्येकमक्षरम्'।

अर्थात् – मैं महर्षियों में भृगु और गिरा (वाणी) में एक अक्षर अर्थात् 'ओंकार' हूँ। अध्याय 8 के 13वें श्लोक में कहा है–

'ॐ इत्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्॥'

अर्थात् – जो पुरुष ॐ ऐसे इस अक्षररूप ब्रह्म को उच्चारण करता हुआ और उसके अर्थस्वरूप मुझ को चिन्तन करता हुआ शरीर का त्याग कर देता है; वह पुरुष परमगति को प्राप्त होता है।

संगीत की दृष्टि से ओंकार की साधना सस्वर की जाए तो वह शरीरस्थ अनेक रोगों का शमन करती है और कालान्तर में सविकल्प से निर्विकल्प समाधि तक पहुँचने का मार्ग प्रशस्त करती है। अतिरिक्त विभिन्न बीजाक्षर मन्त्र के प्राण होते हैं।

'अलंकार कौस्तुभ' और 'पदार्थादर्श' आदि ग्रन्थों में वाणी के चार भेद बताए गए हैं; यथा–

परा, पश्यन्ति मध्यमा और वैखरी। जब मूलाधार (गुदा और लिंग के मध्य भाग में स्थित चक्र) से जो नाद वर्ण के रूप में उत्पन्न होता है; उसे 'परा' कहते हैं। जब वर्ण नाद–रूप में मूलाधार से उठकर धीरे–धीरे हृदय (अनाहत चक्र) में पहुँचता है; तब उसे 'पश्यन्ति' कहते हैं और जब हृदय से उठकर वह क्रमशः बुद्धि और संकल्प के साथ मिलता है; तब उसे 'मध्यमा' कहते हैं। इसके बाद जब वह नाद बुद्धि से उठकर कण्ठ में पहुँचकर मुख से प्रकट होता है; तब वह 'वैखरी' कहलाता है।

'वाक्यप्रदीप' के ब्रह्मकाण्ड में 'पश्यन्त्या मध्यमायाश्च' नामक कारिका की 'भाव–प्रदीप' टीका में पंडित सूर्यनारायण शुक्ल ने लिखा है कि पश्यन्ति, मध्यमा और वैखरी तीन ही प्रकार की वाणी होती हैं और ये तीनों स्थूला, सूक्ष्मा और परा भेद से तीन–तीन प्रकार की हैं। इस प्रकार वाणी के नौ भेद हैं। वर्षों के विभागों से रहित केवल स्वरयुक्त संगीतरूपी वाणी ही 'स्थूला पश्यन्ति' है। वही जब जिज्ञासारूपिणी हो जाती है तब 'सूक्ष्मा पश्यन्ति' कहलाती है।

बही जिज्ञासा से हीन समवेद् अर्थात् बुद्धिरूपा या चिरूपा 'परा पश्यन्ति' कहलाती है। चमड़े से मढ़े हुए मृदंग आदि पर हाथ की थाप से उत्पन्न हुई ध्वनि स्थूला मध्यमा' कहलाती है। ध्वनिरूपी वाणी ही 'स्थूला–मध्यमा' कहलाती है, वही विवदयिषा अर्थात् बोलने की इच्छा को प्रेरित करने वाली 'सूक्ष्मा–मध्यमा' है और वही जब उस प्रकार की इच्छा से रहित निरुपाधिका हो जाती है तब 'परा–मध्यमा' कहलाती है। इसी प्रकार परस्पर विलक्षणता से अलग–अलग वर्ण के रूप में प्रकट होने वाली वाणी 'स्थूला–वैखरी' कहलाती है। बोलने की इच्छा का रूप धारण करने वाली 'सूक्ष्मा वैखरी' कहलाती है और बोलने की इच्छा से रहित केवल ज्ञानरूपा या बुद्धिरूपा 'परा–वैखरी' कहलाती है। 'पश्यन्ति' ही सूक्ष्म होकर 'परा' कहलाती है।

वैदिक साहित्य में वाणी के दो भेद किए गए हैं– निरुक्ता और अनिरुक्ता। 'निरुक्ता' वह है जो प्रकट रूप में व्यक्त होकर सुनाई पड़े तथा 'अनिरुक्ता' वह है जो अप्रकट और अव्यक्त हो। वैखरी वाणी 'निरुक्ता' होती है, मध्यमा कभी 'निरुक्ता' होती है कभी 'अनिरुक्ता' होती है और पश्यन्ति तथा परा वाणी केवल 'अनिरुक्ता' होती है। वैखरी वाणी भी दो प्रकार की होती है– व्याकृता तथा अव्याकृता। जिन ध्वनियों को मनुष्य ने सार्थक बनाकर व्यावहारिक बोलचाल का साधन बनाया है और जिसे विशेष नियमों के साथ बोलचाल या साहित्य में प्रयोग किया जाता है; उसे 'व्याकृता' कहते हैं। शेष सब ध्वनियों 'अव्याकृता' है; जैसे– पशु–पक्षियों की बोली या बच्चे की तोतली वाणी। सभी काव्यों में केवल व्याकृता वाणी' का ही प्रयोग होता है। संसार में अनेक देशों के मनुष्यों द्वारा अनेक प्रकार की बोलियाँ बोली जाती हैं जिन्हें विभिन्न देशवासी परस्पर समझ नहीं सकते। इसलिए जो ध्वनि एक देश के लिए 'व्याकृता' है, वही दूसरे देश के लिए 'अव्याकृता' हो सकती है। उच्चारण–दोष से परिचित होकर भाषा के अनेक अपभ्रष्ट और देशी स्वरूप समझ में आने लगते हैं और वे भी 'व्याकृता' के अन्तर्गत ही आ जाते हैं।

महर्षि पाणिनि ने कहा है–

आत्मा बुद्ध्या समेत्यर्थान् मनो युङ्क्ते विवक्षया।
मनः कायाग्निमाहन्ति स प्रेरयति मारुतम्॥
मारुतस्तूरसि चरन् मन्द्रं जनयति स्वरम्।
सोदीर्णो मूर्ध्न्यभिहतो वक्त्रमापद्य मारुतः॥
वर्णान् जनयते तेषां विभागः पञ्चधा स्मृतः।
स्वरतः कालतः स्थानात् प्रयत्नानुप्रदानतः॥

अर्थात् – शब्दोच्चारण से पूर्व आत्मा ही बुद्धि के साथ मिलकर अर्थ–ज्ञान करता है। तत्पश्चात् वह मन को बोलने की इच्छा से प्रेरित करता है। मन भी शरीर की अग्नि पर आघात करता है जिसके कारण अग्नि भी वायु को प्रेरित करता है। वह वायु हृदय–स्थान में पहुँचने पर

गम्भीर ध्वनि उत्पन्न करता है। वहाँ से चलकर फिर वह ऊपर जाकर मूर्धा से टकराकर लौटता है और मुख-मार्ग से बाहर निकलते हुए विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ उत्पन्न करता है। इन वर्णों के उत्पत्ति-कारण के अनुसार पाँच भेद माने जाते हैं- स्वरकृत भेद, कालकृत भेद, स्थानकृत भेद, आभ्यन्तर प्रयत्नकृत भेद और बाह्य प्रयत्नकृत भेद।

ओंकार को आदि ध्वनि की संज्ञा दी गई है। कहा गया है कि ओंकार की ध्वनि से ही जगत् की सृष्टि हुई। है। स्वर, भाषा या वाक्य के बिना कोई क्रिया नहीं हो सकती। सृष्टि का प्रत्येक कण विचार द्वारा ही क्रियाशील होकर सृष्टि में व्याप्त है। यह विचारशक्ति उसकी क्षमता पर निर्भर है। अणु-परमाणु गोलाई में चक्कर काट रहे हैं। उनका जन्म होता है और मृत्यु भी होती है। कीट-पतंग और पशु-पक्षी कुछ अधिक विचार कर सकते हैं और मनुष्य इन सबसे अधिक विचार कर सकता है। यदि ध्वनि न हो तो सभी प्राणियों के विचार की प्रक्रिया अवरुद्ध हो जायेगी।

वैदिक सूक्तों या प्रार्थनाओं की प्रत्येक इकाई 'मन्त्र' कहलाती है। इसके तीन प्रकार होते हैं-

1. ऋग्वेद के मन्त्र; जो छन्दोबद्ध हैं और उच्च स्वर से पाठ करने के लिए हैं।

2. यजुर्वेद के मन्त्र; जो गद्यात्मक हैं और निम्न स्वर में उच्चारण करने के लिए हैं।

3. सामवेद के मन्त्र; जो उच्च स्वर से गाए जाने के लिए हैं।

मन्त्रों को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए उनके आगे-पीछे ॐ प्रणवाक्षर लगाया जाता है जो स्वयं में एक मन्त्र है। मन्त्रों को आवश्यक स्वर प्रदान कर दिया जाए तो उसकी शक्ति कई गुना बढ़ जाती है। जो अक्षर विस्तृत होता हुआ इष्ट या अनिष्ट फल का कारण होता है; उसे बीज या बीजमन्त्र कहते हैं। मन्त्रों द्वारा रोगों का उपचार किया जा सकता है जिनमें ओंकार बीजाक्षर सहित महामृत्युंजय मन्त्र प्रमुख है; यथा-

ॐ'हों जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॐ स्वः भुवः भूः सः जूं हों ॐ।'

कहा जाता है कि इस मन्त्र से कई बार मृत्यु पर भी विजय पाई जा सकती है अथवा कुछ काल के लिए मनुष्य को जीवित रखा जा सकता है। ओंकार की ध्वनि और उससे सम्बन्धित अन्य मंत्रों के प्रति विश्व में आस्था बढ़ती जा रहीं है। ओंकार-साधना अथवा आहत नादयोग मन को एकाग्र करके उसकी शक्ति को विस्तार देता है। प्राण भी इससे बलिष्ठ होता है क्योंकि जिधर मन जाता है उधर ही प्राण भी जाता है और जिधर प्राण जाता है उधर ही रक्त भी गतिशील हो जाता है। इस प्रकार मन, प्राण और रक्त में अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है।

जब किसी चिकित्सा-प्रणाली द्वारा रक्त के परमाणुओं को खंडित या विखंडित किया जाता है तो उनकी ओर प्राण भी आकर्षित होता है और मन स्वतः ही प्राण की ओर आकर्षित होने लगता है। इसका सीधा-सादा अर्थ यही है कि रक्त की चिकित्सा करने पर मन स्वस्थता का अनुभव करने लगेगा। प्राणायाम अर्थात् श्वास-प्रश्वास की क्रिया द्वारा यदि प्राण का शुद्धीकरण किया जाए तो उससे रक्त और मन नीरोग होंगे और यदि ध्यान या विचार द्वारा मन को केन्द्रित करने का प्रयास किया जाए तो अन्तःसम्बन्ध होने के कारण प्राण और रक्त भी स्वस्थ हो जाएँगे।

सन् 1976 में इस पुस्तक के लेखक (डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग) ने भी सेन फ्रॉंसिस्को के एक विश्वविद्यालय में ओंकार ध्वनि एवं विशेष मंत्र से सम्बन्धित कुछ प्रयोग किया था, जिसमें एक विशेष फ्रीक्वेंसी पर ओंकार का दीर्घ उच्चारण किया गया जिसे उपस्थित व्यक्तियों ने नेत्र बंद करके ध्यानपूर्वक सुना। दस मिनट के बाद व्यक्तियों से उनके अनुभव पूछे गए। इनमें एक व्यापारी, एक प्रोफेसर, एक कलाकार, एक खिलाड़ी और दो-तीन सामान्यजन थे। कलाकार महिला ने कहा कि उसे ऐसा अनुभव हुआ जैसे छोटे-छोटे आग के गोले उसके शरीर में प्रविष्ट हो रहे हैं। इनमें से एक व्यक्ति (शायद व्यापारी) ही ऐसा था जिसे किसी भी प्रकार का कोई भी अनुभव नहीं हुआ। इस पूरे प्रयोग की यूमैटिक पर शूटिंग भी की गई जिसे विश्वविद्यालय के शोध-विभाग में रख लिया गया।

हार्वर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डॉ. हर्बर्ट बेन्सर पिछले बीस वर्षों से ओंकार थेरेपी पर कार्य कर रहे हैं। डॉ. हर्बर्ट ने ओंकार मंत्र थेरेपी को प्रचारित करने के लिए अस्पतालों में इसके परीक्षण कर लिए हैं और 'टैक्निक ऑफ माइंड एण्ड बॉडी' नामक एक पुस्तक लिखी है। इस थेरेपी से बंध्यत्व से पीड़ित महिलाओं में चालीस प्रतिशत महिलाएँ गर्भवती हो गई। 'साइंस' पत्रिका के अनुसार एक शोधदल ने सात वर्षों तक ॐ के प्रभावों का अध्ययन किया। दल के प्रमुख प्रोफेसर जे0 मार्गन के अनुसार ॐ के उच्चारण से पेट, सीना और मस्तिष्क में जो कंपन होते हैं उससे शरीर की मृत कोशिकाओं को नया जीवन मिलता है और शरीर में संतुलित ध्वनि तरंगों का प्रवाह होने से नई कोशिकाओं का निर्माण होता है। इन्होंने 4500 मानसिक और हृदय रोगियों पर जब अपना प्रयोग किया तो चार वर्ष बाद आश्चर्यजनक परिणाम सामने आए। 70 फीसदी पुरुषों और 85 प्रतिशत स्त्री रोगियों के रोग 90 प्रतिशत ठीक हो चुके थे। कुछ पर केवल दस प्रतिशत असर हुआ, जिसका कारण रोग का अंतिम स्थिति पर पहुँचना रहा।

उच्चारण की दृष्टि से ॐ शब्द में निहित तीन वर्ण (अ,उ,म) त्रिदोषों वात पित्त और कफ का संतुलन कर सकते हैं। 'अ' शब्द के उच्चारण से श्वास, दमा रोग का शमन होकर व्यक्ति के ओज और शक्ति का विकास होता है। 'उ' शब्द का उच्चारण यकृत, पेट और आँतों पर प्रभाव डालता है, जिससे कब्ज़ की शिकायत भी दूर होने लगती है। 'म' शब्द के उच्चारण से मस्तिष्क सम्बन्धी विकार दूर होते हैं, । मेधा-शक्ति का विकास होता है और मस्तिष्क के तालु में स्थित सहस्रार चक्र का भेदन होने से मानसिक शक्तियों का विकास होता है। इससे कुंडलिनी शक्ति भी जाग्रत हो जाती है।

लेखक - अधिष्ठाता: 'संगीत' मासिक, हाथरस

■

स्वास्थ्य संरक्षण हेतु दिनचर्या

1. ब्राह्ममुहुर्त्त में उठना : सूर्योदय से पूर्व उठना चाहिए। क्योंकि उस समय वातावरण प्रदूषण रहित रहता है। प्राणवायु (Oxygen) की मात्रा सर्वाधिक रहती है। सुबह वातावरण के प्रभाव से अपने शरीर में उपयोगी रसायन स्रवित होते हैं जिनसे ऊर्जा एवं उत्साह का संचार होता है।

2. उषःपान – सुबह उठकर पानी पीने से शरीर से विषैले पदार्थ बाहर निकलते हैं। पाचन तन्त्र नियमित रहता है। समय से पूर्व बालों का सफेद होना एवं झुर्रियों का आना रुकता है।

3. ईश स्मरण/ध्यान – मन एकाग्रचित्त होता है जिससे मानसिक व शारीरिक तनाव दूर होता है। तनाव से होने वाली शारीरिक व मानसिक व्याधियाँ नहीं होती। ध्यान के लिए ईश स्मरण/इष्ट का ध्यान करना चाहिए।

4. मल-मूत्र उत्सर्जन – शरीर में Metobalism (उपापचय) के फलस्वरूप बने अवशिष्ट एवं विषैले तत्वों को उत्सर्जन क्रिया द्वारा बाहर निकाला जाता है। प्रातःकाल इस क्रिया को करने से पूरे दिन शरीर में लघुता (हल्कापन) रहता है। इस क्रिया के पश्चात् हाथ-पैर भली प्रकार साफ करने चाहिए जिससे संक्रमण का भय नहीं रहता।

5. दन्त धावन-जिह्वा निर्लेखन – दांत स्वच्छ एवं मजबूत होते हैं। मुख की दुर्गन्ध एवं विरसता का नाश होता है। जिह्वा स्वच्छ, मलरहित रहती है जिससे स्वाद का ज्ञान भली प्रकार होता है।

6. मुखादिधावन – लोध्र-आमलक आदि को उबालकर उस पानी से मुख-आँखें धोनी चाहिए। इससे मुख की स्निग्धता दूर होती है। मुहाँसे, झाइयाँ आदि नहीं होते, चेहरा कांतिमय बनता है। नेत्र ज्योति बढ़ती है।

7. अंजन – आँखें साफ-स्वच्छ होती हैं। नेत्र ज्योति बढती है। आँखों के रोग नहीं होते। नेत्र सुन्दर व आकर्षक होती हैं।

8. नस्य– रोज सुबह 2-3 बूंद गरम करके ठण्डा किया हुआ सरसों या तिल का तैल नाकों में डालना चाहिये। नाक में तेल डालने से सिर, आँख, नाक के रोग नहीं होते। नेत्र ज्योति बढ़ती है। बाल काले-लम्बे होते हैं। समय से पूर्व न झड़ते व न सफेद होते है।

9. अभ्यंग – स्नान के पहले शरीर पर तेल मालिश करनी चाहिये उससे त्वचा कोमल, कांतियुक्त, रोगरहित होती है। त्वचा में रक्त संचार बढ़ता है। विषैले तत्व शरीर से बाहर निकलते है तथा त्वचा में झुर्रियां नहीं पड़ती।

10. व्यायाम – सूर्य नमस्कार, एरोबिक्स, योग या अन्य दैनिक व्यायाम से शारीरिक सामर्थ्य और रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। शरीर के समस्त स्रोतस की शुद्धि होती है, रक्त संचार बढता है, अवशिष्ट पदार्थों को शरीर से बाहर निकालता है, अतिरिक्त चर्बी घटती है।

11. क्षौरकर्म – समय पर दाढ़ी-मूँछ बनवाने, बाल कटवाने, नाखून कटवाने से त्वचा स्वच्छ रहती है, प्रसन्नता आती है। शरीर में लघुता आती है तथा ऊर्जा का संचार होता है। नाखून के द्वारा होने वाले संक्रमण का भय कम होता है।

12. उद्वर्तन (उबटन) – सुगंधित द्रव्यों के लेप या उबटन करने से शरीर की दुर्गन्ध दूर होती है। मन में प्रसन्नता और स्फूर्ति आती है। उबटन से शरीर की अतिरिक्त वसा नष्ट होती है। शरीर के अंग स्थिर व दृढ़ होते हैं। त्वचा मुलायम और चमकदार होती है। त्वचा के रोग मुहाँसे, झाँइयाँ आदि नहीं होते।

13. स्नान – स्नान दैनिक स्वास्थ्य के लिए अत्यावश्यक है। स्नान से शरीर की सभी प्रकार की अशुद्धियाँ दूर होती है। इससे गहरी नींद आती है शरीर से अतिरिक्त उष्मा, दुर्गन्ध, पसीना, खुजली, प्यास को दूर करता है। शरीर की समस्त ज्ञानेन्द्रियों को सक्रिय करता है। रक्त का शोधन होता है, भूख बढ़ती है।

14. निर्मल वस्त्र धारण – स्वच्छ और आरामदायक कपड़े पहनने से सुन्दरता, प्रसन्नता, आत्मविश्वास की वृद्धि होती है।

15. धूप-धूल आदि से बचाव – सीधी सूर्य की किरणों से बचना चाहिए। त्वचा के सीधे सूर्य की किरणों के अधिक सम्पर्क में आने से त्वचा में Irritation, Sunburn आदि विभिन्न विकार हो सकते है। छाता, स्कार्फ या सनस्क्रीन लोशन का उपयोग हितकर है।

16. निद्रा – ग्रीष्म ऋतु के अतिरिक्त सभी ऋतुओं में रात्रि में 6-8 घंटे की नींद आवश्यक है। ग्रीष्म ऋतु में रात्रि के साथ दिन में भी 1-2 घंटे आराम करना चाहिए। क्योंकि अधिक गर्मी से शरीर में जलांश तथा शक्ति का ह्रास होता है और दिन में नींद लेने से उसकी पूर्ति हो जाती है। उचित निद्रा के सेवन से शारीरिक एवं मानसिक थकान दूर होती है। सम्यक् पाचन होता है। शरीर में नई ऊर्जा का संचार होता है। निद्रा शरीर के सम्यक् वृद्धि एवं विकास के लिए आवश्यक है।

ऋतुचर्या

मौंसम के बदलाव के साथ ही खान-पान में बदलाव जरुरी है, ये बदलाव करके मौसमी रोगों से बचा जा सकता है।

शिशिर ऋतुचर्या

समय – माघ फाल्गुन (फरवरी, मार्च)

संभावित रोग – अधिक भूख लगना, होठ, त्वचा तथा बिवाई फटने लगती है। सर्दी व रूखापन, लकवा, बुखार, खांसी, दमा आदि रोगों की संभावना बढ़ जाती है।

पथ्य आहार - विहार - (क्या सेवन करें ?)

1. विविध प्रकार के पाक एवं लड्डू, अदरक, लहसुन की चटनी, जमीकंद, पोषक आहार आदि सेवन करें।
2. दूध का सेवन विशेष रूप से करें।
3. तैल मालिश, धूप का सेवन, गर्म पानी का उपयोग करें।
4. ऊनी व गहरे रंग के कपड़े, जूते मौजे आदि से शरीर को ढखकर रखें।

अपथ्य आहार-विहार (क्या सेवन न करें?)

1. बरसात व ठण्डी हवा से बचें।
2. हल्का रूखा एवं वायुवर्धक आहार न लें।

वसन्त ऋतुचर्या

समय : चैत्र, वैशाख (अप्रैल, मई)

संभावित रोग : दमा, खांसी, बदन दर्द, बुखार, कै, अरुचि, जी मिचलाना, बेचैनी, भारीपन, भूख न लगना, अफरा, पेट में गुड़गुड़ाहट, कब्ज, पेट में दर्द, पेट में कीड़े आदि विकार होते हैं।

पथ्य आहार-विहार (क्या सेवन करें?)

1 पुराना जौ, गेहूँ, ज्वार, बाजरा, मक्का आदि धानों का आहार श्रेष्ठ है। मूंग, मसूर, अरहर व चने की दालें तथा मूली, घीया, गाजर, बथुआ, चौलाई, परवल, सरसों, मेथी, पालक, धनिया, अदरक आदि का सेवन हितकारी है।

2. वमन, जलनेति, नस्य और कुँजल आदि हितकर है।
3. परिश्रम, व्यायाम, उबटन और आँखों में अंजन का प्रयोग हितकर है।
4. शरीर पर चन्दन, अगर आदि का लेप लाभदायक है।
5. शहद के साथ हरड़, प्रात: कालीन हवा का सेवन, सूर्योदय के पहले उठकर योगासन करना व मालिश करना हितकर है।

अपथ्य आहार-विहार (क्या सेवन न करें?)

1. नया अन्न, ठंडे व चिकनाई युक्त, भारी खट्टे व मीठे आहार द्रव्य, दही, उड़द, आलू, प्याज, गन्ना, नया गुड़, भैंस का दूध और सिंघाड़े का सेवन अहितकर है।
2. दिन में सोना, एक साथ लम्बे समय तक बैठना अहितकर है।

ग्रीष्म ऋतुचर्या

समय : ज्येष्ठ आषाढ (जून, जुलाई)

संभावित रोग : रूखापन, दौर्बल्य, लू लगना, खसरा, हैजा, चेचक, कै, दस्त, बुखार, नकसीर, जलन, प्यास, पीलिया, यकृत विकार आदि होने की संभावना रहती है।

पथ्य आहार-विहार (क्या सेवन करें?)

1. हल्के, मीठे, चिकनाई वाले पदार्थ, ठण्डे पदार्थ, चावल, जौ, मूंग, मसूर, दूध शर्बत, दही की लस्सी, फलों का रस, सत्तू, छाछ आदि। संतरा, अनार, नींबू, खरबूजा, तरबूज, शहतूत, गन्ना, नारियल पानी, जलजीरा, प्याज, कच्चा आम (कैरी) आदि का प्रयोग हितकर है।
2. सूर्योदय से पहले उठना तथा उष:-पान हितकर है।
3. सुबह टहलना, दो बार स्नान, ठण्डी जगह पर रहना, धूप में निकलने से पहले पानी पीना तथा सिर को ढककर जाना, बार-2 पानी पीते रहना, सुगन्धित द्रव्यों का प्रयोग तथा दिन में सोना अच्छा है।

अपथ्य आहार-विहार (क्या सेवन करें?)

1. धूप, परिश्रम, व्यायाम, सहवास, प्यास रोकना, रेशमी कपड़े, कृत्रिम सौन्दर्य प्रसाधन, प्रदुषित जल का सेवन अहितकर हैं।
2. गरम, तीखे, नमकीन, तले हुए पदार्थ, तेज मसाले, मैदा, बेसन से बने, पचने में भारी खाद्यों की ज्यादा मात्रा और शराब का सेवन अहितकर है।

वर्षा ऋतुचर्या

संमय- श्रावण भाद्रपद (अगस्त, सितम्बर)

संभावित रोग : भूख कम लगना, जोड़ो के दर्द, गठिया, सूजन, खुजली, फोड़े-फुन्सी, दाद, पेट में कीड़े, नेत्राभिष्यब्द (आंख आना) मलेरिया, टाइफाइड, दस्त और अन्य रोग होने की संभावना रहती है।

पथ्य आहार-विहार (क्या सेवन करें ?)

1. अम्ल, लवण, स्नेहयुक्त भोजन, पुराने धान्य (चावल, जौ, गेहूँ) तथा मांस रस, घी व दूध का प्रयोग, छाछ में बनाई गई बाजरा या मक्का की राबड़ी, कद्दू, बैंगन, परवल, करेला, लौकी, तुरई, अदरक, जीरा, मैथी, लहसुन का सेवन हितकर है।
2. संशोधित जल का प्रयोग करना चाहिये, कुआं, तालाब और नदी के जल का प्रयोग बिना शुद्ध किये नहीं करना चाहिये। पानी को उबालकर उपयोग में लेना श्रेष्ठ है।
3. भीगने से बचें, भीगने पर शीघ्र सूखे कपड़े पहनें, नंगे पैर, गीली मिट्टी या कीचड़ में नहीं जाना चाहिये। सीलन युक्त स्थान पर नहीं रहना चाहिये तथा बाहर से लौटने पर पैरों को अच्छी तरह धोकर पौंछ लेना चाहिये।
4. तैल की मालिश करना हितकर है तथा कीट-पतंग एवं मच्छरों से बचने के लिए मच्छरदानी का प्रयोग हितकर है।

अपथ्य आहार-विहार (क्या सेवन न करें?)

1. चावल, आलू, अरबी, भिंडी तथा पचने में भारी आहार द्रव्यों का प्रयोग, बासी भोजन, दही, माँस, मछली, अधिक तरल पदार्थ, शराब आदि का सेवन अहितकर है तथा तालाब एवं नदी के जल का सेवन उचित नहीं है।
2. दिन में सोना, रात में जागना, खुले में सोना, अधिक व्यायाम, धूप

सेवन, अधिक परिश्रम, अधिक सहवास, अज्ञात नदी, जलाशय आदि में स्नान तथा तैरना अहितकर है।

शरद ऋतुचर्या

शरद ऋतु : अश्विन कार्तिक (अक्टूबर - नवम्बर)

ऋतु स्वभाव : पित्त प्रकोप, वात प्रशम

संभावित रोग : आयुर्वेद के मत से शरद काल में पित्त का प्रकोप होता है जो शरीर में अग्नि का प्रधान कारक है अत: ज्वर, रक्तविकार, दाह, छर्दि (उल्टी, कै) सिरदर्द चक्कर आना, खट्टी डकारें, जलन, रक्त व कफ विकार, प्यास, कब्ज, अफरा, अपच, जुकाम, अरुचि आदि विकारों की संभावना होती है। इस ऋतु में विशेष रूप से पित्त प्रकृति वाले व्यक्तियों को अधिक कष्ट होता है।

पथ्य आहार-विहार (क्या सेवन करें?)

1 हल्का भोजन, पेट साफ रखना हितकर है।

2. मधुर व शीतल, तिक्त (कड़वा नीम, करेला आदि) चावल, जौ का सेवन करना चाहिऐ।

3. करेला, परवल, तुरई, मैथी, लौकी, पालक, मूली, सिंघाड़ा, अंगूर, टमाटर, फलों का रस, सूखे मेवे नारियल का प्रयोग करना चाहिए।

4. इलायची, मुनक्का, खजूर, घी का प्रयोग विशेष रूप से करना चाहिए।

5. त्रिफला चूर्ण अमलतास का गूदा, छिलके वाली दालें, मसाले रहित सब्जी गुनगुने पानी के साथ नींबू के रस का सेवन प्रात:काल रात्रि में हरड़ का प्रयोग विशेष लाभदायक है।

6. तेल मालिश, व्यायाम तथा प्रात: भ्रमण, शीतल जल से स्नान करना चाहिए। हल्के वस्त्र धारण करें। रात्रि में चन्द्रमा की किरणों का सेवन करें, चन्दन तथा मुलतानी मिट्टी का लेप लाभदायक है।

अपथ्य आहार-विहार (क्या सेवन न करें?)

1. मैदे से बनी हुई वस्तुएँ, गरम, तीखा, भारी, मसालेदार तथा तेल में तले हुए खाद्य पदार्थों का उपयोग न करें।

2. दही व मछली का प्रयोग न करें, अमरूद को खाली पेट न खाए, कन्द शाक, वनस्पति घी, मूंगफली, भुट्टे, कच्ची ककड़ी दही आदि का अधिक उपयोग न करें।

3. दिन में न सोएँ, मुहँ ढक कर न सोएँ तथा धूप से बचें।

हेमन्त ऋतुचर्या

समय : मार्गशीर्ष, पौष (दिसम्बर-जनवरी)

संभावित रोग: वातज रोग, वात-श्लैष्मिक रोग, लकवा, दमा, पाँवों में बिवाई फटना, जुखाम आदि।

पथ्य आहार-विहार (क्या सेवन करें?)

1. शरीर संशोधन हेतु वमन व कुञ्जल आदि करें।

2. स्निग्ध, मधुर, गुरु, लवण युक्त भोजन करें।

3. घी, तेल तथा उष्ण मोगर, गोंद, मेथी के लड्डू, च्यवनप्राश, नए चावल, माँस आदि का सेवन हितकारी हैं।

4. तैल मालिश, उबटन, गुनगुने पानी से नहाना, ऊनी कपड़ों का प्रयोग, सिर, कान, नाक, पैर के तलुओं पर तैल मालिश करें। गर्म और गहरे रंग के वस्त्र धारण करें, आग तपना और धूप सेकना हितकारी है।

5. हाथ पैर धोने के लिए गुनगुने जल का प्रयोग करें। जूते, मौजे, दस्ताने, टोपी, मफलर, स्कार्फ का प्रयोग करना चाहिये।

अपथ्य आहार विहार (क्या सेवन न करें?)

1. ठण्डे, वायु बढाने वाली वस्तुओं का सेवन, नपातुला भोजन, बहुत पतला भोजन न करें।

2. दिन में नहीं सोना चाहिये, अधिक हवादार स्थान में रहना तथा ठण्डी हवा हानिकारक हैं। खुले पाँव नहीं रहना चाहिये तथा हल्के सफेद रंग के वस्त्र न पहने।

स्त्रोत : राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान जयपुर (राज.) से साभार

'कला समय' पत्रिका के सदस्यता शुल्क की सूचना

प्रिय पाठकों,

सदस्यों से अनुरोध है कि अपना सदस्यता शुल्क निम्नानुसार भेजकर सहयोग करें। जिन आजीवन (15 वर्षीय) सदस्यों की सदस्यता अवधि के 15 वर्ष पूरे हो चुके हैं, उनसे अनुरोध है कि वे पुन: अपनी आजीवन सदस्यता का नवीनीकरण कराने हेतु 'कला समय' के पक्ष में आजीवन सदस्यता शुल्क भेज कर अनुगृहीत करें।

सदस्यता शुल्क

वार्षिक	:	300 (व्यक्तिगत)	350 (संस्थागत)
द्वैवार्षिक	:	600 (व्यक्तिगत)	700 (संस्थागत)
चार वर्ष	:	1000 (व्यक्तिगत)	1200 (संस्थागत)
आजीवन (15 वर्ष के लिए)	:	10,000 (व्यक्तिगत)	12,000 (संस्थागत)

(कृपया सदस्यता शुल्क- ऑनलाईन/ड्राफ्ट/मनीआर्डर द्वारा 'कला समय' के नाम पर उक्त पते पर भेजें)

विशेष : 'कला समय' की प्रतियाँ साधारण डाक/रजिस्टर्ड बुक-पोस्ट से भेजी जाती हैं यदि कोई महानुभाव रजिस्टर्ड पोस्ट से पत्रिका मंगवाना चाहते हैं तो कृपया वार्षिक डाक खर्च 150/- अतिरिक्त भेजने का कष्ट करें।

-संपादक

स्वस्थ जीवन के उपाय

दिनचर्या: निरोगी जीवन की कामना करने वाले बुद्धिमान व स्वस्थ व्यक्ति द्वारा प्रतिदिन किये जाने वाले आचरण को दिनचर्या कहते हैं। स्वस्थ दिनचर्या कुछ इस प्रकार होनी चाहिए: –

ब्रह्मा मुहूर्त में उठना (समय प्रात: 4.30 बजे से 6.00 बजे तक) पृथ्वी को प्रणाम कर ताम्र पात्र में रखा जल पीना व अपने इष्ट देव का स्मरण करना। फिर दैनिक क्रिया से निवृत होकर 2 से 3 कि.मी. प्रतिदिन खुली हवा में पैदल चलना स्वास्थ्यकर है। सुबह नीम, तुलसी, पुदीना पत्ती की 2 से 3 पत्तियाँ जल से लेने पर ह्रदय रोगी, मधुमेह, उच्च रक्तचाप व अन्य खतरनाक बीमारियों में काफी लाभ होता है। बेल पत्र भी मधुमेह रोगियों के लिये हितकारी है।

10 से 15 मिनिट नियमित रूप से योग एवं प्राणायाम करें तथा तत्पश्चात् गुनगुने पानी से स्नान लाभप्रद होता है। सुबह 8 से 9 बजे के बीच भरपूर पौष्टिक नाश्ता करें, इसमें अंकुरित चना, मूंग, गेहूं व पपीता का प्रयोग प्रतिदिन करें। 12 से 1 बजे के बीच दोपहर का भोजन लेवें जिसमें हरी सब्जी, सलाद, दाल का पर्याप्त समावेश रहे। सायं 4 से 5 बजे के बीच एक गिलास मौसमी फल जूस अथवा मौसमी फलों का सेवन हितकारी रहेगा। शाम को 6 से 7 बजे के बीच सुविधा अनुसार 1 से 2 कि.मी. पैदल चलना स्वास्थ्यवर्धक रहेगा।

8 बजे से 9 बजे के बीच रात्रि में हल्का भोजन लेवें, जिसमें चिकनाई, तली हुई वस्तुयें तथा मिर्च का प्रयोग कम से कम हो। सोने एवं रात्रि भोजन के बीच कम से कम 2-3 घण्टे का अंतराल होना आवश्यक है। प्रतिदिन 8 से 10 लीटर पानी पीना आवश्यक है। 10 से 11 बजे रात्रि के बीच पैर धोकर एवं सभी चिंताओं को छोड़कर सोने जाना चाहिए, इससे निद्रा सही आती है।

भोजन

भोजन का केवल 1/3 भाग ही अन्न और दालें होनी चाहिये बाकी 2/3 भाग हरी सब्जी। 20 प्रतिशत पकाये हुये अन्न के साथ 80 प्रतिशत अपक्व अन्न लें।

कम, सीमित करें

नमक, चीनी, मिर्च, मसाले, दालें, घी, आइसक्रीम, आलू आदि। ऊंची एड़ी की चप्पल, जूते, टी.वी. व सिनेमा, मोटापा व थका देने वाले व्यायाम से बचें।

आराम

दोनों समय खाने के बाद 10 से 15 मिनट वज्रासन में बैठें। सोने से पहले अपनी सारी चिंताओं से मुक्त होकर शांतचित्त हो जायें। अपनी बायीं करवट तथा पेट के बल (शिशु आसन में) सोने की आदत डालें।

दूर करें, रहें

धूम्रपान, चाय, कॉफी, शराब, दवा व अन्य बुरी आदतें। मैदा व पॉलिश किये हुए चावल, मांसाहार, डिब्बा बन्द, सुखाये हुए, मिलावटी, रंगयुक्त, सुगंधयुक्त, सिन्थेटिक, कृत्रिम भोजन। भोजन के आधा घण्टे पहले तथा एक घण्टे बाद ही पानी पियें।

दांतों का स्वास्थ्य

भोजन के बाद दांतों को पानी से अच्छी तरह से कुल्ला करके साफ कर लें। सुबह और रात्रि दोनों समय दांतों को टूथपेस्ट/विन्ध्य दशनसंस्कार दंतमंजन से साफ करें।

प्रतिदिन कुछ कड़ी वस्तुएं जैसे गाजर, मूली, नारियल, भुट्टे, सौंफ, तिल आदि चबा-चबा कर खाएं। दांतों में पस आता हो या पायरिया हो तो सुबह, दोपहर व शाम नीम की दस-दस पत्तियां चबाये।

आदत डालें

दिन में एक बार नमक के गुनगुन पानी से गरारे करना। सुबह व सायं त्रिफला के पानी से आंखों को धोना। इससे नेत्र ज्योति बढ़ेगी।

प्रतिदिन मुंह के तालू की हाथ के अंगूठे से धीरे-धीरे मालिश करें। मुंह में पानी भरकर चेहरे व आंखों पर पानी के छपाके मारें एवं कुछ समय हंसने व गाने में अवश्य बिताएं।

जरूरी

गहरी सांस लें तथा हमेशा सीधे तनकर बैठें या चलें। दिन में दो बार शौच जाने एवं दो बार स्नान करने की आदत डालें। स्नान करने के बाद पहले हाथों से मालिश करके जितना पानी सुखा सकें सुखा लें। फिर तौलिए से पोंछें।

सैद्धान्तिक बातें

अधिक दवाएं लेना बीमारी से ज्यादा खतरनाक है, जल्दबाजी, चिंता एवं गरिष्ठ व चटपटा भोजन बीमारी के मुख्य कारण है।

सुखी जीवन के लिये

खुश रहो, खुशियां बांटो। याद रहे, जो देंगे वही मिलेगा।

हमेशा सजग रहें

अपने कर्त्तव्य के प्रति, अपने दोषों के प्रति, अपनी गैर जरुरी इच्छाओं के प्रति, अपने मूल स्वरुप के प्रति, सुख वस्तु विशेष में नहीं, संतुष्ट रहने में है। महत्वकांक्षा सभी में होती है, परन्तु अति महत्वाकांक्षी

होना असंतोष को जन्म देता है। निष्काम कर्म करने की आदत डालें, यह सुखी जीवन की कुंजी है। जो भी होगा उसकी रजा से होगा, फिर चिन्तित होने का क्या प्रयोजन है।

अच्छी सेहत के लिए जरूरी है पर्याप्त नींद

आधुनिक परिवेश में अधिकांश लोगों को नींद न आना एक आम शिकायत हो गई है। नींद की गोलियां एवं किसी भी प्रकार के नशे के सेवन का अर्थ है, अन्य जटिल बीमारियों को निमंत्रण देना। इससे किडनी, हृदय एवं अन्य महत्वपूर्ण अंग प्रभावित होते हैं।

प्राय: मानसिक तनाव, चिंताएं ही सामान्यत: अनिद्रा का कारण है। अनिद्रा से पीछा छुड़ाने का सीधा उपाय है। आत्म सुझाव यानी अपने आप से यह बार-बार और जोर से कहिए कि आज रात में बहुत जल्दी सो जाऊंगा।

रात्रि भोजन एवं सोने के बीच 2-3 घण्टे का अन्तराल आवश्यक है एवं सोने से पूर्व हाथ-पैर और चेहरा पानी से धो लें, दांत साफ करें एवं सभी चिन्ताओं को भूल जायें तथा कार्यालय में कार्य करने वाले व्यक्ति कार्यालयीन समस्याओं को कार्यालय में ही छोड़ जाये। किसी भी हालत में उसे याद न करें।

पर्याप्त नींद अच्छे स्वास्थ्य का सूचक है, साधारण 6 से 8 घंटे नियमित रूप से सोना चाहिए।

साभार : लघुवनोपज प्रसंस्करण एवं अनुसन्धान केंद्र , भोपाल

दिनचर्या

पंचगव्य का महत्व

पंचगव्य के घटक एवं महात्म्य

1 दूध: गाय का दूध सुपाच्य पौष्टिक, सात्विक एवं स्वादिष्ट होता है। यह श्रेष्ठतम पूर्ण आहार है। आयुर्वेद के सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'चरक संहिता' के दुग्ध प्रकरण में कहा गया है 'प्रवरम जीवनीयम श्री रमुकतम रसायन' है। उल्लेखनीय है कि आयुर्वेद में जहाँ कहीं भी क्षीर, दुग्ध परा, दधि घृत गोमय शब्द का प्रयोग किया गया है उससे तात्पर्य गाय के दूध, दही, घी, गोबर से ही है। महाभारत में यक्ष युधिष्ठिर से पूछता है अमृतकुम युधिष्ठिर उत्तर देते हैं गवामृत अर्थात गाय का दूध ही अमृत है।

गायत्री तपोभूमि शांतिकुंज हरिद्वार के अधिष्ठता पंडित श्री राम शर्मा आचार्य से जब प्रश्न किया गया है आप गृहस्थ्य होते हुये भी थोड़ी आयु में इतना अधिक कार्य कैसे कर पायें? आचार्य ने गौ दुग्ध का वर्णन करते हुये कहा मैंने 24 वर्ष तक मात्र गौ दुग्ध का सेवन करते हुये माँ गायत्री की साधना की है। इसी दूध के परिणामस्वरूप लगभग 500 ग्रंथों का लेखन समाजसेवा और साधनात्मक कार्य किया जा सका है। जिसे सामान्यत: 700 वर्ष के जीवन में, प्रयास सहित किया जा सकता है।

2 दही : हमारे शरीर के लिये रूचि तथा भूख बढ़ाने वाला, पुष्टिदायक, वायुनाशक है। दही भूख तथापाचनशक्ति को बढ़ाता है। इससे कब्ज और हृदय के लिये हानिकारक कोलेस्ट्राल पर नियंत्रण होता है। दही से कैंसर भी कम होता है।

3 गोघृत : अग्नि तथा बलवर्धक मधुर रसयुक्त, शीतल, वात, पित्त, कफनाशक बुद्धि वर्धक, तेज, ओज की वृद्धि करने वाला पवित्र मंगलदायक, सुगंधयुक्त, रोचक दीर्घ जीवन प्रदान करने एवं सभी धूतों से श्रेष्ठ रसायन है।

4 गोबर का रस : यह रोगाणु तथा कीटनाशक होता है इससे छाले, फफोले, खुजली, स्कीन से संबंधित रोग नष्ट हो जाते हैं। यह शरीर के अन्दर के विषैले पदार्थों को खत्म करता है। हैजा, टी.वी. जैसे घातक रोगों के रोगाणुओं को भी खत्म करता है।

5 गौमूत्र : यह उष्ण, क्षार लघु, अग्निदीपक मेघा के लिये हितकर, पित्त कफ, वात नाशक है। शूल, उदर अफरा, खुजली, नेत्ररोग, कुष्ठ, श्वास, शोथ, प्लीहा, पाण्डुरोग, रक्तविकार तथा मुख सम्बंधी रोगों में लाभकारी है। इसमें एन्टीरोप्टिक, एन्टीटॉकसिन विषनाशक, एन्टीबायोटिक रोगाणुरोधक गुण पाये जाते हैं साथ ही विटामिन 'बी' तथा कार्बोलिक एसिड होता है जो रोगाणुओं का नाश करता है।

6 कुशा रस : इन पांचों तत्वों में जो अशुद्धियाँ होती है उनको शुद्ध करने के लिये पंचगव्य में कुशा रस का उपयोग किया जाता है।

पंचगव्य पान का महत्व : यह देह, मन, बुद्धि शुद्धिकारक है। इसके पान करने से बीमारी के कीटाणुओं पर प्रहार तथा अतिशीघ्र स्वास्थ सुधार होता है, प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। इसलिये सभी नर नारी को इसका पान करना चाहिये ।

साभार: पंचगव्य केन्द्र गायत्री शक्तिपीठ भोपाल

गनेड़ी, गनेड़ीवाला और गरुड़ झेप

कैलाशचन्द्र घनश्याम पाण्डेय

आगरा में मुगल सम्राट औरगजेब के कैदखाने से शिवाजी महाराज की बड़ी चतुराई पूर्ण मुक्ति को 'गरुड झेप' कहा गया है। जिस प्रकार पलक झपकाते ही गरुड पक्षी कई मीलों का सफर तय कर लेता है ठीक उसी प्रकार शिवाजी जब राजगढ से आगरा के लिये रवाना हुए (05, मार्च, 1666 ई.) तो हस्ती चाल का आनंद उठाते हुए 68 दिन में आगरा पहुँचे (11. मई, 1666 ई.)। पर, जब औरंगजेब ने दुष्टता कर उन्हें धोखे से गिरफ्तार करवा दिया तो वे गरुड़ झेप से मुगल सम्राट की सारी सुरक्षा व्यवस्था को धता बताते हुए मात्र 25 दिनों (19, अगस्त, * 1666 से 12, सितंबर, 1666) में राजगढ़ में अपनी मातुश्री जीजाबाई के चरणों में जा पहुँचे। शिवाजी ने 68 दिन का लंबा रास्ता 25 दिन में कैसे तय किया? यह तथ्य शिवाजी महाराज ने कभी किसी के समक्ष प्रकट नहीं किया, यही कारण है कि आगे चलकर इस मार्ग के सबन्ध में मुगल इतिहासकार खाफीखां व इतिहासकार सर जदुनाथ सरकार को अपने-अपने कल्पना के घोडे दौड़ानें पड़े।

खाफीखों ने गप्पे लिखी है। सरकार का मत है कि वे 'सुरक्षा कारणों से शिवाजी ने आगरा से दक्षिण को जाने वाले मुगल राजमार्ग को त्याग कर मथुरा > प्रयाग > बुन्देलखण्ड > गौडँवाना > गोलकुण्डा होते हुए राजगढ़ पहुँचे थे।' आगे चलकर सरदेसाई ने भी इसी मार्ग को मान्यता प्रदान की। पर, इन इतिहासकारों द्वारा सुझाये गये मार्ग के कोई प्रमाण नहीं है। **प्रस्तुत शोधपत्र में मैं शेखावाटी में स्थित गनेडी ग्राम के गनेडीवाला सेठों की पारिवारिक जानकारी के आधार पर 'गरुड़झेप मार्ग' की नवीन जानकारी प्रस्तुत कर रहा हूँ।**

गनेडीवाला सेठों ने न केवल शिवाजी महाराज की सेवा की अपितु समय-समय पर वीरवर दुर्गादास राठौर, डूँगजी-जवाहरजी, तात्याटोपे जैसे महान देशभक्तों की आर्थिक मदद करने का सौभाग्य प्राप्त है। उद्योगपति घनश्यामदास बिड़ला के दादा शिवनारायण बिड़ला ने इनकी अजमेर पेढी पर मुनीम के रूप में अपने जीवन की शुरुवाद की थी। 19वीं शताब्दी में भारत में मारवाडी सेठो की जो व्यापारिक गद्दियाँ थी उनमें प्राय: एक चौथाई गद्दियाँ गनेडीवालों की थीं। स्वामी विवेकानन्द को शिकागो में आयोजित धर्म सम्मेलन हेतु आर्थिक सहायता प्रदान करने का धर्मलाभ भी गनेड़ीवालो ने प्राप्त किया।

शिवाजी के राज्य में सैनिक आपूर्ति हेतु अफीम व खसखस मेवाड़-मालवा के क्षैत्र से दीव के चौउल बन्दरगाह से पहुँचती थी। शिवाजी की वसीयत की हुई सम्पत्ति में अफीम के दानें (खसखस) 100 कैण्डी तथा 100 कैण्डी अफीम दर्ज है। इससे प्रमाणित होता है कि शिवाजी अपने राज्य में आने वाले अफीम के व्यापारियों व अफीम मार्ग से परिचित थे। उन्हें मुगल सेनापति मिर्जाराजा जयसिह के दुराग्रह तथा मुगल सम्राट औरंगजेब की नियत का भी पता था अत: संकट के पूर्व उन्होंने सुरक्षित मार्ग का विकल्प तैयार कर लिया था।

इस मार्ग के चयन का अन्य कारण यह भी था कि आगरा में अप्रत्याशित रूप से अधिक समय तक ठहरने के कारण शिवाजी के पास धन की कमी पड़ गयी थी। इसका प्रमुख कारण यह था कि -

1. मुगल सम्राट के समक्ष अपनी बात रखने के लिये उन्हें दरबारियों की मुट्टियाँ गर्म करना पड़ती थी।
2. उन्होंने जयसिंह के पुत्र रामसिंह से 66,000/- रुपये की हुण्डी ली थी जिसका भुगतान राजगढ़ में उनके अधिकारियो को करना था।
3. उन्होंने आगरा से बहुत सी मुल्यवान वस्तुएँ क्रय की थीं, इससे बहुतसा धन इसमें समाप्त हो गया था।
4. अपने पास बचे धन को राजगढ़ पहुँचाने की दृष्टि से उन्होंने अपने खजाने का एक भाग मूलचन्द साहूकार के हरकारे को सौंप दिया था। शिवाजी के पलायन का समाचार सुनकर हरकारे मार्ग से वापस लौट आये व यह खजाना औरंगजेब द्वारा जब्त कर लिया गया।'
5. इस सब के बावजूद शिवाजी ने सन्यासी वेष में अपने दण्ड के मध्य भाग में रत्न और सुवर्ण मुद्राओ से ठूँस-ठूँस कर भर लिया था। कुछ द्रव्य जूतों में तथा एक हीरा व कुछ लाल नौकरो के कपड़ों में सी रखे थे।

शिवाजी आगरा के किले से दिनांक 19, अगस्त, 1666 को तीसरे पहर यानें 12 बजे से तीन बजे के बीच रदान्दाजखाँ (आगरा किले का अधिकारी) के घर के तहखाने से फरार हुए थे। उनके पलायन की जानकारी दि. 20 अगस्त, 1666 को प्रात: 11 बजे फौलादखाँ (अबीसीनियाई मूल का मुसलमान जो आगरा पुलिस का अध्यक्ष था) ने यह कहकर सम्राट को प्रदान की कि **'यह नहीं कहा जा सकता कि शिवाजी आकाश में उड़ गया अथवा धरती में समा गया अथवा उसने कोई जादू कर दिया।'**

शिवाजी को अपने प्रवास हेतु लगभग 24 घंटे का समय प्राप्त हो गया था। इसमें वे लगभग 6 घण्टे में 35 मील का सफर तय कर आगरा से मथुरा पहुँचे। यहाँ उन्होंने अपने पुत्र संभाजी की व्यवस्था की व सन्यासी का वेष धारण कर गनेडी की राह पकड़ी।

आगरा में अमर सिंह गेट के समीप छत्रपति शिवाजी महाराज की स्मृति में आयोजित कार्यक्रम के मुख्य अतिथि माननीय योगेंद्र जी उपाध्याय कैबिनेट मंत्री उत्तर प्रदेश को अपनी पुस्तक भेंट करते हुए श्री कैलाश चंद्र घनश्याम पांडेय।

गनेडी, मथुरा से लगभग 200 कि.मी. याने 125 मील पड़ता है। यहाँ से शिवाजी विराट नगर (23 मील 37 कि.मी. कोटपुतली बेवापाटन > गणेश्वर खण्डेला हर्ष > रैवासा होकर गनेड़ी पहुँचे होंगे। मेरी शोधयात्रा के दौरान आर्कियोलॉजिस्ट गणेश बेरवाल (सीकर, शेखावाटी) ने बताया कि 'गलियाकोट में जिस प्रकार तीन प्रान्तों की सीमा मिलती है उसी प्रकार गनेड़ी भी तीन रियासतों (जयपुर, मारवाड, बीकानेर) की सीमा पर स्थित था। गनेडी से होकर दो व्यापारिक मार्ग गुजरते थे। पहला मार्ग उत्तर से दक्षिण जानेवाला अमृतसर – काण्डला मार्ग जिस पर गनेडी से सांभर होकर काण्डला की तरफ जानेवाला जल मार्ग भी था। दूसरा अफगानिस्तान से सिंघ होकर गनेड़ी होता हुआ विराट नगर होकर मथुरा जाता था। यह प्राचीन 'कैमल रूट' या ऊँट मार्ग कहलाता था। नागौर के पश्चिम का व्यापारिक मार्ग तिल मार्ग कहलाता था यह गनेडी से खाटु, जायल दधिमती मंदिर, ओसियां, किराडू होकर गुजरता था। इन सभी मार्गों का गनेडी महत्त्वपूर्ण व्यापारिककेन्द्र था।

गनेडी के सेठ मायाराम मनसाराम गनेडीवाल नमक, अफीम व सिक्कों के व्यापारी थे। 'गनेड़ीवाला गौरव ग्रंथ' के प्रकाशक 85 वर्षीय हनुमानप्रसाद गनेड़ीवाला के अनुसार– '**शिवाजी के गनेडीवाला सेठों की हवेली पर आकर 3 दिन ठहरने के बाबत दो आधार पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं।** इस सम्बन्ध में जो तीसरा ऐतिहासिक आधारभूत प्रमाण तत्कालीन भाट द्वारा रचित एक कवित्त है–

सेवो चढ़ायो कढ़ायो उरंगजेब का महला माय।
रोजा को भूखो सर धूने जी बदशा मेहलां माय ।।
सेवो बैठो पहलाजी दूजे में जी बेठो जोगी पिटारी मांय।
बादशा की अकल फेरी भोला भंडारी जटा मांय ।।
सेवो करयो तीरथ बदशा की फूटी आंखा मांय।
मथुरा से सीधो आयो बैठा ने लेय गणेशर महादेवजी।
गुरु चेला ने गढ़ी गनेड़ी हवेली दाब राख्यिो मांय।।'

इस प्रकार छत्रपति द्वारा गनेड़ी होकर प्रवास करने के अनेक प्रमाण मिलते है –

1. चिरंजीलाल मुरारका (सेठ पूरणमल गनेडीवाला की पुत्री विशनीदेवी के प्रपौत्र, लक्ष्मणगढ़, जिला सीकर, राजस्थान) के संस्मरण।

2. कवित्त में मथुरा से गनेड़ी मार्ग के बीच **गणेश्वर महादेव** नामक स्थान का उल्लेख, जो वर्तमान में भी मौजुद है।

3. गनेड़ी से सीकर होकर दीव लगभग 930 कि.मी. याने 578 मील पड़ता है। याने आगरा से दीव तक की कुल दूरी लगभग 1200 किमी. याने 746 मील होती है।

4. शिवाजी का कवि कलश राजपूताना मार्ग से ही राजगढ़ के लिये रवाना हुआ था जो शाही सैनिको के द्वारा दौसा में पकड़ा गया था।

रायगढ़ से आगरा की दूरी सीधी रेखा में 670 मील यानें 1253 कि.मी. है। यह दूरी भले ही शिवाजी ने 68 दिन में पूरी की हो परन्तु शाही हरकारे इस दूरी को 11 दिनों में भी तय कर लेते थे। उन्होने मिर्जा राजा सवाई जयसिंह के द्वारा शिवाजी की पराजय का सदेश दिल्ली 11 दिनों में पहुँचा दिया था। सर यदुनाथ सरकार शिवाजी की वापसी यात्रा को 1000 मील की मानकर 40 मील याने 72 कि.मी. प्रतिदिन प्रवास के अनुसार 1000÷25 का सूत्र सुझाया है। जबकि वे पूर्व में यह भी लिख रहे हैं कि शिवाजी ने आगरा से मथुरा की 35 मील यात्रा मात्र छः घण्टों में तय कर ली।

श्रीहनुमानप्रसाद गनेडीवाला का कहना है कि गनेड़ी से दिल्ली ठीक 323 कि.मी. है व उन्होंने 09 दिन में यह दूरी पैदल अनेको बार तय की है। यदि एक साधारण मनुष्य 40 कि. मी. प्रतिदिन का सफर तय करता है तो जिसकी जान पर बनी हो वह सिर पर पैर रखकर ही भागता है। ऊँट मार्ग पर साण्डनी की सवारी से 100 कि.मी. यानें 75 मील प्रतिदिन सफर करे तो 1200 कि.मी. का सफर 12 दिन में आसानी से तय कर सकता है। इस प्रकार दीव से राजगढ़ पहुँचने के लिये शेष 12 दिन कुछ अधिक ही है?

मैरी इस खोज की पुष्टि में गरुडझेप मुहिम के संस्थापक मारुती (आबा) गोळे ने मुझे अवगत कराया कि '**उन्होंने महाराष्ट्र से दीव की समुद्री यात्रा के दौरान नाविकों के गीतों का श्रवण किया है जिसमें वे अपनी स्थानीय बोली में यह विचार प्रकट करते हैं कि उनके पूर्वजों ने शिवाजी महाराज को आगरा से लौटने के दौरान अपनी नाव से समुद्र की यात्रा करायी थी।**' इससे शिवाजी महाराज का समुद्री यात्रा कर राजगढ़ पहुँचना सिद्ध होता है। भावी इतिहास में **इस खोज को स्वीकार किया जाकर इस नवीन मार्ग की खोज पर अधिक शोधकार्य किया जाना अपेक्षित है।**

शिवचातुर्य दिवस के पंचम अभियान वर्ष में मुझे अपनी शोध को प्रस्तुत करने का जो अवसर प्रदान किया तदर्थ, में मुहिम **संस्थापक आग्रवीर श्रीमारूती (आबा) गोळे,** सस्था के अध्यक्ष **श्री राकेश विलासराव विधाते, श्री प्रमोदनाना भानगीरे** (शिवसेना प्रमुख, पुणे) तथा समर्थ गुरु रामदास एवं छत्रपति शिवराय प्रतिष्ठान, आगरा का आभार स्वीकार करता हूँ।

स्थान: राजा शिवछत्रपति स्मारक आग्रा श्रावण शुक्ल प्रदोष, विक्रम स.2081

लेखक– वरिष्ट इतिहासकार पुरातत्वविद् हैं।
सम्पर्क: श्री दशपुर प्राच्य शोध संस्थान नई आबादी, गोल चौराहा, मन्दसौर 458001 म.प्र. संपर्क–09424546019

■

पुस्तक समीक्षा

एक उम्मीद है दिये की तरह

पुस्तक विवरण–

पुस्तक शीर्षक : एक उम्मीद है दिये की तरह (कविता संग्रह)
लेखिका : मंजुला चतुर्वेदी
प्रकाशक : नीरज बुक सेन्टर, दिल्ली
पृष्ठ संख्या : 112
मूल्य : ₹225/–

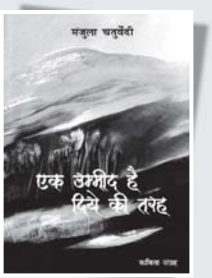

प्रो. ऋतु जौहरी

प्रो. मंजुला चतुर्वेदी का काव्य संग्रह मेरी दृष्टि में चित्रकार कवियत्री के शब्द बिम्ब हैं जो हवाओं के पन्नों पर अंतस के विस्तार के साथ मन की लेखनी से चित्रित किए गए हैं।'स्याही, कलम व मन लिखें तीनों जन' संग्रह की प्रारंभिक कविताएं पहाड़, नदियों, फूल, चाँद, आकाश के बिम्बों को उकेरती है जहाँ प्राकृतिक उपादानों का विस्तार मन मस्तिष्क को हमारे व्यवहारिक सामाजिक बंधनों से मुक्त करता जाता है दैनिक जीवन के क्रिया कलाप तो पृष्ठ बदलते ही विलुप्त हो जाते हैं और चित्त को अपने चिदाकाश में लिए चलती हैं।

लेखिकाः मंजुला चतुर्वेदी

मंजुला जी जैसे कोई पक्षी अपनी उड़ान पर है विस्तृत आकाश में और अपनी विहंगम दृष्टि से वन सम्पदा, जल सम्पदा व पुष्पों की लय व सौन्दर्य सुगन्ध को स्वयं में सुवासित कर रही हो। अमूर्त संवेदनाएं आकाश ढूंढ कर विचरण करने लगती है और उनके भूदृश्य चित्रों की तरह उनके शब्द बिम्ब मानों तूलिका से शब्दित होते जाते हैं।

वन का सौन्दर्य, पहाड़ों की अचल सौन्दर्य वृत्ति कानों में गुनगुनाने लगती है। गुरुदेव रविन्द्रनाथ टैगोर की प्रकृति के प्रति रहस्यात्मक व्याकुलता स्मरण हो जाती है उन्हे रूप के सागर में गोते लगाकार पार होना है तो इन्हे आकाश व पहाड़ अपनी ओर आकर्षित करते हैं।

पुनर्नवा कविता में पंच तत्वों का स्वरूप देखें पृ. 16 पर' घरती ढूंढती है अपने पहाड़,
नदियाँ घने हरे जंगल
ढूंढती है वह
अपना आकाश, चाँद और तारे
स्याह और कुछ उजली रातें
तलाशती है वह उन आँखो को
जिनके जल में देखती थी
अपने मनोहारी प्रतिबिंब
और अधर गीत गाते हुए..........
हवाओं के पन्नों पर
लिख रही है अब प्रेम लहरी
जिससे बनी रहे हरियाली
और उठती रहे हिलोर
स्पंदन की, सदियों तक
हमारे न रहने पर भी
आखिर प्रेम ही पूजा है
जीवन का महाभाव

इन कविताओं का आनन्द लेते हुए मैंने पाया कि प्रेम का स्फुरण है, उस पवित्र मधुर निस्वार्थ प्रेम का, फिर मैंने कुछ शब्दाकार चुनने का प्रयास किया कि यह तो नए-नए रूपाकारों के द्वारा वहन किया गया है जैसे प्रेम का प्रकाश स्तम्भ, नेह पथ, प्रेम की रीति, इबारतें प्रेम की, गुलाब तुम प्रेग धन, प्रेम कोश का नया अध्याय आँसूनामा, नदियों का नेह आवर्तन यानि प्रकृति का भी प्रेम राग.... ज्यामितिय सौन्दर्य भी है। वृत्त व अर्द्धवृत्त आदि।

पृष्ठ 26 पर अंकित है:–

............सच बहुत व्यापक है
सघन प्रेम-परिधि
हम देख पाते हैं इसका
एक कण ही जीवन गें
यह अनंत है अघोर है
बहुत छोटी है जीवन-देह
प्रेम के प्रकाश स्तम्भ के पास।
पृष्ठ 38 पर 'अर्धवृत्त' में
जिन्दगी के अर्धवृत्त उकेरती लेखिका
पूर्व वृत्त की चाह में शाल भंजिका
बन गई हैं दरख्त के साथ जो
मूर्तिकला के भारतीय सुन्दर नारी
रूप हैं जो प्रकृति की उर्वरता के
प्रतीक हैं।.........अंतत में शाल भंजिका सी
खड़ी रह जाती हूँ
कैद उसी दरख्त के
साथ प्रतीक्षा में,
स्थान और काल के सापेक्ष
देखते हुए अथाह जलराशि
और चहचहाती बत्तखो की
जलक्रीड़ा और जलबिंदुओ के
आवृत्त।

चिड़िया के रूप में अजन्मीं चिड़िया..... की पीड़ा द्रवित करती है, तो स्त्री का सृष्टि सृजन की आस में अंतिम यात्रा में मोती योनि में रखने की परंपरा कविताओं में बाल्यकाल की माँ के ममत्त्व की छटा भी आती है जो जीवन पर्यन्त स्पंदित ही रहती है हदय तल में। पिता का भी अहसास है उनकी कविता में।

चित्रकार या रंगकार के रूप में शागाल व मोगो का चित्र संसार भी बसा है अवचेतन में जहाँ चाँद झाँकता है तो राम कुमार का रूपविन्यास व डिस्टोर्शन आकारों के मध्य अन्तरिक्ष पाता है, तो साबवाला के चित्र भी शब्दो में घटित होने लगते हैं जो इनके चित्रो के प्रति भी उत्सुकता जगाते हैं। अतियथार्थ वादी हो जाना चित्रों के सृजन में न जाने किन बंधनो से हम मुक्त होना चाहते हैं या कल्पना की असीमित संभावनाओं के द्वार खुल जाते हैं।

पृष्ठ 28 पर 'आहट' शीर्षक कविता में-
चाँद ने अपने आने की
आहट दी है
बिखरने लगा है नीलवर्ण
धरा पर, उसके स्वागत में
बूँदे ठहर गईं
फूलों, पत्तियो और कोरों पर
जलज तैर आए हैं..............
याद आये हैं आज चित्र बहुत
शगाल और मीरो के
शगाल के चित्रों में
उतर आता है चाँद
लिखता है प्रेम कथाएँ
अपने अंतराल में......
कलाकार रामकुमार के चित्र शीर्षक कविता का सौन्दर्य देखें।
संयोजन के मूलाधार रंगों व रूपो की अमूर्त्तता के चित्रकार के अनुभव मानो चित्र सृजन की प्रक्रिया को जी रहे हैं।
आकार को बाँधते हैं आकार
रूप से बंधता है रूप
कहता है कहानी अपने होने की
नारी कहती है ग़रीबी और बच्चों की
कहीं-कहीं आदमी के साथ
रिश्ते की
अग्रभूमि से पृष्ठभूमि तक
पसरता है सन्नाटा...............

मैं भी एक चित्रकार हूँ तब मुझे भी उनकी प्रारम्भ में लाल रंग की दूरी समझ में आई और लगभग पाँच कविताएं लाल रंग पर है। प्रेम का उदात्त भाव एक परिमार्जन व परिपक्वता के बाद आता है या इस चित्त के उजास के लाल रंग को व्यक्त करनें में कोई कुंठा, हिचक, द्विभाव, असमंजस समाप्त हो जाता हैं और उसका मूल आनन्द समझ आते ही मन की देहरी पर मैं भी हो गई लाल हो जाता है। प्रभाववादी कलाकारों द्वारा व मातिस के द्वारा लाल रंग को बहिचक प्रयोग हमें भी लाल रंग की उजास व्यक्त कर देने को बल प्रदान करता है मैं भी यही सोचती हूँ कि इन कलाकारों ने कितने ही अन्तर्बोध में व्याप्त हिचक, असमंजस को चकनाचूर कर देनें का साहस प्रदान किया है और लघु चित्रों में भी इनका प्रयोग स्वीकारना होगा चित्रकार के इस साहस का। रंगों की प्रतीकात्मकता पर उत्तम कविता है। और यह चित्रकारो को भी साहस देगी अपनी बात सजग व सच्चे रूप में सौन्दर्य बोध की छवि को मूर्त मान करने का। छवि तो परछाई भी है पर इसे तो मन के निर्मल दर्पण में प्रदीप्त होना होगा दिए की तरह।
लाल रंग और मैं शीर्षक कविता...

चित्र सृजन में भी
फलक पर
मेरी नायिकाओं ने नहीं पहना
घाघरा या चोली लाल
न उतरा सूरज कभी
चमकता रहा चाँद
नीले आसमान में................
लाल ने फिर से दस्तक दी.........
अब लाल मेरे मन में
तन में, डूबी हूँ पूरी
लाल में
लाल हुई मैं
अब लय में गा रही
मैं भी हो गई लाल

गूदड़ी के लाल उपमा की अधिक आवश्यकता नहीं थी पर अनायास आ गयी होगी पंक्ति लिख दी गई। कुछ कविताओं में कोरोना काल की वीरानियाँ पसरी है, कही कुछ पीड़ाए हैं, वारिस परदेश में होनें की पीढ़ा से जूझते, पेरेन्ट्स तो कहीं बौद्ध भिक्षुणियों की सांसारिक जीवन जीने की ललक और चिड़िया की तरह गगन में उड़ने का उद्‌रण भी कुछ द्वार खोलतें हैं आडंबरो की मुक्ति में व वास्तविकता की मन की चाहो की।

मन, इन्द्रिया क्या बांध सकते हैं या बाड़ बनाई जा सकती है?

लेखिका उस अव्यक्त को मावस का चांद कहती है, पहाड़ों में विशाल झीलों में ढूंढती हैं और मर्त्त व अमूर्त दोनों है और अभावो में भी एक भाव मेरे महाभाव कहती है। वैचारिक सूक्ष्मता की पतली लकीरों से समझ सकते हैं लेखिका को जो कहीं मुझे उजली निराशा के भाव में भी प्रतीत होती है, अंधेरा क्यो प्रतीक्षारत है? क्या है? लिखती हैं
मैं देखने लगी हूँ अब
एक मछली को
रेत में समाधि लेते हुए
झील के उस पार

कविता संग्रह की शीर्षक कविता 'एक उम्मीद है दिए की तरह' तो कश्मीर की वस्तुस्थिति की पीड़ा से उपजी है।... पर कविता संग्रह का यह शीर्षक प्रो. मंजुला जी का जीवनपुंज है जो कविताओं और चित्रकृतियों के रूप में सूर्य के समान कलाजगत को आलोकित कर रहा है। हृदय तल से उनके सृजन वैशिष्ट्य का अभिनन्दन है जो प्रकाश का प्रसार है सांसारिक दाँव पैचों से अलग आत्मा को आनंद और उर्ध्वगामित करने की क्षमता रखता है। उम्मीद है इससे पाठक व श्रोता आलोकित होगें।

स्व का विस्तार हो।

इसी आशा व कामना के साथ

संपर्क : 34 Panchbatti Circle Jodhpur
मोबा. 9413329175

संकट में जनजातीय औषधि

आज के इस दौर में इन परंपरागत औषधियों को एक नयी चुनौती का सामना करना पड़ रहा है जिसमे वे सब दवाईयाँ शामिल है जो की आयुर्वेदिक दवाइयों के नाम पर बाज़ार में बिक रही हैं। दवाइयों के उत्पादन के नाम पर दवा कंपनियाँ जड़ी-बूटी जैसे प्राकृतिक संसाधनों को लूट रही हैं। इससे उन वन औषधीय पौधों का वजूद खतरे में पड़ रहा है जिसे पारंपरिक उपचारक अपनी औषधियाँ बनाने में उपयोग करते हैं। इस अपूरणीय क्षति रोकने हेतु पूर्व मे ठोस कदम उठाने होंगे, इसके अलावा वनों की कटाई से भी इसे बड़ा खतरा है। जनजाति समुदाय जंगल को ही अपना जीवन मानते हैं और इसलिए भी वे वनों की कटाई के खिलाफ विरोध प्रदर्शन भी करते रहे हैं। विकासशील देशो में जहाँ एक तिहाई जनसंख्या की आवश्यक औषधियों तक पहुँच नहीं है वहां एक वैकल्पिक उपाय के रूप में यह सुरक्षित, प्रभावशाली पारंपरिक औषधियां स्वास्थ्य देख भाल को बढ़ावा देने का एक महत्वपूर्ण जरिया बन सकता है। यह सुनिश्चित करने हेतु इसे प्रचलित स्वास्थ्य प्रणाली में सम्मिलित कर बेहतर रोगी कल्याण सुविधा को सुरक्षित कर पाएंगे।

इस तारतम्य में इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मानव संग्रहालय द्वारा एक सफल प्रयास सन 1998 में केरल के कोझीकोड में KIRTADS के सहयोग से किया गया था। बाद के वर्षो में इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मानव संग्रहालय द्वारा कई राष्ट्रीय शिविर संग्रहालय परिसर के साथ-साथ अन्य संस्थानों के सहयोग से देश के विभिन्न राज्यों मे आयोजित किये जाते रहे है। इस वर्ष यह राष्ट्रीय कार्यशाला 21 से 25 सितम्बर, 2024 को भोपाल में आयोजित की जा रही है जिसमें विभिन्न जनजाति उपचारक समुदाय जैसे - बैगा, भारिया, भील, डांगी, डोंगरिया कोंध, गोंड, हजोंग, कोल, कोलहा, कुडुम्बी, लांजिआ साओरा, लेपचा, मुंडा, नागा, ओराँव, सहारिया, थारू एवं जेमीनागा इत्यादि भाग लेंगे तथा पारंपरिक उपचार से अपनी कुशलता का प्रदर्शन करेंगे। इसके साथ ही वे अपने साथ लायी हुई पारंपरिक औषधियों के बहुमूल्य और महत्वपूर्ण संग्रह को भी प्रदर्शित करेंगे जिसे उन्होंने अपने पारंपरिक ज्ञान का प्रयोग कर संकलित किया है।

यह शिविर न केवल जनजातीय औषधियों के प्रचार-प्रसार में उपयोगी होगा बल्कि देश भर के जनजातीय उपचारको को एक दूसरे के संपर्क में बनाये रखने में भी मददगार सिद्ध होगा।

स्त्रोतः इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मानव संग्रहालय, भोपाल

स्वर्गीय उस्ताद सईदुद्दीन डागर की बरसी पर 20 अप्रैल 1939-30 जुलाई 2017 पर विशेष...

डागर घराने के

ज्योतिवाहक और स्तम्भ: स्वर्गीय उस्ताद सईदुद्दीन डागर

मुकेश कुंदन थॉमस

ग्वालियर में सन 1985 से 1990 के मध्य दिसम्बर या शायद जनवरी की सर्दियों में आयोजित तानसेन समारोह की एक रात्रिकालीन संगीत सभा समारोह के पण्डाल में पुआल और उसके ऊपर गद्दों पर जमकर बैठे ऐसे संगीत रसिक जिनकी आत्मा छक कर संगीत सुनने के बाद भी थोड़ा और... कुछ और सुनने को प्यासी रहती है। वो रात, जो कल शुरु में संगीत के झरने सी लग रही थी वो तीसरे प्रहर तक गहराते हुए कंठ और साज से निकलते स्वरों के सागर में तब्दील हो चुकी थी।

उस सभा के अंतिम गायक कलाकार के ध्रुपद गायन प्रस्तुति की उद्घोषणा कर, मैं मंच के पीछे कुछ दूरी पर बने ग्रीन रूम से उनके गायन को सुनने के इरादे से उठा। तानपूरे के स्वर अंतिम प्रस्तुति की भाव भूमी निर्मित कर रहे थे...। रात के गहन अधकार का चरम, अंतिम प्रहर की चौखट छू भौर की ओर अग्रसर हुआ जाता था। मैं अभी ग्रीन रूम में घुसा ही था कि हजरत मोहम्मद गौस और तानसेन की मजार के ऊपर धुंध भरे शीतल आसमान पर राग 'भैरवी' के पहले स्वर ने दस्तक दी। में बैठना चाह रहा था पर चाहकर भी बैठ न सका वे स्वर मुझे बाहर खींच लाए और अब मैं खुले आसमान के नीचे था। राग 'भैरवी' में निबद्ध ध्रुपद का आलाप धीमे-धीमे खिलते हुए आगे बढ़ रहा था और मैं मन्त्र मुग्ध हो. उन स्वरों में खोते चले जा रहा था।

मुझे ऐसा मेहसूस हुआ मानो..
मानो उस परिसर का कोना-कोना पावन दिव्य स्वरों से गूंज रहा हो।
तो कभी लगता कि जैसे वो अज़ान है,
तो कभी लगता वो जैसे... देवगान है।

दिव्यता और भव्यता में डूबे वे सच्चे, हृदय भेदी स्वर जिस महान गायक के कंठ से झर रहे थे वे थे शास्त्रीय संगीत और ध्रुपद गायकी परम्परा के अप्रतिम डागर घराने के स्तम्भ, उस्ताद सईदुद्दीन डागर।

तानसेन समारोह की उस संगीत सभा में सईद भाई ने रसिकों को अपने आत्मीय और दिव्य गायन से भाव-विभोर कर दिया। जिन लोगों ने उस रात और उस भोर में सईद साहब को सुना होगा उनके लिए नि:सन्देह वो...

अविस्मर्णीय अनुभव रहा होगा। मेरे लिए वो मेरे जीवन की सबसे खूबसूरत और सबसे आशीषित सांगीतिक सुबह थी। स्वरों की ईश्वरीय शक्ति की जीवन्त अनुभूति का, मेरे जीवन में घटित एकमात्र.. दुर्लभ उदाहरण।

ध्रुपद यूँ तो मर्दाना गायकी कही जाती है जो अपनी उद्वितीयता, जटिलता और गाम्भीर्य के लिए विख्यात है पर सच ये है कि ये... आत्मा की गायकी है,

तन उसका माध्यम जरूर है पर ये अंतर्मन से निकली ईश्वरीय आराधना है। पूजा है, इबादत है, आत्मा और परमात्मा का अनन्य वार्तालाप है
जो जिस्म को, देह को भूलकर और भुलाकर ही सम्भव है।

संगीत और गायकी को संसार भर में प्रचारित और स्थापित करने का श्रेय डागर बंधुओं और उनके होनहार शिष्यों को जाता है। भोपाल को ये सौभाग्य प्राप्त है कि उसने भारत भवन में 1982 में डागर घराने और उसके सात संगीतकार और भाईयों पर डागर सप्तक नाम से समूचा और अद्वितीय आयोजन किया था। कैसा अनोखा संयोग था...

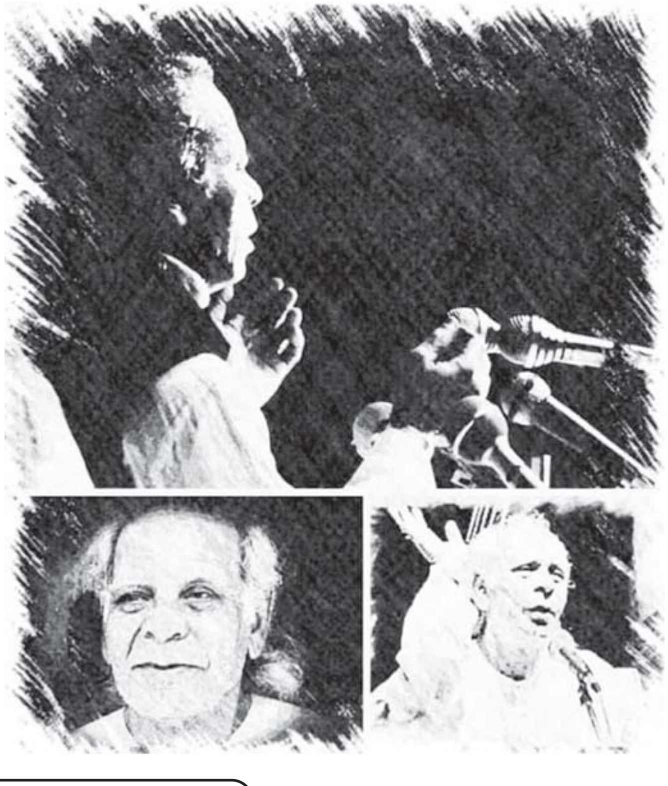

संगीत के सात स्वर और एक मंच पर एक ही परिवार के सात संगीतकार आई। सभी श्रेष्ठ, सभी अनुपम, सभी ध्रुपद गायिकी और संगीत के आदर्श।

20 अप्रैल 1939 को अलवर में जन्मे उस्ताद सईदुद्दीन डागर, ईश्वरीय वरदान प्राप्त डागर वाणी और डागर घराने के संगीतकार भाईयों में सबसे छोटे और सबसे अलग थे।

जितने प्रतिभावान, मीठे कंठ के धनी, महान गायक, उतने ही भोले, उतने ही सादगी पसन्द, उतने ही हँसमुख, विनोदप्रिय और जिंदादिल और उतने ही मित्रतापूर्ण व्यवहार के धनी। सईद भाई को हम संस्कृति विभाग के आयोजनों में न जाने कितने सालों से आमन्त्रित करने का प्रयास करते रहे, पर उनसे संपर्क ही नहीं हो पाता था।

न वे अपना फोन नम्बर अपडेट कराते थे और न ही अपने घर का पता।

तानसेन समारोह के लगभग 7-8 साल बाद टीकमगढ़ में आयोजित ध्रुपद समारोह' में मुझे उनसे एक बार फिर मिलने का मौका मिला। बड़ी मुश्किल से हम उन्हें उस समारोह में बुला पाए थे। वजह ये थी कि सईद भाई और उस्ताद नसीर अमीनुद्दीन डागर जैसे लोग, सन्त प्रकृति के साधक थे जिन्हें पब्लिसिटी, पैसा, शोहरत की भूख कभी नहीं रही। मन किया तो चले गए किसी समारोह में नहीं तो, स्वान्त: संगीत साधना ही उनकी जीवन शैली रही

माइक्रोफोन की संभावनाओं का पूरी तरह इस्तेमाल करने की सही समझ और उसके प्रति दुलार भरा बर्ताव रखने वाले वे बिरले गायक और संगीतकार थे।

जिन लोगों और रसिकों को सईद साहब को सुनने का मौका मिला हो उन सभी ने ये बात जरूर मेहसूस की होगी।

सईद भाई की ये खूबी उनके गायन कार्यक्रमों में हमेशा मेरा ध्यान खींचती थी।

टीकमगढ़ के सर्किट हाउस में हमने उनके ठहरने की व्यवस्था की थी मेरा और उनका कमरा अगल-बगल ही था। समारोह के बाद भोजन आदि से निवृत्त हो जाने के उपरान्त हमने उस रात कोई तीन-चार घंटे बातचीत की होगी। सिगरेट के वे बड़े शौकीन थे।

सईद भाई के खरज और गमक भरे मीठे गले का... वाह, वाह... क्या कहना।

दिल में उत्तर कर, दिल को गुंजा दे वैसी सम्मोहनकारी आवाज़। ये जो आप उनका ध्यान मग्न छाया चित्र देख रहे हैं उससे आपको उनके सांगीतिक व्यक्तित्व और संगीत की आराधना में रम जाने के जूनून की झलक तो मिल ही जायेगी। ये छाया चित्र शायद श्री रवि विलियम या गलती न करूँ तो श्री विजय रोहतगी ने मेरी अनाउंसमेंट टेबिल के पास खड़े होकर लिया था। (नीचे के दोनों चित्र गूगल से साभार)

मैंने अपने सांस्कृतिक जीवन में जिन दो लोगों को माइक्रोफोन को तकनीकी रूप से एकदम सही और बेहद कलात्मक तरीके से इस्तेमाल करते देखा है उनमें से एक हैं पण्डित जसराज और दूसरे थे हमारे सईद भाई। मज़ाल कि कोई बात चूक जाए, वे माइक्रोफोन के हर कोण और उससे दूरी और एकदम नज़दीकी का इतना खूबसूरत इस्तेमाल करते थे जिसे शब्दों में बताना कठिन है उसे साक्षात सुन कर ही मेहसूस किया जा सकता है।

मैंने उस रात उनके गायन के साथ-साथ उनके माइक्रोफोन इस्तेमाल करने की असाधारण योग्यता की खुल कर तारीफ की तो उन्होंने कहा- मुकेश भाई, घर पर रियाज के समय माइक्रोफोन न होने से कोई फर्क नहीं पड़ता पर जहाँ बड़े रसिक वर्ग के बीच गाना हो तो वहाँ तो भगवान् तक आवाज़ पहुँचाने में इसकी बहोत बड़ी भूमिका है। रसिकों को तो हम भगवान् का ही रूप मानते हैं न।

सईद भाई का मानना था कि माइक्रोफोन का सही होना और उसका सही तरह से इस्तेमाल करना हर कलाकार को आना चाहिए ये बात आपकी कला को निखारकर दिखाती है।

30 जुलाई रविवार 2017 की रात को नियति ने, हमारी गौरवशाली ध्रुपद संगीत परम्परा के महान साधक उस्ताद सईदुद्दीन डागर को हमसे छीन लिया, वे 78 वर्ष के थे।

संस्कारवान, दुर्लभ और सुगठित दिव्य गायकी के स्वामी और गुरु उस्ताद सईदुद्दीन डागर का इस संसार को छोड़ जाना विश्व संगीत की एक ऐसी महान क्षति है जिसे पूरा कर पाना असम्भव है। जब तक और जहाँ तक ध्रुपद संगीत जाएगा वहाँ तक उस्ताद सईदुद्दीन डागर का संगीत भी अपनी दिव्यता और अमर स्वरों के साथ उपस्थित होगा।

बस... वे न होंगे!

सादर नमन

'स्वच्छता का जो आंदोलन शुरू हुआ, अब वह एक महत्वपूर्ण पड़ाव पर आ पहुंचा है। हम गर्व के साथ कह सकते हैं कि राष्ट्र का हर तबका, हर, संप्रदाय, हर जाति, हर उम्र के मेरे साथी इस महाअभियान को आगे बढ़ा रहे हैं।'

- नरेन्द्र मोदी, प्रधानमंत्री

एक लंबे अरसे बाद प्रख्यात भरतनाट्यम और कुचिपुडी कलाकार, डॉ. यामिनी कृष्णमूर्ति चर्चा में आई:

अफसोस कि यह सूचना उनके इस पार्थिव संसार से विदा लेने की खबर थी

रीना सोपम

अगस्त 3, 2024 (रविवार) को दिल्ली के अपोलो अस्पताल में 84 वर्ष की उम्र में उन्होंने अंतिम साँस ली थी। और अगस्त 4 को उनके विद्यार्थियों तथा उनके प्रशंसकों के अंतिम दर्शन के लिए उनका शरीर दिल्ली के हौज़ खास स्थित उनके नृत्य प्रशिक्षण केन्द्र, नृत्य कौस्तुभ लाया गया।

यह एक भावुक क्षण था। विद्यार्थियों ने एक गुरु और अपने कला क्षेत्र का अभिभावक खोया था। लेकिन देश की शास्त्रीय नृत्य परंपरा की जो क्षति हुई थी उनके निधन से, ये कला मर्मज्ञ ही समझ रहे थे।

पद्म विभूषण तथा संगीत नाटक अकादमी सम्मान प्राप्त इस कलाकार ने देश के सांस्कृतिक इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ा था। बल्कि यों कहें कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जब देश राजनीतिक उथल-पुथल के साथ एक सांस्कृतिक अस्त व्यस्तता से भी जूझ रहा था, उस दौर में जिन इने-गिने कलाकर्मियों ने जो एक नया सांस्कृतिक परिवेश गढा था, उनमें अग्रणी रही थीं डॉ. यामिनी कृष्ण मूर्ति।

एक बड़ी सोच और वृहद दृष्टिकोण की कलाकार थीं वो और इसी सोच के तहत उन्होंने शास्त्रीय नृत्य क्षेत्र में कई कालजयी काम किए थे।

उनकी जीवन शैली, सोच और कला गतिविधियों से ये स्पष्ट होता है कि नृत्य उनके लिए मात्र एक कला शैली नहीं थी। बल्कि अपने नृत्य को उन्होंने देश की आध्यात्मिक परंपरा, सोच और दर्शन को विश्व स्तर पर प्रसारित-विस्तारित करने का माध्यम बनाया था।

स्वतंत्र भारत की वो पहली शास्त्रीय नृत्य कलाकार रहीं जिन्होंने दक्षिण भारतीय शास्त्रीय नृत्य को उत्तर भारत में विस्तार दिया था और देश के उत्तर-दक्षिण हिस्से के बीच एक सांस्कृतिक संवाद कायम करने में सफल रही थीं।

इतना ही नहीं, देश की भौगोलिक, सांस्कृतिक और भाषाई सीमा से परे जाकर उन्होंने इस नृत्य को वैश्विक पटल पर लाया था और इसे पूरी तरह स्थापित कर दिया था वहां। जैसा कि उस काल खंड के पत्र- पत्रिकाओं की खबरों से जानकारी मिलती है कि उनके कार्यक्रमों के बहाने भारत विश्व के सांस्कृतिक मानचित्र पर अपनी दखल बनाने में सफल रहा था।

यह वो दौर था जब भारत अपनी कला परंपरा और संस्कृति के माध्यम से विश्व में अपनी नई छवि गढ रहा था। सदियों के विदेशी शासन से मुक्त भारत अपनी असली पहचान की तलाश कर रहा था और दुनिया को इससे परिचित कराने की जद्दोजहद भी साथ- साथ ही चल रही थी।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर देश के इस सांस्कृतिक संघर्ष में डॉ. यामिनी कृष्णमूर्ति ने एक बड़ी भूमिका निभाई थी। उन्होंने अपनी नृत्य-मुद्राओं और भाव-अभिव्यक्ति के माध्यम से भारत की आत्मा और उसके मूल स्वरूप को स्पष्ट और व्याख्यायित करने का काम किया था और इस प्रयास में वो सफ़ल भी हुई थीं।

जहाँ तक अपने देश में उनकी सांस्कृतिक भूमिका का प्रश्न है, तो स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के दशकों में सामाजिक- सांस्कृतिक परिदृश्य पर अगर गहरी नज़र डालें तो ये स्पष्ट होता है कि डॉ. यामिनी कृष्णमूर्ति की वैश्विक भूमिका और गतिविधियों का असर देश के सामाजिक-सांस्कृतिक परिदृश्य पर भी पड़ा था।

उन दिनों प्राय: हर क्षेत्र के समाज में बेटियों को नृत्य सीखने की स्वतंत्रता नहीं थी और अगर कहीं इतनी छूट मिल भी गई हो तो इसके मंच प्रदर्शन पर रोक रहती थी। लेकिन यामिनी कृष्णमूर्ति की वैश्विक भूमिका की सूचना जैसे-जैसे देश में फैल रही थी, शास्त्रीय नृत्य के प्रति समाज का रवैया बदल रहा था और कई राज्यों-शहरों में नृत्य प्रशिक्षण संस्थान स्थापित हो रहे थे।

उसी दौर की देन है पटना की सांस्कृतिक संस्था, भारतीय नृत्य कला मंदिर जिसकी स्थापना 1963 में हुई और जहाँ सभी दक्षिण भारतीय शास्त्रीय नृत्य शैलियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई।

यहाँ एक बात गौर करने वाली है। ये संस्था हालाँकि बिहार की राजधानी पटना में बनी, लेकिन यहाँ उत्तर भारत के एकमात्र शास्त्रीय नृत्य शैली, कत्थक के प्रशिक्षण की कोई व्यवस्था नहीं की गई थी। इसका क्या कारण था, इस पर विचार करना जरूरी है।

लेकिन इस घटना से एक बात तो स्पष्ट है कि उस समय तक उत्तर भारतीय शास्त्रीय नृत्य के सामाजिक विस्तार और प्रतिष्ठा के लिए

किसी ने वैसा प्रयास नहीं किया था जैसा काम यामिनी कृष्णमूर्ति कर रही थीं दक्षिण भारतीय शास्त्रीय नृत्य शैलियों के लिए।

पूरे तौर पर देखा जाए तो देश के शास्त्रीय संगीत-नृत्य इतिहास में डॉ. यामिनी कृष्णमूर्ति का कद कई और कलाकारों से काफी ऊँचा और अलहदा है।

सन् 1940 (दिसम्बर 20) में आँध्रप्रदेश के मदनपल्ली में जन्मी, डॉ. यामिनी कृष्णमूर्ति एक संस्कृत विद्वान की बेटी तथा उर्दू भाषा और उर्दू अदब के जानकार की पोती थीं।

चूँकि घर में साहित्यिक वातावरण था, अत: कला के प्रति उनकी रुझान सहज थी। बड़ी छोटी उम्र से उन्होने भरतनाट्यम सीखना शुरू किया था। आज के चिन्नई शहर स्थित कलाक्षेत्र की संस्थापिका, रुक्मिणी देवी अरुण्डेल से ही उन्होने इस शास्त्रीय नृत्य का मार्गदर्शन लिया था। और बाद के वर्षों में कांचीपुरम एलप्पा पिल्लई, थंजवूर किटप्पा पिल्लई, दंडयूथापाणि पिल्लई तथा गौरी अम्मल से भी भरतनाट्यम और कुचिपुडी नृत्य सीखा था। साथ ही ओडिसी नृत्य की शिक्षा उन्होंने विद्वान गुरुओं, पंकज चरन दास और केलुचरण महापात्रा से ली थी।

लेकिन उनकी कला पिपासा केवल नृत्य तक सीमित नहीं रही थी। उन्होंने कर्णाटक संगीत की भी पूरी शिक्षा ली थी और वीणा वादन की भी साधना की थी।

इस तरह गायन,वादन और नृत्य, तीनों विधाओं में महारत हासिल करने के बाद उन्होंने नृत्य को अपना कार्यक्षेत्र चुना था और इस कला में सौदर्य बोध का जितना ध्यान रखा था, उससे कहीं अधिक सचेष्ट रही थीं वो भरतनाट्यम शैली की मूल परंपरा को कायम रखने के लिए।

उन्होंने विदेशों में तो अनगिनत कार्यक्रम किए ही, बल्कि देश के हर राज्य में वो जाती रहीं थीं कार्यक्रम के सिलसिले में।

बिहार में हालाँकि उनका कम आना रहा, लेकिन मुझे पटना में ही उनका कार्यक्रम देखने का सौभाग्य मिला था।

बिहार उन दिनों अपने सांस्कृतिक गतिविधियों की उँचाईयों पर था। राजधानी पटना तो दशहरा पर होने वाले कई दिवसीय संगीत-नृत्य समारोह के लिए मशहूर था ही। लेकिन यहाँ की अन्य सांस्कृतिक संस्थाएं भी बहुत सक्रिय थीं उन दिनों और उन आयोजनों में देश भर के नामी गिरामी कलाकार शामिल होते रहते थे। ऐसे ही एक आयोजन में वो पटना आईं थीं।

1970 के दशक में मेरे पिताजी, प्रो सी. एल. दास जो सरोद वादक तथा संगीत इतिहासकार भी थे, उन्होंने अपने कलाकार और संगीत प्रेमी मित्रों के साथ मिलकर एक संगीत समारोह आयोजित किया था। यह पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर का शताब्दी वर्ष था और इस अवसर पर पटना के श्रीकृष्ण मेमोरियल हौल में दो दिवसीय समारोह आयोजित किया गया था।

इस आयोजन में पद्म विभूषण से सम्मानित किशोरी अमोणकर शायद पहली बार पटना आईं थीं कार्यक्रम करने। और डॉ. यामिनी कृष्णमूर्ति को भी आमंत्रित किया गया था कार्यक्रम के लिए। शायद उनका भी पहला ही कार्यक्रम था यह पटना में। लेकिन तब तक वो देश से लेकर विदेशों तक एक विशिष्ट कलाकार रूप में स्थापित हो चुकी थीं।

पटना वो अपने पिता, एम राममूर्ति के साथ आईं थीं।

मुझे अच्छी तरह याद है कि उनके नृत्य कार्यक्रम से पहले उनके पिताजी ने भारत के शास्त्रीय नृत्य शैलियों इसकी उत्पत्ति और विकास पर एक लंबा भाषण दिया था। वे इस विषय पर धाराप्रवाह बोल रहे थे और बीच- बीच में दर्शक-श्रोताओं के बीच से आते शोर पर खीझ भी रहे थे। इसके बाद मंच पर आईं थीं यामिनी कृष्णमूर्ति और दो घंटे से अधिक समय तक भरतनाट्यम प्रस्तुत किया था उन्होंने।

लंबा कद, छरहरे शरीर पर भरतनाट्यम नृत्य की वेश भूषा, बड़ी-बड़ी आंखें और चित्र- खचित हस्तक-मुद्राएँ। मंच पर जैसे स्थापत्य कला का साक्षात् नमूना साकार हो गया था। मुझे महसूस हुआ जैसे दक्षिण भारत के मंदिरों में घूम रही हूँ।

इस कार्यक्रम को याद करते हुए डॉ. रमा दास, श्रृंगार मणि (सुर सिंगार समसद, मुम्बई) तथा अंबपाली पुरस्कार (बिहार सरकार) से सम्मानित बिहार की वरिष्ठ कत्थक कलाकार जिनके नृत्य कार्यक्रम से इस विष्णु दिगंबर पलुस्कर जयंती समारोह का उद्घाटन हुआ था, उन्होंने कहा कि इस आयोजन में जिसने भी डॉ. यामिनी कृष्ण मूर्ति को मंच पर देखा, उसे लगा मानों संग्रहालय में रखी मूर्तियां देख रहा हो।

'दरअसल वे दक्षिण भारत के मंदिरों में खचित मूर्तियों से बहुत प्रभावित थीं और उनकी हस्तक - मुद्राओं और भाव भंगिमाओं को उन्होंने हूबहू अपने नृत्य में उतारा था। चूँकि उत्तर भारत के मंदिरों में वैसी आकृतियां नहीं के बराबर हैं, अत: यहाँ के लिए ये एक नई बात थी,'।

रमा जी ने आगे कहा कि पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर जयंती समारोह में उनका डेब्यू परफार्मेंस हुआ था।

'और मेरी उम्र भी बहुत कम थी उन दिनों। उस समय तक मैंने बस कुछ स्थानीय भरतनाट्यम कलाकारों को ही देखा था। पटना के दशहरा संगीत समारोह में प्राय: कत्थक कलाकार ही शामिल किए जाते थे। अत: दक्षिण भारतीय शास्त्रीय नृत्य देखने का मौका कम मिलता था। और यामिनी कृष्ण मूर्ति सरीखे व्यक्तित्व को तो पहली बार देख रही थी। जो चित्रात्मक सौंदर्य उनके नृत्य में दिख रहा था, वैसा तो कभी देखा ही नहीं था मैंने। अत: एक कलाकार रूप में मेरे लिए भी ये एक नई बात थी।'

उन्होंने बताया कि उन दिनों कत्थक नृत्य में भी ऐसा चित्रात्मक प्रस्तुतिकरण बिलकुल ही नहीं होता था। 'आजकल कत्थक कलाकार कई मुद्राओं का प्रयोग करने लगे हैं। लेकिन उन दिनों तो बस सीमित मुद्राएं ही होती थीं इसमें। अत: यामिनी कृष्ण मूर्ति के नृत्य के इस पक्ष ने बहुत ही प्रभावित किया था मुझे भी।'

और अगली बार जब डॉ. यामिनी कृष्णमूर्ति पटना आईं तो यह चेतना समिति द्वारा आयोजित विद्यापति पर्व समारोह था। इस बार उनके पिताजी के साथ उनकी बहन, नंदिनी कृष्ण मूर्ति भी थीं उनके साथ। नंदिनी स्वयं एक कलाकार थीं और यहाँ कार्यक्रम देने ही आईं थीं।

पटना शहर के हार्डिंग पार्क जिसे अब वीर कुंवर सिंह आजादी पार्क कहा जाने लगा है, वहीं एक विशाल पंडाल के नीचे मंच बना था।

डॉ. रमा दास ने चेतना समिति द्वारा आयोजित इस समारोह की चर्चा करते हुए कहा, 'यहां एक बार फिर मुझे यामिनी जी के साथ मंच साझा करने का मौका मिला था। यह दो दिनों का समारोह था और पहले दिन मेरा कार्यक्रम हो गया था और अगले दिन उनका कार्यक्रम देखने मैं गई वहां। बहुत अच्छी तरह याद हैं मुझे उनकी भंगिमाएं और उनकी वेश भूषा। सुर्ख़ लाल रंग के कौस्ट्यूम में लिपटी जब वो मंच पर आईं तो विशाल पंडाल में मौजूद दर्शकों का हुजूम जैसे उन्हें देखने की हड़बड़ाहट में लगभग खड़ा सा हो गया था। एक बार फिर उनके पिता ने माइक्रोफोन के सामने खड़े होकर शास्त्रीय नृत्य और संगीत तथा भारत के अध्यात्म और दर्शन पर लंबी बात की। और यहाँ भी दर्शक दीर्घा से आती आवाजों ने उनका ध्यान खींचा था। लेकिन उनका संभाषण चलता रहा था और उसके बाद ही यामिनी कृष्णमूर्ति मंच पर आईं।'

डॉ. रमा ने आगे कहा, 'इस बार मैं कुछ गहराई से समझ पा रही थी उनके नृत्य को। बहुत सी नई बातें दिखीं यहाँ। अंग संचालन में एक परिमार्जन दिखा। बहुत ही संयमित और सुगढ़ जैसा। कहीं भी अभिनय या अंग संचालन की अतिशयोक्ति नहीं। साथ ही एक और बात जो पहले किसी और भरतनाट्यम कलाकारों के प्रस्तुतिकरण मे मैंने नहीं देखी थी,वो ये कि यामिनी जी अपने नृत्य में पूरे मंच को कवर कर रही थीं। ऐसा प्राय: कत्थक नृत्य में ही होता रहा था। इसके पहले जिन भरतनाट्यम कलाकारों को देखा था, वे सभी कलाकार प्राय: एक ही स्थान पर प्रस्तुति करते दिखे थे। हाँ थोड़ा आगे-पीछे जाने की प्रक्रिया दिखी थी। लेकिन प्राय: सभी एक ही जगह सीमित दिखे थे। इन सबसे अलग यामिनी जी को मैंने पूरा मंच कवर करते देखा। यानि उत्तर भारतीय शास्त्रीय नृत्य का प्रभाव भी था उनपर।'

इस आयोजन के बाद किसी अन्य मौके पर उनका पटना आना हुआ हो, ऐसा मेरी जानकारी में नहीं, रमा जी ने बताया।

हालाँकि पूरा कला जगत कायल था इस कलाकार की विलक्षण प्रतिभा का। लेकिन पिछले कुछ वर्षों में कहीं से भी उनसे संबंधित कोई सूचना नहीं आ रही थी ।

ताज्जुब है कि जिस कलाकार ने देश की सांस्कृतिक यात्रा को एक नई दिशा दी, उसका नया इतिहास गढ़ा और वो देश की राजधानी में ही कुछ महीने पहले तक कला क्षेत्र में सक्रिय रहीं, उन पर पूरा कला जगत क्यों चुप रहा? बल्कि सूचना तंत्र के सारे जरिए भी मौन रहे इस कलाकार के बाबत। और जब उस कलाकार ने एक स्थायी मौन धारण किया ब्रह्मलीन होकर, तभी ही तंद्रा टूटी पूरे कला समाज और इसके तंत्र की। अगस्त 3 (2024) को उनसे संबंधित जो सूचना आई, वह एक बड़ा शून्य छोड़ गई है अपने पीछे। कभी सोचें,

क्या जाने यह कलाकार अपने अंतिम वर्षों में कुछ साझा करना चाह रहा हों कला प्रेमियों संग? वो कुछ दुख-सुख की बातें हो सकती थीं या कुछ उपलब्धियों और संतोष का क्षण भी हो सकता था। या फिर अनुभवों का पिटारा ही कहीं खोलने की इच्छा रही होगी? कौन जाने वो क्या महसूस कर रही थीं उन दिनों? कौन कहेगा यह सब?

ऐसे कई सवाल उठ खड़े हो रहे हैं अब। लेकिन इन सबमें एक बड़ा सवाल ये है कि कौन सुनेगा अब यह सब? कभी सोचा है कि कब और कैसे इतनी उदासीनता भर गई समाज में अपने कला पुरखिनों के लिए, उनके द्वारा सींची गई कला परंपरा के लिए और उस रस पगे परिवेश के लिए जिसके सहारे हम अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी उपस्थिति दर्ज करा पाए थे? कभी सोचा है कि यह उदासीनता हमें किस दिशा में ले जाएगी?

लेखिका- वरिष्ठ पत्रकार तथा कला समीक्षक हैं।
सम्पर्क: 35/257, रोड नंबर-10ई पटना (बिहार)
मो. नं. 9334195556

आचार्यत्व की गरिमा से दीप्त पं दुर्गाचरण शुक्ल जी

प्रोफेसर सरोज गुप्ता

प्रात: स्मरणीय परमश्रद्धेय गुरुदेव आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल जी के 18 सितम्बर 2024 को देवलोकगमन पर मैं अपनी ओर से एवं बुंदेलखंड विश्वकोश योजना समिति के समस्त पदाधिकारी सदस्यों की ओर से शोक संवेदना व्यक्त करती हूँ। ईश्वर,गुरुजी को अपनी शरण में लें और शोक सन्तप्त परिवार को इस गहन दु:ख सहन करने की शक्ति व धैर्य प्रदान करे।

आचार्यत्व की गरिमा से दीप्त पं दुर्गाचरण शुक्ल जी का व्यक्तित्व और उनकी ऋषिकल्प अपार सृजनात्मक क्षमता हम सबको चमत्कृत और अभिभूत करती है। ऐसे प्रतिभा सम्पन्न आचार्य शताब्दियों में एक जन्म लेते हैं। आपकी बहुमुखी जीवन दृष्टि ने भारतीय वांग्मय के हिन्दी, संस्कृत के साथ पूरे युग को प्रभावित किया है। आप संस्कृत, अंग्रेजी, बुन्देली भाषा के मर्मज्ञ विद्वान,अगाध पाण्डित्य के साथ सहजता, सरलता का मणिकांचन संयोग रहे। महर्षि अगस्त्य, हयग्रीव दर्शन एवं ब्रह्मवादिनियों पर लेखनी चलाना उन्हें प्रज्ञा सम्पन्न एवं विशिष्ट मानव की श्रेणी में प्रतिष्ठित करता है। संसार के उच्चतम तत्वज्ञान को ,सनातन धर्म को, महती अध्यात्म विद्या को, मनुष्य के मन की ध्यानशक्ति से ब्रह्मतत्व व सृष्टि के विषय में जो तत्व आपने अपनी लेखनी से निसृत किये हैं वह अद्भुत हैं। भारतवर्ष तथा बुन्देलखण्ड क्षेत्र के विद्वतजन गुरुदेव के रचना संसार के प्रति न सिर्फ कृतज्ञ है अपितु इस ज्ञान ज्योति को प्रज्ज्वलित रखने के लिए कृतसंकल्पित भी है। श्रृद्धेय गुरुदेव पर वाग्देवी की असीम अनुकम्पा रही है उनके जन्म जन्मान्तरों के श्रेष्ठ कर्मों का सुफल भी यही है। आपने अपने जीवन को यज्ञमय बना कर ज्ञानाग्नि से साहित्यिक उपवन प्रकाशित व सुवासित किया है। नितनूतन भावों, विचारों की

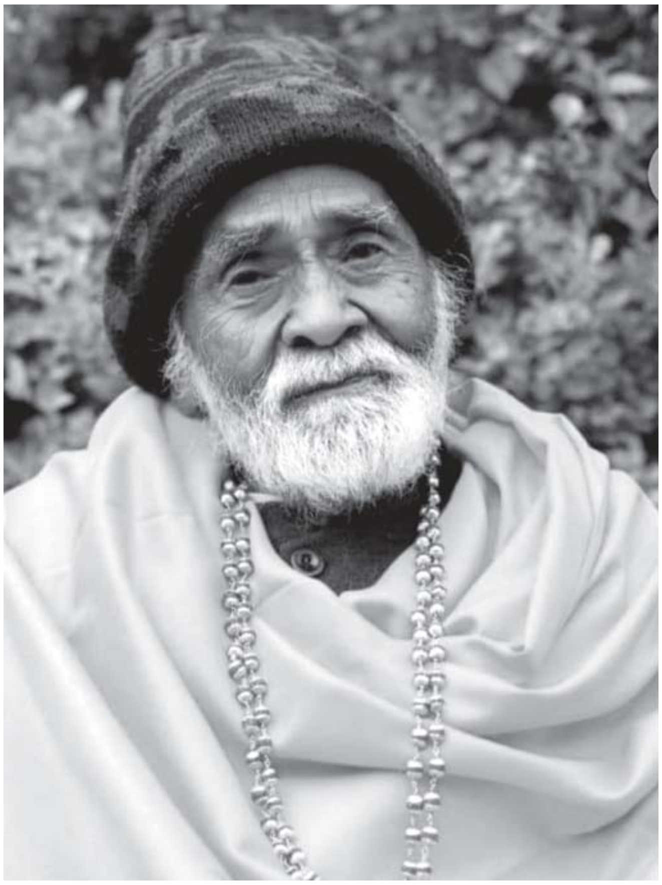

ज्ञानगंगा से शिष्यों को विद्यालाभ दिया है। हम सभी शिष्यगण अपने गुरुदेव पं दुर्गाचरण शुक्ल जी के अखण्ड प्रतापी तपस्वी,मनस्वी, तेजस्वी,वर्चस्वी तथा यशस्वी जीवन को सदैव स्मरण रखेंगे। उनके बताये मार्ग पर चलकर जीवन को सार्थक बनाने का प्रयास करेंगे।

अंत में गुरुदेव के भव्य दिव्य व्यक्तित्व पर महाकवि श्रीहर्ष का राजा नल के विषय में कथन सटीक प्रतीत होता है कि महान व्यक्तियों की जीवन गाथा पाठकों को न सिर्फ शांति प्रदान करती है अपितु उनके जीवन को पवित्र भी बनाती है। यथा----

पवित्रमत्रातनुते जगत्युगे, स्मृता रसक्षालन एवं यत् कथा।
कथन न सा यद् गिरिमाविलामयि, स्वसेविनीमेव पवित्रयिष्यति।

इत्यलम्

लेखिका- आचार्य पं. दुर्गाचरण शुक्ल की वरिष्ठ शिष्या है।
सम्पर्क : प्राचार्य पं दीनदयाल उपाध्याय शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय सागर (मप्र) पिनकोड 470001

डूब गया संगीत का एक और नक्षत्र

डॉ. राजेन्द्र कृष्ण अग्रवाल 'रजक'

डॉ. मुकेश गर्ग के निधन से संगीत और साहित्य-जगत की अपूरणीय क्षति हुई है। लगभग सात वर्षों की लंबी अवधि तक फेफड़ों में कैंसर जैसी असाध्य बीमारी के चलते उनका विगत 28 अगस्त 2024 को फोर्टिस शालीमार अस्पताल में दोपहर 1:45 बजे निधन हो गया। उनकी अंत्येष्टि निगम बोध घाट कश्मीरी गेट, दिल्ली में यमुना किनारे रात्रि को की गई।

विश्वविख्यात् हास्यकवि काका हाथरसी के छोटे भतीजे मुकेश जी एक प्रखर संगीत-चिंतक और समीक्षक थे। अनगिनत साहित्यिक और सांगीतिक गोष्ठियों में उनके व्याख्यान आदि होते रहते थे। हिंदी-काव्य के रीति-काल पर उनका गहन अध्ययन और चिंतन था और वह साधिकार अपनी बात रखते थे। संगीत के सौंदर्य-शास्त्र पर भी उनकी गहरी पकड़ थी। स्त्री-वादी चिंतन पर उनकी व्यापक दृष्टि थी। संगीत कार्यालय से प्रकाशित देश की सबसे पुरानी मासिक पत्रिका 'संगीत' के लंबे समय तक संपादक रहे और उसके प्रधान संपादक और अपने अग्रज डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग के कंधे-से-कंधा मिलाकर साथ देते रहे।

अपने गृह-नगर हाथरस से इंटरमीडिएट कर डॉ. मुकेश गर्ग ने दिल्ली विश्वविद्यालय के अलीपुर स्थित श्रद्धानंद कॉलेज से हिंदी-साहित्य में एम.ए.और एम. लिट्. तक की उपाधियां प्राप्त कीं। फिर उनका हिंदी-साहित्य के उपाचार्य पद पर चयन हो गया और प्रतिभा के बल पर जल्द ही विद्यार्थियों के चहेते भी बन गए।

यदि हम यह देखना चाहें कि हिंदी-साहित्य और संगीत में से मुकेश जी किस विषय पर अधिक अधिकार रखते थे तो हम पाते हैं कि भले ही उन्होंने जीवन के लगभग साढ़े चार दशकों तक हिंदी-साहित्य में अध्यापन-कार्य किया किंतु हिंदी-साहित्य से भी कहीं अधिक ख्याति उन्होंने संगीत की दुनिया में अर्जित की। संगीत के विविध पक्षों को लेकर उनका अपना अलग ही दृष्टिकोण था। वह एक कुशल संगीत-समीक्षक के रूप में विख्यात् थे। वह अपनी हर बात को बड़ी ही बेबाकी से रखते थे। तार्किक इतने थे कि कोई कितना भी तर्क-वितर्क करे, अपनी बात मनवाकर ही मानते थे। उनकी पैनी दृष्टि संगीत के सूक्ष्मातिसूक्ष्म पक्षों पर रहती थी और फिर जिस तरह से एक-एक पक्ष को अपने नीर-क्षीर विवेक से उजागर करते थे, उसकी सहज ही किसी से तुलना नहीं की जा सकती। यही कारण रहा कि दिनमान और नवभारत टाइम्स जैसे पत्रों में वे लंबे समय तक लिखते रहे। आकाशवाणी और दूरदर्शन केद्रों पर भी विशिष्ट कलाकारों के साक्षात्कार आदि के लिए उनको कई बार बुलाया गया। मुकेश जी ने बचपन में ही अपने अग्रज डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग से सितार और तबला सीखना शुरू कर दिया था। बाद में वायलिन का भी प्रशिक्षण प्राप्त कर उसमें भी एम. ए. किया। मुकेश जी ऐसे प्रतिभाशाली व्यक्ति थे कि किसी भी गीत को सुनकर उसकी स्वरलिपि लिख दिया करते थे। यही नहीं, वह उसमें प्रयुक्त वाद्य यंत्रों पर दिए गए संगीत तक का नोटेशन कर दिया करते थे। वह आकाशवाणी के म्यूजिक ऑडिशन बोर्ड के भी कई साल तक सदस्य रहे। कालिदास सम्मान, तानसेन सम्मान और कुमार गन्धर्व सम्मान हेतु निर्णायक मण्डल में भी वह कई वर्ष तक सदस्य रहे। दूरदर्शन और आकाशवाणी से उनके अनेक फीचर और साक्षात्कार भी प्रसारित हुए। दूरदर्शन धारावाहिकों और टीवी फ़िल्मों में भी संगीत निर्देशन किया। आईसीसीआर के मध्यम से हिंदी पीठ (चेयर) की स्थापना हेतु उनको 2010 से 2012 तक

अज़रबैजान (रूस)भेजा गया जहां उन्होंने प्रो़फ़ेसर और हिंदी विभागाध्यक्ष के रूप में अपनी सेवाएं दीं।

उन्होंने सन् 1988 में उभरते हुए युवा कलाकारों को मंच प्रदान करने के उद्देश्य से जब 'संगीत-संकल्प' नामक संस्था की संकल्पना की, वह कई बार मेरे यहां आए और हम लोगों के साथ बैठकें कीं। यही नहीं, यहां उन्होंने माथुर चतुर्वेद संस्कृत महाविद्यालय के सभागार में एक भव्य संगीत का कार्यक्रम भी आयोजित किया। उसकी अपार सफलता से ही हम लोगों ने उस दिन अंदाज़ा लगा लिया था कि यह संस्था एक दिन बहुत ख्याति अर्जित करेगी। देशभर में जिस गति से तमाम संगीतज्ञ और संगीत-संस्थान संगीत संकल्प से जुड़े, वह एक मिसाल है। अब तो विदेशों तक भी इसकी शाखाएं बननी प्रारंभ हो गई थीं।

मेरी मुकेश जी से साधारण जान-पहचान तो सत्तर के दशक के प्रारम्भ में ही हो गई थी किंतु उनके दिल्ली रहने के कारण मुलाकातें कम ही हो पाती थीं। अस्सी के दशक में जब ब्रज कला केन्द्र की राष्ट्रीय कार्यकारिणी का मैं सचिव बना और ब्रज संगीत विद्यापीठ की स्थापना के साथ ही उसका भी मुझे सचिव बना दिया गया तो मैंने चुन-चुनकर देशभर के सभी संगीतज्ञ मित्रों की सहायता ली। संगीत कार्यालय, हाथरस से मेरे पुराने संबंध थे ही और सौभाग्य से काका हाथरसी जी के सुपुत्र डॉक्टर लक्ष्मीनारायण गर्ग जी से मेरे बेहद करीबी संबंध होने के कारण मुकेश जी को भी मैंने अपने साथ ले लिया।

मुझे आज भी अच्छी तरह से याद है कि जब भी मुकेश जी से मैंने किसी विशेष मीटिंग में पधारने का अनुरोध किया, वे किसी भी प्रकार समय निकालकर आ ही जाते थे। कई बार मैंने उनको इस रूप में भी कष्ट दिया कि आप डॉक्टर सुमति मुटाटकर जी से अथवा श्रीमती सुलोचना बृहस्पति जी से मिलकर मीटिंग की तिथि और समय निश्चित कर लें तो ऐसे कार्य वे सहज ही निबटा लिया करते थे। इस प्रकार इन संस्थाओं में लगातार डेढ़ दशक तक मेरे कंधे-से-कंधा मिलाकर मुकेश जी मेरे अनन्य सहयोगी बने रहे।

इसी प्रकार जब ब्रज संगीत विद्यापीठ की परीक्षाओं का प्रारंभ हो गया तो सन् 1988 में मैंने तय किया कि विद्यापीठ की पत्रिका का प्रकाशन भी क्यों न प्रारंभ कर दिया जाए तो सबसे पहले मैंने जिन चार लोगों को फोन कर लेख भेजने के लिए सहयोग मांगा उनमें डॉक्टर लक्ष्मीनारायण गर्ग, प्रोफेसर भगवतशरण शर्मा, प्रोफेसर विश्वनाथ शुक्ल और डॉक्टर मुकेश गर्ग पहले चार नाम थे और सभी ने मुझे तुरंत लेख भेजकर उपकृत किया।

मुझे इन संस्थाओं में आएदिन होने वाले कार्यक्रमों के अतिरिक्त वर्षभर में दो-चार बड़े आयोजन भी करने पड़ते थे। उनमें मुकेश जी आते रहते थे और सभी कलाकारों के साक्षात्कार आदि भी अवश्य लेते थे। विशेषकर लोक संगीतकारों के साक्षात्कार लेते समय तो वह इतना हंसाते थे कि हंसी रोके नहीं रुकती। एक बार जब वह एक मंडली के कलाकारों का श्रीकृष्ण जन्मस्थान के अंतरराष्ट्रीय विश्राम गृह में साक्षात्कार ले रहे थे तो एक कलाकार दूसरे कलाकार से गाने के बीच में ही कहने लगा कि 'तू लैकट है गओ ऐ रे।' उस समय हम दोनों जैसे ठहाके लगाकर हंसे, लगता है कि कल की सी ही बात है। तब मैंने कहा कि इसका मतलब है कि वह कलाकार लय से बे-लय हो गया है।

अब जबकि मैं डॉ. मुकेश जी ब्रज संगीत विद्यापीठ के विगत डेढ़ वर्ष से अध्यक्ष थे और मैं कार्यकारी अध्यक्ष, उनकी अस्वस्थता के चलते भले ही वह कोई सक्रिय योगदान नहीं दे सके, पर लगता था कि एक अग्रजतुल्य भाई का मेरी पीठ पर वरद् हस्त तो है। अभी दो माह पूर्व ही मैंने पहली बार विद्यापीठ के कुलपति पद का भी कार्यभार सम्हाला है। किन्तु डॉ. मुकेश जी का साथ छूट जाने से बहुत अकेलापन अनुभव कर रहा हूँ।

जहां तक 'संगीत' मासिक पत्रिका की बात है, मैंने जबसे संपादक का दायित्त्व सम्हाला है, उसके वह मुख्य परामर्शदाता थे। अपनी लेखनी से भी बराबर हमें उपकृत करते रहते थे। 'संगीत' पत्रिका और संगीत कार्यालय हाथरस परिवार को उनकी कमी सदैव खलेगी।

मैं संगीत कार्यालय हाथरस परिवार, 'संगीत' परिवार, 'कला समय' परिवार, भोपाल, बन्धु संगीत महाविद्यालय परिवार, दिल्ली, ब्रज कला केन्द्र, ब्रज संगीत विद्यापीठ और डॉ. राजेन्द्र कृष्ण संगीत महाविद्यालय एवं शोध-संस्थान, मथुरा सहित भारत भवन कल्चरल ट्रस्ट, मथुरा की ओर से दिवंगत महान् आत्मा की अक्षय शांति हेतु परम् पिता परमेश्वर से प्रार्थना करता हूँ। वह जहाँ भी हों, नादानंद में लीन रहें।

लेखक- संगीतज्ञ/कवि/लेखक/संपादक हैं।
सम्पर्क: 94 'संगीत सदन' महाविद्या कॉलोनी, द्वितीय चरण, मथुरा- 281003 (उ.प्र.) मोबा. 9897247880/8851402815

■

डायरी में दर्ज प्रौढ़ उम्र की स्मृतियाँ

डॉ. महेन्द्र भानावत

वह घड़ी और अलामः

घटना सन् 1965 की है। सुबह उठने में देरी हो गई। देखा तो घड़ी का अलार्म ही नहीं बजा। कमरे के बाहर आकर पत्नी से इसकी चर्चा कर रहा था तो पास के कमरे से लाभचन्द बासा बाहर आये। बोले, 'बापू मैंने आपका क्या बिगाड़ा जो सुबै-ही-सुबै मुझे अलाम कह रहे हो।'

बासा की बात सुन मैं सुबै-ही-सुबै कुछ नहीं बोला। पत्नी भी सकपका गई कि आज बासा को क्या हो गया जो ऐसी बात कही। चाय पीते ही हमारा दिमाग यही सोचता रहा कि ऐसी कोई बात नहीं हुई पर बासा ने भी कुछ कहा तो सोच समझ कर ही कहा होगा पर हमें कोई समाधान नहीं मिल रहा था।

भोजन कर मैं ऑफिस जाने को तैयार हुआ तभी पत्नी बोली, 'घड़ी लेते जाओ, अलार्म जो ठीक करानी है।' पत्नी के यह कहते ही मुझे समाधान मिल गया। दरअसल पत्नी का अलार्म शब्द सुनते ही याद आया कि बासा भ्रमवश ही अलार्म को अलाम समझ बैठे।

मैं पत्नी को लेकर बासा के पास गया और उनकी शंका का समाधान करते क्षमा मांगी। बासा बोले, 'क्षमा तो मुझे मांगनी चाहिए कि गलतफहमी का शिकार मैं हुआ।'

मूंफली की कुतर-कुतरः

बीकानेर के सेठिया जैन हॉस्टल के कमरे में होमवर्क करने के बाद कोई ग्यारह बजे सो गये। कोई घण्टे भर बाद चूहे की कुतर-कुतर जैसी आवाज आई। चार में से हम तीन साथी परेशान हो गये। थोड़ी आहट करते ही कुतर-कुतर बन्द और फिर थोड़ी देर बाद पुनः शुरू।

ऐसा करते रात की डेढ़ बज गई। दीया लेकर हम इधर-उधर चूहा ढूंढने लगे पर बहुत खोजबीन करने पर भी निराशा ही हाथ लगी। नतीजतन जैसे-तैसे चुपचाप सोगये। सुबह हम तीनों को कॉलेज नहीं जाना था पर वह चौथा साथी चूंकि दूसरे कॉलेज में पढ़ता था सो चला गया।

तीनों मिलकर रात की घटना याद करते-करते समाधान खोज रहे थे कि अचानक हमारी निगाह कमरे के ऊपर लगी पट्टी की टांड पर गई जिस पर लोहे की पेटी रखी हुई थी। हमने धीरे से उस पेटी को नीचे उतारी और देखा तो वह मूंफलियों से आधी भरी हुई थी। हमें समझने में कोई देरी नहीं लगी कि वह साथी रात के अन्धेरे में रजाई के भीतर मूंफली छिलकर खा रहा था। हम उसे चूहे की कुतर-कुतर समझ गये। ज्योंही हम चूहे को ढूंढने की हरकत करते वह मूंफली खाना बन्द कर देता और शान्त वातावरण पाकर पुनः छिलके उतार खाना शुरू कर देता।

हमारे पर शैतानी चढ़ आई। सोचा क्यों न इन सारी मूंफलियों का ही कायाकल्प कर दिया जाय। यद्यपि हमारा यह सोच ठीक नहीं था पर हमें उस साथी को सबक देना था कि जब सभी साथ रहते हैं तो प्रसाद की तरह ही सही, सबको उसका हिस्सा मिलना चाहिए।

हमने यही किया। दो-तीन घण्टे में हम आराम से पूरी मूंफलियों को छीलते खाते रहे और उसी पेटी में सारे छिलके भरकर उसे बड़े करीने से जहाँ वह रखी हुई थी, ऊपर रखदी।

दो रूपये में लाईटः

मैं कोई दस साल उदयपुर में उस ऊंची घाटी पर रहा। पीछे उससे भी ऊंचा टिम्बा था। मकान मालिक बम्बई से आगे व्यापार करता। जब आता माह-दो माह रूकता।

मैंने पास-पास के दो कमरे किराये ले रखे थे। दस-दस रूपया किराया और दो-दो रूपया लाईट चार्ज। तब रूपये की बड़ी कीमत थी। डेढ़ सौ तो कुल तनख्वाह ही थी सो सोचा एक ही कमरे की लाईट पर्याप्त है। मालिक-मकान को इसकी सूचना दे दी। वह राजी होगया।

जब वह किराया वसूलने आया तो मैंने बाईस रूपया दे दिया। वह बोला, 'दो रूपये और चाहिए।' मैं बोला, 'लाईट तो एक कमरे में ही जलाई।' वह बोला, 'आपका कहना सही है। मैं मानता हूं पर जिस कमरे की लाईट बन्द रखनी थी, उसकी जलाई और जिसकी जलानी थी उसकी बन्द रखी। यह तो गड़बड़ ही है ना!'

मालिक छुट्टियों में आया था। उसके पास और कोई काम नहीं था। मेरी समझाइश व्यर्थ रही। मैं कब तक भैंस के आगे तन्बूरा बजाता। सो हाथ जोड़ दो रूपये नजर किये। बोला, 'अब आगे ऐसी गलती नहीं करूंगा।'

सिर दर्द की मालाः

पत्नी को वर्षों तक सिर दर्द रहा। यह सुई की नोक जितनी जगह पर असह्य दर्द लिये था। कई इलाज कराये पर रूकने का नाम नहीं ले रहा था।

एकदिन साहित्य संस्थान में मैंने प्रहलादनारायणजी से जिक्र किया। दिन का ब्रेक हुआ। मैं उन्हें लेकर घर आया। नाल चढने पर पत्नी

ने किंवाड़ खोला। प्रहलादनारायणजी ने पूछा, 'बाईजी, अभी आपको सपना आया।' पत्नी ने 'हां' कहा तो वे बोले, 'प्रतिदिन पदमप्रभुजी की माला फेरा करो।' मैंने कहा, 'चाय फिर बनाना। पहले एक माला फेरलो।' पत्नी ने माला फेरी फिर कहा, 'मेरा दर्द जाता रहा।'

यह सुन प्रहलादनारायणजी को आत्मतोष हुआ। बोले, 'माला बन्द मत करना।' तब से जब तक पत्नी (सन् 2000) रही, कभी उसे सिर दर्द नहीं हुआ। तब से मैं भी एक माला पदमप्रभुजी की प्रतिदिन फेर रहा हूं। मैं ही नहीं, बहू रंजना भी प्रतिदिन यह माला फेर रही है।

फोकट कविसम्मेलन:

राजसमंद में मुनिजी के सान्निध्य में एक विशाल नोहरे में कविसम्मेलन का आयोजन किया गया था। उदयपुर से नंद चतुर्वेदी, प्रकाश 'आतुर', भगवतीलाल व्यास, शंकर 'क्रन्दन' चन्द्र गंधर्व, वृद्धिशंकर त्रिवेदी 'शिल्पी', पुरुषोत्तम छंगाणी तथा मैं उसमें भाग लेने पहुंचे।

कविसम्मेलन का जोरदार प्रचार होने से श्रोता समुदाय की भारी रेलमपेल उमड़ पड़ी। दो-एक कवि बोले कि हमें ऐसा भान हुआ कि आयोजक महोदय ने समाज पर अपनी धाक जमाने के लिए यह कह दिया कि सारे कवि मेरे अपने परम मित्र हैं सो बिना पारिश्रमिक के काव्यपाठ करने चले आये हैं।

नंद चतुर्वेदी ने कहा, इतनी दूर से आकर आधी रात तक श्रोताओं को कविताएं ऐसे ही सुनाते रहेंगे तो घरवालियों को क्या जवाब देंगे। राय बनी कि फटाफट एक पेरोडी बनाकर सबको ऐसी नसीहत दी जाय कि आगे कोई ऐसा करने का साहस न करे।

इसके लिए फक्कड़ कवि शंकर 'क्रन्दन' को तैयार किया गया। उनसे यह पेरोडी सुनवाई-

जो जैसा बोवेगा वो वैसा काटेगा।
कोई क्या करले जब थूंक कर चाटेगा।।
कान खोल कर सुनलो कवि क्रन्दन यों कहता है।
फोकट कविसम्मेलन ऐसा ही होता है।।

यह सुन श्रोताओं में भगदड़ मच गई। आयोजकों के मुंह उतर गये। मुनिश्री हतप्रभ रह गये और कविगण ने सभा विसर्जित कर दी।

सम्पर्क : 904, आर्ची आर्केड, राम-लक्ष्मण वाटिका के पास,
न्यू भूपालपुरा, उदयपुर-313001
मो. 9351609040

कविता

बांग्लादेश में नरसंहार

महेश श्रीवास्तव

जन्मतिथि - 27 दिसम्बर 1942
जन्म स्थान- ग्राम तलेन, जिला राजगढ़ म.प्र.
वरिष्ठ पत्रकार, साहित्यकार तथा मध्यप्रदेश गान के रचयिता तथा अखिल भारतीय भारत भाषा भूषण सम्मान, माखनलाल चतुर्वेदी पुरस्कार, मध्यप्रदेश शासन का गणेशशंकर विद्यार्थी राष्ट्रीय सम्मान, राष्ट्रीय आदित्य सम्मान सहित कई सम्मान प्राप्त। वर्ष 2005 से 2013 तक वे मध्यप्रदेश शासन की प्रदेश स्तरीय राष्ट्रीय एकता समिति के उपाध्यक्ष (राजमंत्री का दर्जा) भी रहे हैं।
सम्पर्क : 7, पत्रकार कॉलोनी, मुख्य मार्ग क्रमांक 3 भोपाल म.प्र. - 462003 मो. 9425006180

वहां छा गया है
कट्टर धर्मांधता का क्रूर अंधकार
मांद से निकल आए हैं हिंसक जानवर
करने अहिंसक जीवों का निर्मम शिकार
खुल गए हैं भेड़ियों के जबड़े
गिद्धों चमगादड़ों के चोंच और पंजे
चिथड़े चिथड़े कर दी गई है मासूम चिड़ियायें
नोच कर खाने लगे हैं जंगली कुत्ते
अपना जीवित शिकार।
प्रार्थना का सर तन से जुदा कर
घोंप दी गई भरोसे के सीने में तलवार
संबंधों की चिता बनाकर लगा दी गई आग।
झूम रहे हैं रक्त पिपासु
गर्भिणी करुण चीत्कार
नन्हे शिशुओं का आर्तनाद
निरीहों का हाहाकार
लगते थे जो अपने
बन गए दैत्य और पिशाच।
वैसे
शाकाहारी भी होते बलवान
पर बने रहते दयावान
फेरते रहते विश्व बंधुत्व की माला
बांटते रहते करुणा, प्रेम, क्षमा का ज्ञान
सीखे नहीं इतिहास से
न बिना शस्त्र बचते हैं शास्त्र
न बिना पुरुषार्थ बचते हैं धन, धर्म, प्राण
जो लड़ते नहीं भागते
बचाने नहीं आता उन्हें भगवान।
समय की सुनो
जागो, उठो, एक हो जाओ
दैत्यों को दिव्यता दिखाओ
पशुओं पर पाशुपत चलाओ।
साहस दिखाओ
जीतने के लिए ही नहीं
जीवित रहने के लिए भी
या लड़ते हुए
वीरगति पा सकने के लिए भी।

आयोजन

मंदसौर में मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी द्वारा
डॉ रघुवीर सिंह स्मृति समारोह व्याख्यान एवं रचना पाठ समारोह संपन्न

डॉ रघुवीर सिंह का इतिहास और साहित्य के क्षेत्रों में अतुलनीय योगदान हमारी धरोहर...

अपनी मातृभाषा के प्रति संवेदनशील एवं जीवन मूल्यों के पोषक थे साहित्यकार डॉ रघुवीर सिंह: निदेशक डॉ विकास दवे

साहित्य अकादमी मध्य प्रदेश संस्कृति परिषद का साहित्यकार डॉ रघुवीर सिंह स्मृति समारोह व्याख्यान एवं रचना पाठ कवि सम्मेलन मंगलवार को नगर पालिका सभागार में मध्यप्रदेश साहित्य अकादमी निदेशक डॉ. विकास दवे के मुख्य आतिथ्य, वरिष्ठ साहित्यकार एवं पुरातत्व वेत्ता राष्ट्रपति पुरस्कार प्राप्त श्री कैलाशचंद्र घनश्याम पांडेय की अध्यक्षता तथा लेखक, वरिष्ठ पत्रकार डॉ. घनश्याम बटवाल के संयोजन में आयोजित हुआ।

इस मौके पर वरिष्ठ साहित्यकार कवि गोपाल बैरागी मंदसौर, एकाग्र शर्मा इंदौर, हिमांशु हिंद झाबुआ, धीरज चौहान इंदौर, अमन जादौन शाजापुर,नरेंद्र भावसार मंदसौर, डॉ नीलेश नगाइच नील मंदसौर, पोरवाल मुकेश निडर पिपलिया मंडी के सानिध्य में रचना पाठ किया गया।

कार्यक्रम आरंभ में श्री पांडेय, डॉ. दवे, डॉ बटवाल श्री त्रिवेदी एवं अतिथियों के सरस्वती चित्र पर माल्यार्पण दीप प्रज्वलन किया। नंदकिशोर राठौर ने सरस्वती वंदना मां बस यह वरदान चाहिए प्रस्तुत की। अतिथि परिचय एवं स्वागत उद्बोधन कार्यक्रम संयोजक वरिष्ठ पत्रकार डॉ घनश्याम बटवाल ने दिया।

मंच पर प्रमुख वक्ता इतिहासकार श्री कैलाशचंद्र घनश्याम पांडेय एवं साहित्य अकादमी निदेशक डॉ विकास दवे का स्वागत सम्मान शाल श्रीफल एवं पुष्प माला से नरेंद्रसिंह सिपानी डॉ घनश्याम बटवाल नरेंद्र त्रिवेदी सुरेंद्र दीक्षित अजीजुल्लाह खान आदि ने किया।

इस अवसर पर संबोधित करते हुए निदेशक डॉ विकास दवे ने कहा कि साहित्य अकादमी प्रदेश में कीर्ति पुरुषों, विभिन्न क्षेत्रों के इतिहास, साहित्य और विशिष्ट योगदान करने वाले महापुरुषों के स्मृति प्रसंग आयोजित कर रहा है। इस श्रृंखला में मंदसौर जिले का प्रथम स्मृति प्रसंग पूर्व सांसद लेखक, इतिहासकार डॉक्टर रघुवीर सिंह पर केंद्रित है।

आपने कहा महाराज कुमार डॉ रघुवीर सिंह सीतामऊ मालवा रियासत के जांबाज योद्धा थे जिन्होंने अपनी रीड की हड्डी को सीधा रखकर अंग्रेजी हुकूमत का दृढ़तापूर्वक सामना किया। सार्वजनिक जीवन में भी आप अपनी मातृभाषा के प्रति संवेदनशील एवं जीवन मूल्यों के पौषक थे। निजी रूप से मालवी भाषा में भी संवाद करते थे।

अंतरराष्ट्रीय स्तर के व्यक्तित्व डॉ रघुवीर सिंह का निधन 1991 में हुआ पर उनका कृतित्व और साहित्यिक अवदान कालजयी है।

निदेशक डॉ विकास दवे ने उनकी स्मृतियों को याद कर मध्यप्रदेश साहित्य अकादमी एवं प्रदेश संस्कृति परिषद की ओर से भावांजलि अर्पित की।

प्रमुख वक्ता इतिहासकार एवं पुरातत्व विद्वान कैलाशचंद्र घनश्याम पांडेय ने कहा कि छोटी काशी के नाम से प्रसिद्ध सीतामऊ मालवा रियासत के महाराज कुमार डॉ रघुवीर सिंह देश की 500 से अधिक रियासतों में एकमात्र बी ए पास व्यक्ति थे जो तत्कालीन मध्य भारत की 22 रियासतों में साहित्यिक गजेटियर निर्माण समिति के प्रमुख सदस्य थे अभिलेखों के प्रति आपकी इच्छा शक्ति का ही परिणाम आपके द्वारा स्थापित नटनागर शोध संस्थान है जो आज भी देश के शोधार्थियों का प्रमुख केंद्र है दुर्लभ संग्रहालय में बड़ी संख्या में विभिन्न भाषाओं का साहित्य उपलब्ध है ।ऐसी शख्सियत का स्मृति समारोह पूरे मालवा प्रांत का सम्मान समारोह है।

कार्यक्रम के द्वितीय चरण में साहित्य अकादमी निदेशक डॉ विकास दवे प्रेस क्लब अध्यक्ष ब्रजेश जोशी, डॉ दिनेश तिवारी, नटनागर शोध संस्थान अधिकारी डॉ सहदेव सिंह चौहान, डॉ स्वप्निल ओझा, नरेंद्र सिंह राणावत ने सभी रचनाकारों का पुष्पमाला से सम्मान किया।

रचना पाठ कवि सम्मेलन मंच संचालन कवि एकाग्र शर्मा ने किया सर्वप्रथम शाजापुर के अमन जादोन काव्य पाठ करते हुए 'दुख के लम्हों में आंखों से आंसू बन बहती हिंदी – सुख के क्षणों में होठों की मुस्कान बनी रहती हिंदी' गीत रचना प्रस्तुत की।

पिपलियामंडी के युवा कवि पोरवाल मुकेश 'निडर' ने पर्यावरण गीत आओजी आओ पेड़ लगायें हम पेड़ बचाएं हम प्रस्तुत किया।

डॉ नीलेश नगाइच 'नील' ने साहित्यकारों के कार्य की अहमियत प्रदर्शित करते हुए कहा कि कुछ भी आसान नहीं लिखना फनकारों से लोहा

काट रहे कागज की तलवारों से सुनाया। आपने कविता पर स्वरचित कविता प्रस्तुत की।

इंदौर के धीरज चौहान ने हम चमकना चाहते हैं देर तक इसलिए हमने रोशनी कम कर रखी है रचना सुनाई। हिमांशु हिंद झाबुआ ने बेटियों को इतना नाजुक मत बनाइए झांसी वाली रानी जैसी वीरता सिखाइये प्रस्तुत की। मंदसौर के कवि नरेंद्र भावसार ने हास्य व्यंग्य से गुदगुदाया 'मैं स्कूल गया ना कॉलेज, इसीलिए बहुत है नॉलेज' हास्य रचना प्रस्तुत की।

इंदौर के युवा कवि एकाग्र शर्मा ने संचालन करते हुए गीत तेरे तट पर चारों धाम मां नर्मदे तुझे प्रणाम सुनाया। वरिष्ठ कवि गोपाल बैरागी ने गीत भारत का तिरंगा लहराया झूम उठी तरुणाई है मेरे भारत में भगवा की मस्ती छाई है गीत सुनाया जिसकी सबने दाद दी कार्यक्रम के अंत में पिपलियामंडी के कवि पंकज शर्मा 'तरुण' के काव्य संग्रह 'नव पल्लव' का विमोचन अतिथियों एवं कवियों ने किया। इस मौके पर डॉ. घनश्याम बटवाल द्वारा संपादित एवं लाल बहादुर श्रीवास्तव के रेखांकन सज्जित साहित्य संग्रह 'यथार्थ' की प्रति अतिथियों एवं कवि रचनाकारों को भेंट की गई।

कार्यक्रम संचालन संयोजक वरिष्ठ पत्रकार डॉ.घनश्याम बटवाल ने किया आभार नरेंद्र त्रिवेदी ने माना।

साहित्यिक समारोह में गणमान्य ओर प्रबुद्धजनों के साथ नटनागर शोध संस्थान मुख्य शोध अधिकारी डॉ. रेखा द्विवेदी, डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा, हरीश दवे,बालूसिंह सिसोदिया डॉ. रविन्द्र पांडेय, चंदा डांगी किरण श्रीवास्त, डॉ. आकांक्षा त्यागी, जयेश नागर पुष्पेन्द्र सिंह चौहान जिला धार्मिक उत्सव समिति संयोजक वरदीचंद कुमावत, कन्हैया लाल सोनगरा, सी ऐ सिद्धार्थ अग्रवाल, गोपाल पंचारिया, सचिन पारिख, संतोष परसाई, भगवती प्रसाद गेहलोत, सतीश नागर, यशपाल राव शिंदे, शम्भूदयाल व्यास, कार्यक्रम अधिकारी राकेश सिंह , प्रकाश कल्याणी हिमांशु पांडे सुनील राठौड़ माधव श्रीवास्तव आदि उपस्थित थे।

इस अवसर पर जनपरिषद संस्था कार्यकारिणी सदस्य श्रीमती चंदा अजय डांगी ने पर्यावरण संरक्षण के लिए स्वनिर्मित कपड़े की थैलियां अतिथियों, कवियों एवं गणमान्य को नि:शुल्क भेंट की और प्रेरित किया।

रपट - डॉ. घनश्याम बटवाल

आयोजन

अभिनव कला परिषद ने किया छह फनकारों का सम्मान

बरखा महोत्सव में सजा सुरों का इन्द्रधनुष

16 सितम्बर की शाम मानस भवन का सभागार बरखा की रिमझिम फुहारों के रागोत्सव में सदाबहार फिल्मी गीतों के मधुर सुरों से गुंजायमान होता रहा। अवसर था ख्याति प्राप्त सांगीतिक संस्था अभिनव कला परिषद के 61 वे वर्ष में आयोजित 54वें बरखा महोत्सव का ।आयोजन में मध्यप्रदेश के लोकप्रिय गायक गायिकाओं ने बरसात के रंगों से सजे सदा बहार फिल्मी नगमे पेश कर सुरों का इन्द्रधनुष उकेरा। इस अवसर पर राजधानी की 16 से अधिक साँस्कृतिक, साहित्यिक, सामाजिक और धार्मिक संस्थाओं में प्रमुख लायंस क्लब, रोटरी क्लब,मध्यप्रदेश लेखक संघ,श्रम श्री संस्था, रामानंद संगीत विद्यालय, जैन श्वेतांबर समाज के पदाधिकारियों तथा वरिष्ठ पत्रकार महेश श्रीवास्तव, स्वदेश के प्रबंध संचालक राजेन्द्र शर्मा, प्रसिद्ध रंगकर्मी राजीव वर्मा, पद्मश्री से सम्मानित उमाकांत गुन्देचा, पूर्व मंत्री पी. सी. शर्मा, प्रख्यात तबला वादक किरण देशपांडे, गीतकार डॉ. राम वल्लभ आचार्य, एडवोकेट ब्रज किशोर साँघी एवं चार्टर्ड एकाउंटेंट मनोज झा ने गायक अशोक सिंह, संजय शर्मा, अनिल कोचर, गायिका कीर्ति सूद, रजनी धूरिया,संदीप पारे तथा संगीतकार संजीव सचदेवा को संस्था के प्रतिष्ठित अभिनव कला सम्मान से अलंकृत कर सम्मानित किया ।दीप प्रज्वलित कर महोत्सव का शुभारंभ किया। सभागार में बरखा की रिमझिम फुहारों के इस गीतोत्सव में अप्रतिम स्वर साधक अशोक सिंह, संजय शर्मा, राजेश भट, अनिल कोचर, डॉ. टी.एन. दुबे, डॉ. ग्रोवर, कीर्ति सूद, संदीपा पारे, रजनी धूरिया तथा शिवानी धूरिया ने अपनी पुरकशिश आवाज़ में रिमझिम बरसे बादरवा, ज़िन्दगी भर नहीं भूलेगी वो बरसात की रात, आई बरखा बहार पड़े अँगना फुहार, सावन का महीना पवन करे सोर, सुनो सजना पपीहे ने कहा सबसे पुकार के, बरखा बहार आई रस की फुहार लाई सहित अनेक गीत पेश कर श्रोताओं को रससिक्त किया ।सिन्थेसाइज़र पर संजीव सचदेवा, गिटार पर सतीश केसवानी, तबले पर नईम अल्लाहवाले तथा ढोलक व परकशन पर राज कुमार सक्सेनाअपनी प्रभावी संगति से गीतों का श्रृंगार किया।कार्यक्रम का कुशल संचालन विमल भंडारी ने किया ।

रपट : पं. सुरेश ताँतेड़

शक्ति ही कराती है ब्रह्म का अनुभवः पं. भूषण से सम्मानित श्रीएम

आद्यशंकराचार्य द्वारा प्रकाशित वेदांत के अद्वैत दर्शन के अनुरूप समाज को एकात्म मार्ग पर अग्रसर कराने व अद्वैत वेदांत के लोकव्यापीकरण के लिए मध्यप्रदेश के आचार्य शंकर सांस्कृतिक एकता न्यास द्वारा समय-समय पर विभिन्न गतिविधियों का आयोजन किया जाता है। इसी कड़ी में न्यास द्वारा भारत भवन में दो दिवसीय एकात्म पर्व का शुभारंभ किया गया। वेदांत में शक्ति की अवधारणा पर केन्द्रत इस आयोजन में पहले दिन प्रखर वेदांत वेत्ता, द सत्संग फाउंडेशन के संस्थापक, पद्म भूषण से सम्मानित श्रीएम ने 'शक्ति एवं अद्वैत वेदांत' विषय पर प्रबोधन हुआ तथा आचार्य शंकर कृत शक्ति स्तोत्रों की सांगीतिक प्रस्तुति हुई। अपने प्रबोधन में श्रीएम ने अद्वैत वेदांत में शक्ति की मान्यता, अस्तित्व और भूमिका पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि - मैं सौभाग्यशाली हूँ कि जिस भूमि में आद्यशंकराचार्य जी का जन्म हुआ मैं भी उसी भूमि से आता हूँ। शंकर जब अपनी जन्मभूमि से निकले और पूरे राष्ट्र का भ्रमण किया तो उस समय का एक विचार आता है कि शंकर ने किस भाषा में लोगों से संवाद किया था। तब ध्यान में आता है कि वह भाषा हिन्दी तो नहीं थी, वह संस्कृत थी। जिस भाषा में शंकराचार्य ने पूरे देश को जोड़ा उस संस्कृत भाषा को राष्ट्रभाषा बनाना चाहिए। उन्होंने आगे कहा कि मैं केवल अनुभव के आधार पर बात करने आया हूँ। मैं कभी कोई संस्कृत विद्यालय नहीं गया लेकिन वेदों का जो भी ज्ञानार्जन मैंने किया है वह मेरे गुरु महेश्वरनाथ बाबा जी से प्राप्त हुआ है। वह कभी अपने साथ कोई ग्रंथ नहीं रखते थे उन्हें सभी वेदवाणी कंठस्थ थीं। ब्रह्म अनुभूति का विषय है जो केवल शक्ति के माध्यम से ही अनुभव किया जा सकता है। शक्ति के आभाव में परब्रह्म को अनुभूत नहीं किया जा सकता है। इसलिए शक्ति और ब्रह्म अलग नहीं हैं वह एक ही हैं। हमारा अज्ञान उसे भिन्न देखता है। जिस प्रकार अग्नि और गर्मी अलग नहीं है। दोनों एक हैं। लेकिन हम अपने अविवेक के कारण दोनों को अलग समझ बैठते हैं। उसी तरह परब्रह्म और माया अर्थात शक्ति एक ही हैं, वह अलग नहीं हैं।

शंकर की गुरुभूमि को एकात्म का वैश्विक केन्द्र बना रहे : शिवशेखर शुक्ला

कार्यक्रम में संस्कृति विभाग के प्रमुख सचिव शिवशेखर शुक्ला ने पद्म भूषण श्रीएम का अभिनंदन करते हुए कहा कि - यह अत्यंत सौभाग्य पूर्ण अवसर है, जब हमें श्रीएम का सानिध्य प्राप्त हुआ है। आज जो यह अवसर उपस्थित हुआ है, इसका हम पूरा लाभ लेंगे। उन्होंने ओंकारेश्वर में बन रहे एकात्म धाम की संकल्पना की व्याख्या करते हुए कहा कि आगामी पीढ़ी को अद्वैत की आलौकिक धारा से जोडने के लिए ओंकारेश्वर में अद्वैत महालोक का निर्माण किया जा रहा है। जिस भूमि पर आचार्य शंकर ने गुरु का सानिध्य पाया उसे - एकात्म के वैश्विक केन्द्र के रूप में विकसित कर रहे हैं।

देवी स्तोत्रों से गूंजा भारत भवन का अंतरंग सभागार

दीप प्रज्ज्वलन द्वारा एकात्म पर्व के शुभारंभ उपरांत शास्त्रीय संगीत की लोकप्रिय गायिका माधवी मधुकर झा ने आद्यशंकराचार्य कृत शक्ति स्तोत्रों की संगीतमय प्रस्तुति दी। अपनी प्रस्तुति में माधवी ने शक्ति स्तुति हेतु शंकर विरचित आनंद लहरी, भवानी आष्टक, गौरी दशकम, सौंदर्य लहरी, महिषासुरमर्दिनि आदि स्तोत्रों का गायन किया। शक्ति स्तोत्रों पर माधवी की प्रस्तुति ने सभागार में उपस्थित हर वेदांत प्रेमी को मोह लिया। माधवी की आवाज में जब सौंदर्यलहरी की लहर बही तो हर श्रोता शंकरमय होकर शक्ति स्तुति में डूब गया।

चित्रों में उकेरे सौंदर्यलहरी के स्तोत्र शंकर न्यास के एकात्म पर्व में भारत भवन सभागार के मुख्य द्वार पर शक्ति प्रदर्शनी भी सजाई गई है। प्रदर्शनी में आचार्य शंकर प्रवर्तित अद्वैत वेदान्त दर्शन में शक्ति का क्या स्थान है इस विषय पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही आचार्य शंकर प्रणीत शक्ति तत्व पर आधारित स्तोत्र सौन्दर्यलहरी पर चित्र भी प्रदर्शित किये गए हैं। मैसूर, कर्णाटक के गंजिफा शैली के प्रसिद्ध चित्रकार श्री रघुपति भट्ट द्वारा बनाये गये 25 चित्रों को सौन्दर्यलहरी के श्लोक और अर्थ सहित प्रदर्शनी में सजाया गया है।

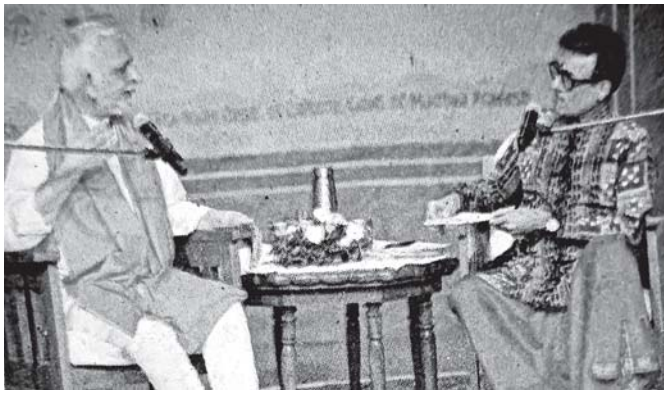

भारत भवन में आयोजित दो दिवसीय एकात्म पर्व का रविवार को समापन हुआ। समापन दिवस पर एकात्म संवाद आयोजन किया गया। जिसमें श्रीएम से विख्यात टेलीविजन अभिनेता व वेदांत साधक नितीश भारद्वाज ने रोचक संवाद किया। जिसमें प्रमुख सचिव संस्कृति शिवशेखर शुक्ला, पद्मश्री से सम्मानित कपिल तिवारी, पूर्व सीबीआई निदेशक ऋषि प्रसाद शुक्ला सहित बौद्धिक जगत के प्रख्यात हस्तियां श्रोता के रूप में सम्मिलित हुईं। एकात्म संवाद में श्रीएम से प्रश्न करते हुए नितीश भारद्वाज ने पूछा कि – संसार में इतना भेद है, फिर अद्वैत क्या है? इसका उत्तर देते हुए श्रीएम ने कहा कि मनुष्य अपनी इंद्रियों के बहुत अधिक वश में है, इसलिए हम नाम आदि पहचानों के साथ जीते हैं। द्वैत भाव में जीते हैं। और यह अचानक संभव भी नहीं कि इंद्रियों के वशीभूत होते हुए हम अद्वैत का अनुभव कर श्रोताओं के प्रश्न का उत्तर देते हुए श्रीएम ने कहा कि वेदांत अध्ययन या आध्यात्मिक उन्नति के लिए स्वच्छता अत्यधिक आवश्यक है। चाहे वह मन की हो, शरीर की हो या खासकर वातावरण और पर्यावरण की। जो सन्यास, ज्ञान, भक्ति मार्ग में जाते हैं उनकी संसार से अरुचि हो जाती है? इस प्रश्न के उत्तर में श्रीएम ने कहा कि ऐसा बिल्कुल नहीं है, जो इन मार्गों पर सच्चे अर्थों में चलता है, उनके अंदर संसार के प्रति श्रेष्ठ भावना, करूणा, ममता और दया होती है। जो सांसारिक लोगों से भी अधिक होती है। बस अंतर यह होता है कि वह इन मानवीय भावनाओं में आशक्त नहीं होते। ध्यान प्रक्रिया के विषय में संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि ध्यान की कोई एक स्पष्ट प्रक्रिया नहीं बतलाई गई है। जो लोग ध्यान करना चाहते हैं, वह संगीत को माध्यम बना सकते हैं। संगीत एकाग्रता लाता है, और वह ध्यान की पहली सीढ़ी है।

सभागार में कार्यक्रम के शुभारंभ अवसर पर न्यास के प्रकल्प अद्वैत युवा जागरण शिविर के उपरांत दीक्षित शंकर दूतों के समूह ने टोटकाष्टकम का गान कर सभी को मंत्रमुग्ध किया। अंत में आयोजन का आभार डॉ भावना व्यास ने किया। शंकर न्यास के एकात्म पर्व में भारत भवन सभागार के मुख्य द्वार पर 'शक्ति' प्रदर्शनी भी सजाई गई, जिसका श्रीएम ने आयोजन के पूर्व शुभारंभ कर अवलोकन किया। इस प्रदर्शनी में आचार्य शंकर प्रवर्तित अद्वैत वेदान्त दर्शन में शक्ति का क्या स्थान है इस विषय पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही आचार्य शंकर प्रणीत शक्ति तत्त्व पर आधारित स्तोत्र सौन्दर्यलहरी पर चित्र भी प्रदर्शित किये गए हैं।

मुख्यमंत्री डॉ. यादव से मिले श्री एम

मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव से शाम मुख्यमंत्री निवास में श्री एम. (मुमताज अली खान) ने सौजन्य भेंट की। श्री एम. ने मध्यप्रदेश में सांस्कृतिक और अन्य क्षेत्रों में संचालित गतिविधियों की सराहना की। मुख्यमंत्री डॉ. यादव से भेंट के दौरान श्री एम. ने फाउंडेशन के विभिन्न प्रकल्पों की जानकारी भी दी। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने श्री एम. के आगमन पर उन्हें पुष्प-गुच्छ भेंट कर अंगवस्त्रम से सम्मानित किया। पद्मभूषण से सम्मानित श्री एम. प्राचीन नाथ परम्परा के आध्यात्मिक आचार्य, समाज सुधारक, शिक्षाविद, लेखक एवं वैश्विक वक्ता हैं। अपने गुरु महेश्वरनाथ के साथ हिमाचल में दीर्घ काल तक भ्रमण के उपरांत गुरु की आज्ञा के अनुसार विभिन्न ग्रंथो की शिक्षा ग्रहण की। वर्ष 2015- 16 में 'वॉक ऑफ होप' का नेतृत्व किया। कन्या कुमारी से कश्मीर तक यात्रा कर आध्यात्मिक साधकों के सानिध्य में रहे। उन्हें वर्ष 2020 में भारत सरकार द्वारा पद्मभूषण से सम्मानित किया गया।

कला समय संस्कृति, शिक्षा और समाज सेवा समिति, भोपाल (म.प्र.)
कलाकारों के उत्थान, प्रोत्साहन और सम्मान जनक मंच उपलब्ध कराने हेतु
कलाओं और कलाकारों को समर्पित संस्था कला समय
गौरवशाली 12वाँ वर्ष
0755-2562294, 9425678058
kalasamay1@gmail.com
कार्यालय: जे-191, मंगल भवन, ई-6 महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल - 462016 (म.प्र.)

ज्ञानतीर्थ सप्रे संग्रहालय में भाषा सत्याग्रह का शुभारंभ

नई शिक्षा नीति में हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं के विकास की अपार संभावनायें

मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव का कहना है कि हिंदी ऐसी भाषा है, जिसमें सभी को आत्मसात करने की क्षमता है। नई शिक्षा नीति में सभी भाषाओं को महत्व दिया गया है। यही वजह है कि नई शिक्षा नीति में हिंदी के साथ-साथ सभी भारतीय भाषाओं के विकास की अपार संभावनाएं हैं।

मुख्यमंत्री ज्ञानतीर्थ सप्रे संग्रहालय में देशव्यापी भाषा सत्याग्रह के अवसर पर बतौर मुख्य अतिथि बोल रहे थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता स्कूल शिक्षा मंत्री उदयप्रताप सिंह ने की। भारतीय भाषाओं के बीच समन्वय और सौहार्द स्थापित करने की मंशा से सप्रे संग्रहालय द्वारा यह भाषा सत्याग्रह शुरू किया गया है।

मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने आगे कहा कि हमारी सभी भाषाओं की जननी देवभाषा संस्कृत है। संस्कृत वह भाषा है जिसमें संस्कृति और संस्कार छुपे हुए हैं। इसलिए हम कह सकते हैं कि जिस भाषा का कुल अच्छा है उसकी संतान भी श्रेष्ठ ही होगी। इस दृष्टि से भारतीय भाषाएं अपने आप से श्रेष्ठ हैं। उन्होंने भाषाओं के साथ-साथ बोलियों के परिष्कार की आवश्यकता भी निरुपित की। उनका कहना था कि हमारी बोलियों में जो मिठास है वह अन्यत्र दुर्लभ है।

अध्यक्षीय उद्बोधन में स्कूल शिक्षा मंत्री उदयप्रताप सिंह ने कहा कि हिंदी की तरह ही संस्कृत भी देश को जोडने में सहायक हो सकती है। इसके लिए जरूरी है कि संस्कृत भाषा ऐच्छिक न हो कर अनिवार्य भाषा होनी चाहिए। इस दिशा में गंभीरता से विचार किया जाना चाहिए। उन्होंने भी इस तथ्य को दोहराया कि नई शिक्षा नीति में सभी भारतीय भाषाओं को महत्व दिया गया है। म.प्र. तो वह राज्य जहां नई शिक्षा नीति सबसे पहले लागू की गई है, आने वाले समय में यह नई शिक्षा नीति देश में एक बड़ा परिवर्तन करेगी। यह 'आंदोलन' नहीं अनुष्ठान' है।

इसके पूर्व माधवराव सप्रे स्मृति समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान के संस्थापक-संयोजक विजयदत्त श्रीधर ने प्रस्तावना वक्तव्य देते हुए कहा कि इस सत्याग्रह के पीछे हमारा उद्देश्य है कि सभी भारतीय भाषाओं के बीच आपसी समन्वय और सौहाद्र स्थापित हो। एक दूसरे के बीच आवाजाही बढ़े, ताकि भाषाएं आपस में जुड़ सकें। इससे देश भी आसानी से जुड सकेगा। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि इसमें हमारा लक्ष्य भाषाओं के बीच रिश्ता जोडना है. किसी भाषा के प्रति दुराग्रह नहीं है। इसलिए इसे ' अनुष्ठान कहा गया है। उन्होंने कहा कि इस सत्याग्रह के चार मुख्य आयाम तय किये गये हैं। जो हिंदी और लोकभाषाएं, हिन्दी और भारतीय भाषाएँ, हिन्दी और विश्व भाषाएं तथा दैनंदिन व्यवहार में हिंदी को शामिल किया जाना है। कार्यक्रम में सप्रे संग्रहालय संदर्भिका (बिब्लियोग्राफी)' का विमोचन भी किया गया।

आरंभ में संग्रहालय की ओर से डॉ शिवकुमार अवस्थी तथा डॉ रत्नेश ने मुख्य अतिथि डॉ. मोहन यादव तथा अध्यक्षता कर रहे स्कूल शिक्षा मंत्री उदयप्रताप सिंह का अभिनंदन किया। कार्यक्रम का संचालन वरिष्ठ पत्रकार एवं मीडिया शिक्षक शिवकुमार विवेक ने किया तथा आभार प्रदर्शन मानसभारती के सपादक डॉ. प्रभुदयाल मिश्र ने किया। बक्सि सहयोगियों का सम्मान इस अवसर पर संग्रहालय की गतिविधियों में सहयोग देने वाली विभूतियां आशीष अग्रवाल, वरिष्ठ चिकित्सक डॉ. एनडी गार्गव, वरिष्ठ है वैज्ञानिक डॉ जयप्रकाश शुक्ल तथा साहित्यकार एवं वरिष्ठ चिकित्सक डॉ. वीणा सिन्हा और हेमंत सिन्हा को सम्मानित किया गया। सम्मान के तहत शॉल, श्रीफल तथा प्रशस्ति पत्र प्रदान किया गया।

रपट : दीपक पगारे, वरिष्ठ पत्रकार

विश्व पर्यटन दिवस पर जिला पंचायत कार्यालय में एक विशेष संगोष्ठी का आयोजन

जिला पुरातत्व पर्यटन एवं संस्कृति परिषद के तहत हुए आयोजन में मुख्य अतिथि के तौर पर डीआईजी रतलाम श्री मनोज सिंह, कलेक्टर श्रीमती अदिति गर्ग, पुलिस अधीक्षक श्री अभिषेक आनंद एवं विषय विशेषज्ञ के रूप में डॉ. कैलाशचंद्र घनश्याम पाण्डेय, डॉ. प्रधुम भट्ट तथा डॉ. उषा अग्रवाल सम्मिलित हुए।

सप्रे संग्रहालय में फिल्म-नाटक प्रभाग का शुभारंभ

मनोरंजन ही नहीं, समाज निर्माण का माध्यम भी हैं फिल्में

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र के सदस्य सचिव डॉ. सच्चिदानंद जोशी का कहना है कि फिल्म-नाटकों की समाज निर्माण में भी बड़ी भूमिका होती है। इन विधाओं से संबंधित जो भी साहित्य है. उनका दस्तावेजीकरण होना चाहिए। इसके लिए संस्थाएं

आपस में मिलकर कार्य करें। ज्ञानतीर्थ माधवराव सप्रे संग्रहालय में स्थापित नाटक, संगीत एवं सिनेमा प्रभाग के शुभारंभ समारोह में बतौर मुख्य अतिथि बोल रहे थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता रंग समीक्षक एवं वरिष्ठ पत्रकार गिरिजा शंकर ने की। विशेष अतिथि के रूप में फिल्म अभिनेता एवं रंग निदेशक राजीव वर्मा और कोरियोग्राफर वैशाली गुप्ता उपस्थित थे।

मुख्य अतिथि सच्चिदानंद जोशी ने आगे कहा कि फिल्म और नाटकों का क्षेत्र जिस तरह से विकसित होना था, वैसा हो नहीं पाया। ऐसे में हम उम्मीद जता सकते हैं कि संग्रहालय में स्थापित यह प्रभाग इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। उन्होंने इस क्षेत्र में इंदिरा कला केंद्र द्वारा किये जा रहे कार्यों की जानकारी भी दी। साथ ही उन्होंने इस क्षेत्र में संस्थाओं द्वारा मिलकर कार्य करने की जरूरत पर बल देते हुए नए प्रभाग को कला केंद्र तथा स्वयं अपनी और से हर तरह के सहयोग का भरोसा भी दिलाया। श्री जोशी ने सप्रे संग्रहालय से अपने निजी जुड़ाव का जिक्र भी किया।

सप्रे संग्रहालय ने किया अनूठा कार्य

अध्यक्षीय उद्बोधन में वरिष्ठ पत्रकार गिरिजाशंकर ने कहा कि समाज में आज भी रंगमंच को अंतिम पायदान पर ही रखा जाता है। ऐसे में सप्रे संग्रहालय ने इस विषय पर एक नया प्रभाग बनाकर एक अनूठा कार्य किया है। निश्चित ही रंगकर्म के क्षेत्र में रुचि रखने वालों के लिए उपयोगी साबित होगा। उन्होंने अपने निजी अनुभवों को साझा करते हुए कहा कि शुरुआती दिनों में रंगजगत जिन समस्याओं से जूझ रहा था आज भी वे समस्यायें कलाकारों के सामने हैं, फिर चाहे नाटकों की रिहर्सल हो या उनका मंचन। न रिहर्सल के लिए जगह मिल पाती है और ना ही मंचन के लिए सभागार। फिर भी इसके बाद छोटे कस्बों, शहरों में रंगकर्मी नाटकों के लिए संघर्ष कर रहे हैं. उनकी यह जिजीविषा आशवस्त करती है कि रंगकर्म का भविष्य उजला होगा। उन्होंने नाटकों के कलाकारों की राणना कराये जाने की जरूरत भी बतलाई। उन्होंने रंगकर्मियों के अनुभवों के दस्तावेजीकरण किये जाने का सुझाव भी दिया। कार्यक्रम के विशेष अतिथि रंगनिदेशक एवं फिल्म अभिनेता राजीव वर्मा ने कहा कि आमतौर फिल्मों या नाटकों को सिर्फ मनोरंजन का साधन ही समझा जाता है, लेकिन ऐसा नहीं है। यह दोनों ही माध्यम समाज और राष्ट्र निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस क्षेत्र का जो साहित्य है उसे व्यवस्थित रूप से संजोया नहीं गया। लेकिन सप्रे संग्रहालय में स्थापित यह नया प्रभाग इस दिशा में कार्य करेगा, नि:संदेह भविष्य में इसका लाभ शोधार्थियों को मिलेगा। विशेष अतिथि सुप्रसिद्ध कोरियोग्राफर वैशाली गुप्ता ने कहा कि लंबे समय से इस तरह के स्थान की जरूरत महसूस की जा रही थी जहां नाटकों से जुड़ी सामग्री हो, इस कमी की पूर्ति इस प्रभाग के माध्यम से होगी। यहां उपलब्ध सामग्री का लाभ उठाकर शोधार्थी ठोस कार्य कर सकेंगे। पाच हजार से ज्यादा पत्र-पत्रिकाएं कार्यक्रम का संचालन कर रहे नए प्रभाग के सूत्रधार एवं वरिष्ठ रंगकर्मी आनंद सिन्हा ने बताया कि इस नए प्रभाग में करीब पांच हजार से ज्यादा पत्र-पत्रिकाएं उपलब्ध हैं। इनमें भारतीय शास्त्रीय रंग-परंपरा के अभिनव दस्तावेज, भारतीय नाट्यशास्त्र के हिन्दी, संस्कृल और अंग्रेजी आषा के संदर्भ ग्रंथ, नवाचार और समकालीन स्वरूपों के विवेचन की उत्कृष्ट पुस्तकों से यह प्रभाग समृद्ध है। कलाविद् निरंजन महावर, रंग समीक्षक महेश आनंद, रंग निर्देशक हबीब तनवीर, भारतीय सिनेमा के अध्येता और समीक्षक राजकुमार केसवानी एवं सुनील मिश्र तथा राग तेलंग के निजी संग्रह यहां उपलब्ध रहेगे, जिसका लाभ शोधार्थी उठा सकेंगे। कार्यक्रम में वरिष्ठ फिल्म समीक्षक विनोद नागर की दो किताबै सुबह सवेरे का सिने विमर्श और सिने विमर्श सुबह सवेरे का विमोचन भी किया गया।

आरंभ में संग्रहालय की ओर से पलाश सुरजन, पंकज पाठक, डॉ. वीणा सिन्हा आदि ने अतिथियों का स्वागत् किया। कार्यक्रम में संग्रहालय के संस्थापक निदेशक विजयदत्त श्रीधर, भारत भवन के न्यासी विजय मनोहर तिवारी, आकाशवाणी के समाचार संपादक संजीव शर्मा, रंगनिदेशक प्रेम गुप्ता, ब्रजेश अनय सहित बड़ी संख्या में रंगकर्मी, साहित्यकार आदि उपस्थित थे।

रपट : दीपक पगारे, वरिष्ठ पत्रकार

■

प्रतिक्रिया

पत्रिका के बहाने

कबीर खड़ा बाजार में, लिए कला समय हाथ: शिवकुमार विवेक

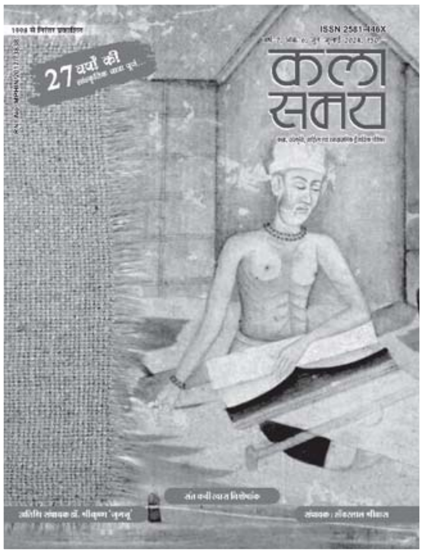

कबीर खड़ा बाजार में, लिए कला समय हाथ

कबीर बड़े अनोखे व्यक्ति थे। वे आम आदमी की भाषा में इतनी खरी बात करते थे कि वह न केवल दिल में बैठ जाती थी अपितु दिमाग को भी खदबदाती थी। दूसरी तरफ सहज भाषा में गहरे सैद्धांतिक और वैचारिक आलोढ़न के कारण बुद्धिजीवी तबका भी बहुत आकर्षित हुआ है। आज के दौर में जब धर्म और संप्रदाय के नाम पर अज्ञानता और मूढ़ता का ढोल चौतरफा बज रहा हो तब कबीर और अधिक याद किए जाने का विषय हो जाते हैं। इस दौर में भी अनेक अध्येता उनका पूरी गंभीरता से अवलोकन-अध्ययन-मनन कर रहे हैं। भोपाल से प्रकाशित पत्रिका 'कला समय' ने एकदम सही समय पर इस कार्य को हाथ में लिया और जून-जुलाई के अंक को संत कबीर को समर्पित किया है।

कबीर को पढ़ते और सोचते हुए लगता है कि समय की सीमा में वह कभी आबद्ध नहीं थे। समय से आगे जाकर देख रहे थे और लोगों को चेता रहे थे। वह जान रहे थे कि मनुष्य पाखंड, मिथ्याजगत और कृत्रिम विभाजनों में उलझा है। इसलिए, जैसा कि संपादक भँवरलाल श्रीवास ने अपने अग्रलेख में स्पष्ट कर दिया है- 'कबीर अपने देश में केवल मनुष्य को चाहते हैं। ऐसा मनुष्य जो जाति, वर्ण, कुल, धन, धरम, पंथ, मत,मंदिर, मस्जिद, गिरिजा, गुरुद्वारे से बाहर आकर चौराहे पर ज्ञान की लुकाठी लेकर खड़ा है और सबका आह्वान कर रहा है कि जाति,पाति, धर्म, पंथ ,मत के बने घर को फूंक डालो और हमारे साथ चलो।' यह अनुकथन कबीर पर विशेष प्रकाशन के मंतव्य को स्पष्ट कर देता है। कला समय ऐसा सदोद्देश्य लेकर लगातार प्रकाशन कर रही है। उसका विगत जल अंक भी जागरूकता का एक दस्तावेज था।

सुप्रसिद्ध भारतविद डॉ. श्री कृष्ण 'जुगनू' के अतिथि संपादन में कला समय दूसरी बार विशेष अंक लेकर आया है। इसमें संत कबीर के व्यक्तित्व के विविध पक्षों के साथ ही उनसे जुड़े स्थानों से भी बखूबी परिचय कराया गया है। यही नहीं, कबीर पर प्रकाशित दो पुस्तकों की समीक्षा के साथ विशेषांक को समग्रता देने की चेष्टा भी अच्छी लगती है। संपादक भँवरलाल श्रीवास पत्रिका के प्रकाशन केंद्र को देखते हुए मध्यप्रदेश से कबीर के रिश्ते की बात करना भी भूले नहीं। आलेख बताता है कि मध्यप्रदेश में कबीर पंथ की विस्तृत परंपरा रही है। उनके अनुयायी श्री धर्म साहब के बड़े लड़के नारायण की गाड़ी नो पीढ़ी तक बांधवगढ़ में रही। इसके अलावा प्रदेश के कई शहरों में उनके मरने वालों ने उनकी गद्दियां स्थापित की थीं। बचपन में मैंने सागर शहर में भी उनका स्थानक देखा था जिसमें उनके अनुयायी कई आयोजन करते थे। पत्रिका के अनुसार बुरहानपुर में श्री कबीर निर्णय मंदिर स्थापित किया गया था। रीवा गादी से भी परिचित कराती है।

कबीर पर पत्रिका के विभिन्न लेखों को कबीर की भाषा में ही कहा जा सकता है- 'कबीर कुआं एक है,पणिहारी अनेक, बर्तन न्यारा न्यारा है, सबमें पाणी एक।' अर्थात अलग-अलग लेखक कबीर के एकात्म संदेश को अपनी-अपनी भाषा में बखान करते हैं। डॉ. 'जुगनू' 'कबीर बीजक और त्रिजा' में कहते हैं-कबीर अपनी भाषा के प्रवर्तक हैं। उनकी अपनी संज्ञा, सर्वनाम, काल, क्रिया, विशेषण, वाक्य और छंद के लघु-गुरु के प्रस्तार क्रम हैं। कबीर ने ही कहा था-भाषा बहता नीर। 'जुगनू' बताते हैं कि कबीर की रचनाओं का संग्रह बीजक है और टीका त्रिजा। यह टीका बुरहानपुर के नागझिरी में संत पूरण साहेब ने तैयार की।

कबीर अपने समय और समय के बाद कई प्रतिरूपों में भासते रहे हैं। डॉ.सुमन चौरे का लेख 'निमाड़ के कबीर' यही बताता है जो उन्होंने संत सिंगाजी पर लिखा है। डॉ. प्रिया सूफी का मन कबीर को लेकर उथलेपन और विवादों से खिन्न है लिहाजा वे खिंचाई करते हुए कहती हैं-किस कबीर की कथा कहूं। वे लिखती हैं समाज में सबसे कठिन है कबीर होना। डॉ.अद्वैतवादिनी कौल ने लल्लेश्वरी और कबीर पर प्रकाश डाला है। कबीर की चर्चा बगैर बनारस हो नहीं सकती। इसकी पूर्ति की है डॉ. कवीन्द्र नारायण श्रीवास्तव ने। अन्य लेखकों में डॉ.शोभा सिंह, डॉ.विभा ठाकुर, सुश्री शैरिल शर्मा. डॉ. रंजना जैन, अनीता कोर्डे, डॉ. राजेन्द्र कृष्ण अग्रवाल, चेतन आदित्य, प्रभुदयाल मिश्र, डॉ.सतीश चतुर्वेदी 'शाकुंतल' और डॉ.महेश दुबे ने भी गागर में सागर भरा है। इसके अलावा, संपादक ने कबीर पर कविताएं भी संजोई हैं। लक्ष्मीनारायण पयोधि, डॉ.श्लेष गौतम, यश मालवीय व अशोक अंजुम के भाव स्वागतेय हैं। 11 वर्षीय हरिन श्रीवास का जिक्र किए बगैर कबीर अंक

अपूर्ण माना जाएगा जिन्होने नन्ही तूलिका से कबीर की तस्वीर उकेरी है।

- शिवकुमार विवेक

सलाहकार संपादक, स्वदेश पत्र समूह, भोपाल
प्रोफेसर (एडजंक्ट), माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता व संचार विश्वविद्यालय, भोपाल (मप्र)चलभाष-9406533808

'कला समय ' का संत कबीरदास विशेषांक मेरे हाथों में है। इसमें आद्योपांत अवगाहन करने पर एक बार में ही संत कबीर से सर्वतोभावेन साक्षात्कार हो जाता है। इसे तैयार करने में संपादक श्री भँवरलाल श्रीवास एवं डॉ श्री कृष्ण 'जुगनू' ने सब प्रकार से समग्र पाठकीय रुचि को दृष्टिगत रखते हुए इसका संपादन किया है और आग्रह पूर्वक संत कबीर के सभी पक्षों पर आधृत विद्वानों के आलेखों को आमंत्रित कर इस अंक को संग्रहणीय बना दिया है । श्रीवास जी द्वारा लिखित संपादकीय संत कबीर की आत्मा का स्पर्श कराता है । संत कबीर निस्पृह और निष्काम गृहस्थ योगी थे इसीलिए वे भक्ति साहित्य में अद्वितीय व्यक्तित्व के रूप में प्रतिष्ठित हैं। इस अंक में उनके जीवन के प्रेरक प्रसंग, उनकी सहज समाधि और भक्ति, उनका लोक संस्पर्श, विवादों को सुलझाते एक सामाजिक अभिभावक की तरह कबीर तत्कालीन काशी के परिदृश्य में आलोकित कबीर आज भी अपनी ताजगी के साथ प्रेरणा दे रहे हैं। ऐसे अनेक बिंदुओं का स्पर्श करते हुए संत कबीर की जीवन एवं साहित्यिक यात्रा को इस अंक ने अपने में समाहित किया है। अत: अपनी उपादेयता के साथ यह एक महनीय कार्य सिद्ध हो गया है। विद्वानों का मत है कि करने योग्य लिखा जाए ,उससे बेहतर है कि लिखने योग्य किया जाए। कबीर ने समाज के लिए अनुकरणीय लिखा भी और अनुगमनीय जीवन जिया भी। इसलिए उनके जीवन और साहित्य पर उनके साहित्य वंशजों द्वारा आगामी पीढ़ियों के लिए आज भी लिखा जा रहा है, आगे भी लिखा जाता रहेगा। मैं अति महत्व के इस संत कबीर विशेषांक हेतु संपादक द्वय को बधाई एवं साधुवाद दोनों प्रेषित करता हूँ।

डॉ. सतीश चतुर्वेदी शाकुंतल

लेखक- विद्वान साहित्यकार हैं।
गुना, (म.प्र.)

कबीर जी अपने समय के सच्चे साधक व संत ही नहीं, युगपुरुष रहे हैं। उनकी रचनाएं आज भी उतनी ही प्रासंगिक हैं जितनी संभवत: उस समय रही होंगी। ऐसे महान संत पर विचार विमर्श और पूरा अंक भर चिंतन अपने आप में एक महती कार्य है। जिसे महामहिम श्री कृष्ण जुगनू जी साहिब एवम् आदरणीय श्री भँवरलाल श्रीवास जी क्रमश: अतिथि संपादक तथा संपादक कला समय ने जिस खूबसूरती से कार्यान्वित किया है, उसके लिए हम केवल करबद्ध प्रणाम ही कर सकते हैं। क्योंकि पत्रिका का जून-जुलाई 24 अंक अपने उल्लेखनीय कलेवर के साथ साथ कबीर जी की रचनाओं और उत्कृष्ट विमर्श के कारण संग्रहणीय तो है ही इसके साथ ज्ञान की दृष्टि से भी बहुत समृद्ध है।

चुनाव की दृष्टि से श्रद्धेय 'जुगनू' जी नीर क्षीर विवेक से निर्णय लेते हैं और हमेशा कुछ ऐसा परोसते हैं कि कला समय की थाली छप्पन भोगों से हर पाठक को तृप्त करती है। मेरा सौभाग्य है कि मेरा लेख भी इस अंक के लायक समझा गया, जिसके लिए मैं संपादक द्वय का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ। परंतु एक पाठक के रूप में इस अंक की ज्ञान गंगा ने कबीर जी को फिर से समझने जानने की जो दृष्टि प्रदान की है उसके लिए पत्रिका के संपादक श्रेष्ठ को आकाश भर शुभकामनाएं एवम् बधाई। अतिथि संपादक आदरणीय श्री कृष्ण 'जुगनू' जी साहिब के लिए करबद्ध नमन:

बंदौ चरण सरोज। जिन्ह यह बीजक निर्मयो।।
परख दिखायो खोज। ते गुरुसम दूजा नहीं।।

डॉ. प्रिया सूफी

(लेखिका हिंदी और पंजाबी में नियमित लिखती हैं। अष्टछाप कवि नंददास की काव्यकला पर अद्वितीय शोध प्रबंध लिखा।)
सम्पर्क - गली न. 10, मकान न. 243, कमालपुर, होशियारपुर (पंजाब)

वाह!

संग्रहणीय है। मुझे अनुपम मिश्र की 'आज भी खरे हैं तालाब' और 'राजस्थान की रजत बूंदे' याद आई। कला समय जैसी पत्रिकाओं का व्यापक प्रसार बहुत जरूरी है। एमपी के उदयपुर के उद्धार पर भी एक लंबी कहानी दो साल पहले छापी गई थी।

विजय मनोहर तिवारी, पूर्व सूचना आयुक्त म.प्र.

निमाड़ का नरवत पर्व भोपाल में मनाया जा रहा है

निमाड़ क्षेत्र में शारदीय नवरात्र में कुंवारी कन्याओं द्वारा नरवत व्रत मनाया जाता है। इसमें शिव पार्वती के स्वरूपों की पूजा की जाती है। कन्याएं मिट्टी से शिव पार्वती को पिंडी रूप में तथा साथ में 5 गौर बनाती हैं कौड़ियों से पिंडियों कीआंखे बनाकर इनकी पूजा करती है। सुबह के समय इनकी पूजा की जाती है तथा गीत गाये जाते है। जल, दूध, फल ,फूल व चुनरी ओढ़ा कर पूजा करती हैं। एकम से नवमी तक यह व्रत किया जाता है। नवमी के दिन इनका विसर्जन कर दिया जाता है। निमाड़ में यह पर्व विलुप्त का विलुप्त प्राय होता जा रहा है। परंपरा को बनाए रखने व नई पीढ़ी को हस्तांतरित करने के उद्देश्य से भोपाल में श्रीमती पूर्णिमा चतुर्वेदी द्वारा अपने घर पर नरवत बनाकर उनके पूजन व गीतों को बालिकाओं को सिखाने व जानकारी दी जा रही है। प्रतिदिन का पूजन किया जा रहा है। अक्षवी चतुर्वेदी, पूजा शर्मा, प्रियंका चतुर्वेदी, कीर्ति राजपूत, इरा शर्मा, पूजा पाराशर आदि बालिकाएं नरवत पर्व को मना रही हैं। - रपट: शिशिर उपाध्याय

कला समय

के महत्वपूर्ण विशेषांक...

सांस्कृतिक धड़कनों का जीवंत दस्तावेज

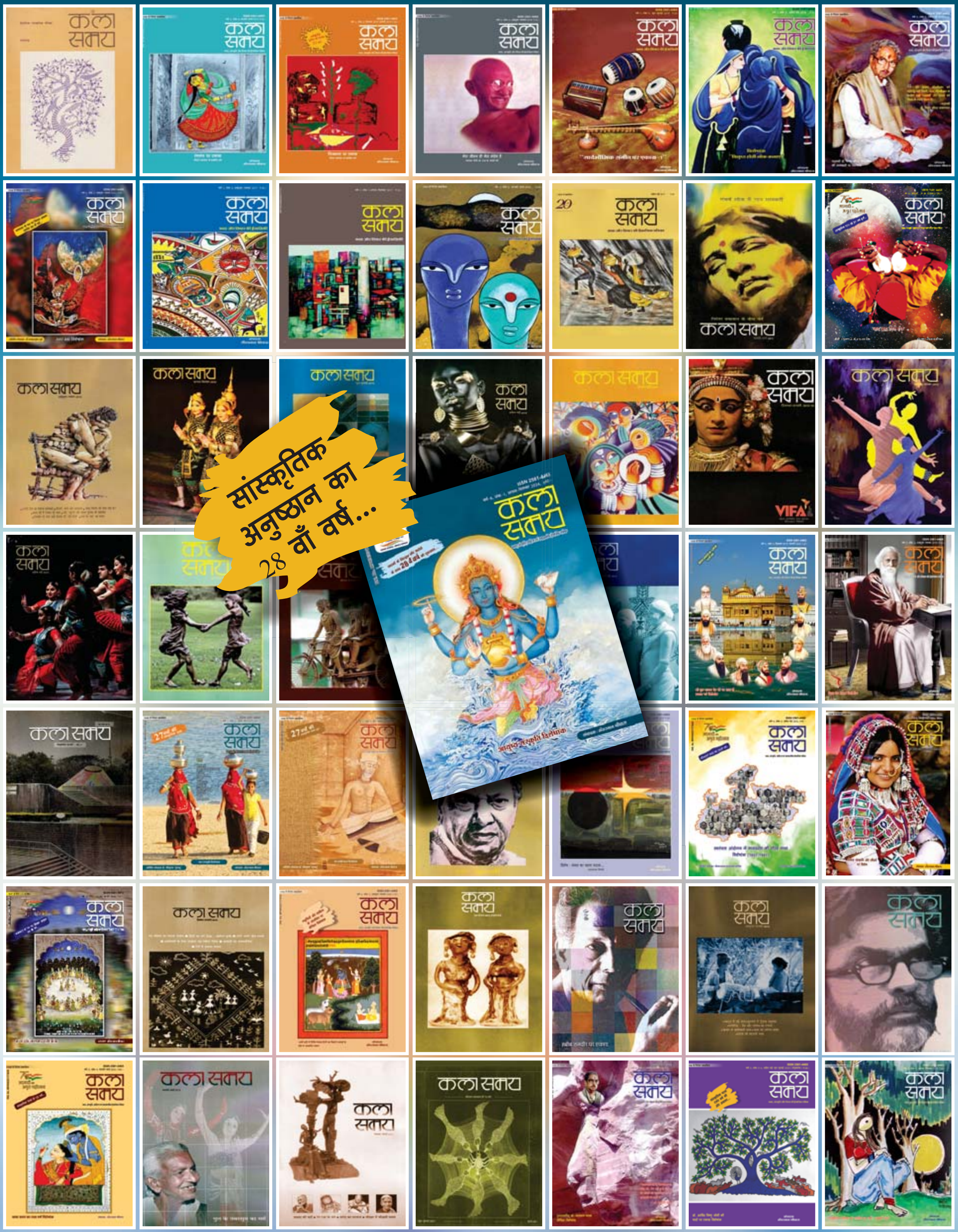

सभी विशेषांक कला समय की वेबसाइट www.kalasamaymagazine.com पर देखे व पढ़े जा सकते है।

सांस्कृतिक यात्रा का 28वाँ वर्ष...

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वत्वाधिकारी भँवरलाल श्रीवास द्वारा गणेश ग्राफिक्स, 26 बी, देशबन्धु भवन, प्रेस कॉम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल, म.प्र. से मुद्रित एवं जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कालोनी, भोपाल (म.प्र.)- 462016 से प्रकाशित। संपादक - भँवरलाल श्रीवास